प्रकाशक
श्री रामचन्द्र गुप्त
हिन्दी साहित्य-मन्दिर
नई सड़क, दिल्ली।

प्रथम संस्करण
जनवरी १९३९
पुनर्मुद्रण, परिष्कृत एवं परिवर्द्धित
जून १९४९

मुद्रक
ईश्वर चन्द, बी० ए०
स्वतन्त्र भारत प्रेस,
४२३, कूंचा बुलाकी बेगम,
एस्प्लेनेड रोड, दिल्ली।

दो शब्द

मानव-जीवन में भाषण के बाद लेखन का ही स्थान है और यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इसका स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। लेखन कला या निबंध-ज्ञान का अभिप्राय मिलता जुलता है, निबंध शब्द का सीधा-सादा अर्थ ही इस वस्तु को प्रकट कर देता है।

प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में विद्यार्थियों को समुचित सहायता देने के उद्देश्य को सामने रखकर लिखी गई है। ऐसा कोई भी विषय नहीं छोड़ा गया है, जिसका सम्बन्ध निबंध लेखन से हो। सुबोध शैली में, पुस्तक को पांच खण्डों में विभक्त कर दिया गया है वर्णनात्मक निबन्ध, विवरणात्मक निबन्ध, विवेचनात्मक निबन्ध, निबन्धों की रूप रेखायें फिर अन्त में पत्र लेखन परिचय।

स्वाभाविक रूप में वर्णन और विवरण के पश्चात् विवेचन की आवश्यकता पड़ती है। यह स्थिति, किसी विषय पर विद्यार्थियों के लिए स्वीय विचार प्रकट करने की स्थिति है— अपने विचार प्रकट करते हुए कुछ देर के लिए विद्यार्थी संकट पूर्ण स्थिति का अनुभव करने लगते हैं, किसी विषय का वर्णन करना सरल है, विवरण में कुछ अधिक सावधानी की आवश्यकता पड़ती है और विवेचन में अपनी बुद्धि और अपने ज्ञान का उपयोग करना पड़ता है। लेखक द्वय इस ओर अपने प्रयोग में प्रारम्भ से सचेष्ट रहे हैं कि विद्यार्थी की विवेचना शक्ति को सहारा मिले। कहा जा सकता है, यही सोचकर पुस्तक मे विवेचनात्मक निबंध को विशेष स्थान दिया गया है।

निबंधों की रूप रेखायें विद्यार्थी के लिए नवीन निबंध की प्रेरणा और शक्ति देने वाली हैं। इन रूप रेखाओं से विद्यार्थी सरलता पूर्वक नवीन निबंध लिख लेने में समर्थ होंगे।

रही पत्र-लेखन की बात। पत्र का निबंध के साथ वैसे कोई खास सम्बन्ध नहीं दिखाई पड़ता मगर तनिक ध्यान पूर्वक देखने से पता चल जाता है कि पत्र ही निबंधों का मूल स्त्रोत है। पत्र में स्वाभाविक रूप से वर्णन, विवरण और विवेचन की भावना निहित होती है। आज तो पत्रों का माध्यम अपनाकर निबंधों की क्या बात, बड़े-बड़े उपन्यास, समाज-शास्त्र और दर्शन के ग्रंथ लिखे जा रहे हैं। पत्र लेखन कला का भविष्य उज्ज्वल है।

प्रस्तुत पुस्तक रत्न भूषण और मैट्रिक के विद्यार्थियों के लिए तो महान् उपयोगी है ही, इससे इन वर्गों के अतिरिक्त उच्च वर्गीय विद्यार्थी भी पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं। पुस्तक समान रूप से प्रभाकर और अ.इ.ए. के विद्यार्थियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

पुस्तक को आधुनिकतम और उपयोगी बनाने के लिए लेखक-द्वय का श्रम सराहनीय है। अधिकतर निबंध की पुस्तकों में देखा जाता है कि लेखक भावना-प्रवाह में बह कर बहुत से ज्ञातव्य विषयों को तो अछूता छोड़ जाते हैं और कितनी ही ऐसी चीजों को सामने ला देते हैं जो विद्यार्थी के लिए वैसी उपयोगिनी नहीं होती। कोई भी विचारक-हृदय ध्यान पूर्वक इस पुस्तक देखकर, इसकी सार्थकता को अस्वीकार नहीं कर सकता ऐसा मेरा विश्वास है।

यह पुस्तक विद्यार्थियों के लिए नवीन पुस्तक नहीं है, इससे वह प्रथम भी लाभ उठा चुके हैं। वर्तमान परिवर्द्धित और परिष्कृत संस्करण उन्हें और भी अधिक संतोष देने वाला सिद्ध होगा।

हिन्दी साहित्य मन्दिर
महा विद्यालय,
नई सड़क, दिल्ली।

कुमुद विद्यालंकार

विषय-सूची



निबन्ध परिचय

१ लिखने का आशय

हम लिखते क्यों है। हमारे लिखने का मुख्य ध्येय होता है कि हम अपने विचारों को दूसरे पर व्यक्त कर सके। अपने विचारों को दूसरे पर व्यक्त करने के कई ढंग होते हैं। प्रथम तो हम जिस विषय पर अपने विचार प्रकट करने जा रहे है वह विषय हमारे स्वयं के मस्तिष्क में पूर्ण रूपेण स्पष्ट हो। अगर हम स्वयं ही विषय को ठीक तरह से नहीं समझते हैं या हमारी बुद्धि में विषय स्पष्ट नहीं है तो हम दूसरों को क्या समझा सकते हैं। इसलिये यह सोचना बिलकुल अनुचित है कि हम अपने धुंधले विचारों को चतुरता पूर्ण वाक्यों द्वारा दूसरों पर सुन्दरता से प्रकट कर सकेंगे। हमको कागज पर अपने विचारों को पूर्णतया स्पष्ट, साधारण एवम् तर्क पूर्ण तरीके से प्रकट करना चाहिये। लिखने से पहले यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम अच्छी तरह से विषय को स्वयं सोच ले, समझ लें, एवम् मनन करले फिर यह सोचे कि हमको विषय पर किस प्रकार लिखना चाहिये जिससे दूसरो की बुद्धि मे वह इसी प्रकार आ जाये जिस प्रकार कि हमारी मे। और यही लिखने का आशय होता है।

अब प्रश्न उठता है कि निबन्ध की क्या परिभाषा है। अपने विचारों को किसी एक विषय के ऊपर क्रम पूर्वक सुन्दर सहल भाषा मे लिखने को ही निबन्ध, प्रस्ताव एवम् प्रबन्ध कहते है। किसी भी निबन्ध को लिखने के लिये दो बातें मुख्य होती हैं। (१) क्रमबद्ध विचार (२) शैली। यदि आप इन दोनों बातों को ध्यान मे रख कर निबन्ध लिखते है तो निसन्देह आपका निबन्ध उत्तम होगा। क्रमबद्ध विचारों के लिये आवश्यक है, हम जिस विषय पर लिखने जा रहे हैं उस विषय की उचित सामग्री हमारे मस्तिष्क मे हो और शैली के लिये आवश्यक है

निबन्ध

कि हम कम-से-कम शब्दों से सरलता पूर्वक अधिक से अधिक भाव लिख सकें। अब हम इन दोनों को अलग २ विचारेंगे।

क्रमबद्ध विचार

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि क्रमबद्ध विचार उपस्थित करने के लिये आवश्यक है कि हमारे पास उचित सामग्री, विषय को समझाने के लिये हो। सामग्री कैसे एकत्रित की जाय? सामग्री एकत्रित करने के कई ढंग है (१)हम उस विषय के ऊपर जितना भी पढ़ सकें, चाहे पुस्तकों से चाहे समाचार पत्रों से, पढ़ लें (२) उस विषयके ऊपर जितने भी प्रश्न हम उपस्थित कर सकें करें और उन प्रश्नों का उत्तर जितना भी अपनी स्मृति एवम् कल्पना द्वारा दे सकते है, दे। (३) जो कुछ भी उस विषय के बारे में देखकर या सुनकर मालूम कर सकते हैं, करे। (४) फिर जो कुछ भी हमने देखकर, सुनकर, पढ़कर या कल्पना द्वारा एकत्रित किया है, उसे हम अपने सम्मुख रखे। अब हमने उचित सामग्री एकत्रित करली। अब आवश्यक है कि उसे संशोधन करके क्रमबद्ध करलें।

अपने विषय के लिये एकत्रित पूर्ण सामग्री पर हम सिंहावलोकन करेंगे तो हमे प्रतीत होगा हमारे बहुत से विचार अनावश्यक और बहुत से केवल पुनरुक्ति मात्र हैं, ऐसे विचारोंको निकाल देना वाञ्छ-नीय है। इनके अतिरिक्त हमें यह भी देख लेना चाहिये कि हमारे विचार बाह्य स्थिति और घटना क्रम के विरुद्ध तो नहीं है। हमे देश और काल के विरुद्ध नहीं लिखना चाहिये। बहुत सी छोटी-छोटी बातें एक व्यापक बात के लिखने के अन्तर्गत आ जाती है। यदि हमने व्यापक बात को कहने के उपरांत भी छोटी-छोटी बातों को लिखा तो वह पुनरुक्ति मात्र होगी। इसलिए हमें खूब सोच-समझ कर अपनी सामग्री का संशोधन कर लेना चाहिये।

सामग्री का संशोधन कर लेने के उपरांत हमें विषय को इस क्रम से लिखना चाहिये कि पाठक को यह प्रतीत न हो कि पहले चोटी का वर्णन हुआ, उसके बाद पैर के अंगूठे का, तदुपरान्त पेट का।

ती असम्बद्ध सामग्री निबन्ध न होकर पाठकों के सामने एक
स्यास्पद वस्तु होगी। अगर हमें किसी महापुरुष की जीवनी लिखनी
तो हमें पहले उसके परिवार का परिचय देकर जन्म-स्थान और
न्म-संवत् लिखना चाहिये। फिर क्रम २ से उसकी शिक्षा, प्राथमिक
ार्य आदि देकर फिर उसके मरण के विषय में लिखना चाहिये।
गर हम प्रथम ही उसके मरण के विषय में लिख दें, फिर शिक्षा
े विषय में तदुपरांत जन्म के विषय में तो यह निबन्ध न होगा।
मको चाहिये कि अपनी सामग्री को संशोधन करने के उपरांत
वाभाविक क्रम बद्ध कर लेना चाहिये फिर उसे उचित परिच्छेदों में
ाँट देना चाहिये। ध्यान रहे कि प्रत्येक परिच्छेद में केवल एक
ी मुख्य विचार हो। इस तरह से आपके लेख के क्रम बद्ध विचार
न जायेंगे। अब हम शैली को विचारेंगे।

२ शैली

सुन्दर, सुगठित, सरस एवम् सुबोध भाषा में क्रमबद्ध विचारों को प्रकट करने को शैली कहते हैं। यह परिभाषा एक अच्छी शैली की है। सामग्री व शैली को पृथक २ नहीं किया जा सकता। यदि आपकी भाषा स्पष्ट है तो विचार भी स्पष्ट होंगे और यदि विचार स्पष्ट हैं तो भाषा में स्पष्टता आवेगी। किसी २ लेखक की शैली शब्दाडम्बर, वाक्याडम्बर एवम् अलंकारों से ढकी रहती है। ऐसी शैली आदर की दृष्टि से नहीं देखी जाती, यदि अलंकार, क्लिष्ट शब्द एवं वाक्य अपने स्थान पर स्वाभाविकता से आ जाते हैं तो शैली में सरसता आ जाती है। यदि उन्हें जबरदस्ती प्रयोग में लाने की चेष्टा की जाती है तो निसन्देह शैली की सरसता समाप्त हो जाती है और शैली में क्लिष्टता, एक भद्दापन आ जाता है जो कि पाठक को रुचिकर प्रतीत नहीं होता। अच्छी शैली के लिये यह आवश्यक हैं (१) अपने विचारों को साधारण एवम् स्पष्टता से प्रकट करना (२) उपयुक्त शब्दों को यथा स्थान लगाना (३) वाक्य का शुद्ध संगठन करना (४) परिच्छेदों में विचारों का विभाजन करना (५) अलंकार, मुहावरे

एवम् लोकोक्तियों का यथा स्थान प्रयोग करना। अब हम इन पर अलग २ विचार करेंगे।

विचारों को स्पष्टता एवम् सरलता से व्यक्त करना

उत्तम शैली के लिये ये अत्यन्त आवश्यक है। हम जो विचार उस विषय के सम्बन्ध में अपने मस्तिष्क में रखते हैं सीधे एवम् स्वाभाविक तौर से अपनी लेखनी द्वारा कागज पर व्यक्त कर दें और क्लिष्ट शब्द, लम्बे एवम् दुरूह वाक्य, और हेर-फेर से अपने विचारों को व्यक्त करने के ढंग को छोड़ दे तो निसन्देह हमारे विचार दूसरो की बुद्धि में ठीक तरह से आ सकते हैं। विचारों को क्रमवद्ध व्यक्त करने के विषय मे हम पहले ही लिख चुके है।

उपयुक्त शब्दों का प्रयोग

बहुधा देखा गया है, लेखक क्लिष्ट-से-क्लिष्ट शब्द रखने की चेष्टा करते है इससे भावो की स्पष्टता दब जाती है। इसलिये जहां तक हो हमे साधारण शुद्ध शब्दों का प्रयो । करना चाहिये। बहुधा हिन्दी मे एक अर्थ क बोधक बहुत से शब्द होते है फिर भी उन शब्दों में थोड़ा-बहुत अंतर अवश्य होता है, अन्यथा अन्य शब्दों को बनाने की आवश्यकता ही क्या थी। इसलिये हमे अपने भावों के अनुकूल ही शब्दों का चुनाव करना चाहये। स्त्री के लिये अनेक शब्दों का प्रयोग होता है जैसे 'कामिनी', 'भामिनी', 'रमणी', 'ललना', 'गृहणी' आदि परन्तु प्रत्येक शब्द अपना अलग महत्व रखता है। अगर आप स्त्री की सुन्दरता के विषय मे वर्णन कर रहे हैं तो 'कामिनी' शब्द उपयुक्त होगा अगर 'गृहिणी' शब्द का प्रयोग कर रहे है तो उससे गृह प्रवन्ध और बच्चों के पालन-पोपण के विषय मे ही कर सकते है। इस तरह शब्दों का उपयुक्त चुनाव आवश्यक है। जहां तक सम्भव हो हमें दो अर्थों वाले शब्दों से भी बचना चाहिये। जहां हमें 'पक्षी' शब्द का प्रयोग करना हो वहां 'द्विज' शब्द का प्रयोग हिन्दी गद्य में उपयुक्त नहीं। जिन शब्दों के अर्थ लेखक को स्वयं नहीं मालूम उन

शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये अन्यथा भारी भूल हो जाने का डर रहता है। साधारण बोल-चाल के शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। जहां तक सम्भव हो हमें अशुद्ध शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये। यद्यपि यह ठीक है कि अभी तक हिन्दी में बहुत से शब्दों का रूप स्थिर नहीं हो सकता है फिर भी हमें इन अस्थिर रूपवाले शब्दों के लिये हिन्दी के महारथियों के बहुमत का अनुकरण करना चाहिये। हिन्दी के शुद्ध शब्दों के रचना के लिये व्याकरण का सहारा भी ले सकते हैं। जैसा बहुत से लेखक 'आवश्यक्ता' लिखते हैं और बहुत से लेखक 'आवश्यकता' लिखते हैं। बहुमत और व्याकरण दोनों ही 'आवश्यकता शब्द को शुद्ध रूप में बतलाती हैं। इस कारण इस शब्द को आवश्यकता के रूप में लिखना चाहिये। फ़ारसी शब्दों के प्रयोग से जहां तक सम्भव हो बचना चाहिये। यदि प्रयोग ही करना हो तो शुद्ध रूप में। जैसे 'फ़ारसी' शब्द शुद्ध है और 'फारसी' अशुद्ध है। फ़ारसी शब्दों के लिखने मे जिस स्थान पर बिन्दी लगाने की आवश्यकना है अवश्य लगाना चाहिये। जहां तक सम्भव हो हमें विदेशी शब्दों को व्याकरण द्वारा अपने शब्द बना लेने चाहियें। इस विषय में हिन्दी के महान लेखकों की चेष्टायें हो रही हैं। विदेशी शब्दों को प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि हम उन्हें हिन्दी की व्याकरण के नियम के अनुसार ही बहुवचन बनावें। जैसे 'स्कूल' शब्द का बहुवचन अंग्रेजी में 'स्कूल्स' बनता है परन्तु हिन्दी व्याकरण के नियमों के अनुसार स्कूलों बन सकता है। हमको यही चेष्टा करनी चाहिये कि जहां तक सम्भव हो हम कोमल एवम् ऐसे शब्दों का प्रयोग करें जो कि कर्ण कटु न हों। यदि हमें कहीं के युद्ध आदि का वर्णन करना है अथवा भयङ्करता का वर्णन करना है तो दूसरी बात है अन्यथा कठोर एवम् क्लिष्ट शब्दों से बचना चाहिये। उदाहरणार्थ कुछ शब्दों के शुद्ध व अशुद्ध रूप नीचे दिये जाते हैं।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
पूज्यनीय	पूज्य	दुरवास्था	दुरवस्था

आलस्यता	आलस्य	गृहण	ग्रहण
शुद्धताई	शुद्धता	कृतघ्नी	कृतघ्न
निर्दयी	निर्दय	राजनैतिक	राजनीतिक
सन्मुख	सम्मुख	महत्व	महत्व
निर्धनी	निर्धन	ग्रहस्थ	गृहस्थ

३—वाक्यों का शुद्ध-संगठन करना

सुन्दर शैली के लिये वाक्यों का सुन्दर एवम् शुद्ध-संगठन भी अत्यन्त आवश्यक है। जहां तक सम्भव हो हमारे वाक्य छोटे हों। प्रत्येक वाक्य में केवल एक ही बात कही गई हो। ये विचार कि हम लम्बे-से लम्बे वाक्य की रचना करें और उसमे दो बाते आजायें गलत है। वाक्य व्याकरण के नियमों के अनुकूल होने चाहियें। विशेषकर वाक्यों में कारकोंका ध्यान रखना चाहिये। जैसे यह कहना कि "बालक समय के पहले आया" अशुद्ध है और यह कहना कि "बालक समय से पहले आया" शुद्ध है। इस वाक्य मे केवल कारक के कारण ही वाक्य अशुद्ध हो गया है। कारकों का व्याकरण से खूब मनन कर लेना चाहिये।

४—परिच्छेदों में विचारों का विभाजन करना

हम जिस विषय पर लिखने जा रहे हैं, उस विषय की रूपरेखायें बना लेनी चाहिये। रूपरेखायें बनाने के उपरांत हमे मालूम होगा कि हमारे लेख के ही विषय मे बहुत-सी बातें है जो कि अलग-अलग लिखनी हैं। प्रत्येक एक बात के लिये एक परिच्छेद होना चाहिये। परिच्छेद सभी एक-दूसरे से पृथक बात रखते हैं फिर भी उनमें विषय की एकता होती है। अगर हम लेख को परिच्छेदों मे विभाजित नहीं करेंगे तो लेख दूसरे की समझ में ठीक नहीं आयेगा। परिच्छेद कितना लम्बा हो, इसके लिये कोई भी नियम नहीं है। परिच्छेद बनाते समय केवल इतना ध्यान रहे कि एक परिच्छेद में केवल एक ही बात हो और परिच्छेद एक दूसरे से सम्बन्धित भी रहें।

५ अलंकार, मुहावरे एवम् लोकोक्तियों का प्रयोग करना

उत्तम शैली के लिये अलंकार, मुहावरे एवम् लोकोक्तियों को यथा स्थान प्रयोग करना आवश्यक है। इन तीनों को अलग २ विचार करेंगे।

(अ) अलंकार

अधिक अलंकारों का प्रयोग करना अच्छा नहीं। इससे भाषा की स्पष्टता जाती रहती है और विषय भी क्लिष्ट हो जाता है। हां जहां अलंकार स्वाभाविक तौर से आ जाय तो अति उत्तम है। जैसे एक सुन्दर रमणी अपनी स्वाभाविक सुन्दरता में ही सुन्दर लगती है अगर उसे यथा स्थान थोड़े से भूषण भी पहना दिये जायं तो उसकी सुन्दरता में चार चांद लग जावेंगे। यदि उसे भूषणों की भरमार करके सिर से पैर तक ढक दिया जाय तो निसंदेह उसकी सुन्दरता भी चौपट हो जायेगी और वह एक हास्य की विषय बन जायेगी। बिलकुल इसी तरह से भाषा में अलंकार होने चाहिये। यथा स्थान स्वाभाविक तौर से अगर कुछ अलंकार प्रयोग में लाये जाते है तो भाषा अति सुन्दर बन जाती है।

(ब) मुहावरे

जहां तक सम्भव हो भाषा मुहावरेदार हो। भाषा के प्रचलित मुहावरों का प्रयोग करना चाहिये। भाषा का सौंदर्य मुहावरेदार होने से बढ़ जाता है और विचार में स्पष्टता भी आ जाती है। विदेशी भाषा के मुहावरे का अक्षरशः अनुवाद करके प्रयोग करना उचित नहीं। उनका भावार्थ लेकर प्रयोग करना उचित रहेगा।

(ज) लोकोक्तियां

लोकोक्तियों का प्रयोग भी भाषा में जान डाल देता है। जो विचार एक परिच्छेद लिखने के उपरांत भी उतनी समझ में नहीं आवेगा जितना कि केवल उस विषय पर प्रचलित लोकोक्ति प्रयोग करने से समझ में आ सकता है। यदि सम्भव हो सके तो प्रसिद्ध कवियों द्वारा कही हुई प्रसिद्ध सूक्तियां प्रयोग में लानी चाहिये।

यदि भाषा में व्यंग्य या हास्य का थोड़ा-सा पुट दे दिया जाय तो पढ़ने वाले का जी नहीं ऊबता। परन्तु यह ध्यान अवश्य रखना चाहिये कि हास्य या व्यंग्य ऐसा न हो जिससे किसी को दुःख पहुँचे अथवा मर्यादा का उल्लंघन हो। हास्य या व्यंग्य का प्रयोग तो केवल भाषा को भारहीन होने से बचाता है और पाठक का थोड़ा सा मनोविनोद हो जाता है।

(द) व्यंग्य या हास्य

निबंधों के प्रकार

ऊपर लिखी हुई बातें केवल निबंध लिखने के विषय में लिखी गई। अब लेख कितने प्रकार के होते है इस पर लिखेंगे। यद्यपि विषय अनेक प्रकार के होते है और इसलिये लेख भी अनेक प्रकार के होते हैं। फिर भी उनमें मुख्य हैं (१) वर्णनात्मक (२) विवरणात्मक या आख्यानात्मक (३) विवेचनात्मक। यह सत्य है कि हम इन तीनों प्रकारों को एक दूसरे से भिन्न नहीं कर सकते क्योंकि अगर हम विवेचनात्मक लेख लिखेंगे तो उसमे थोड़ा या अधिक विवरण अवश्य आ जायगा या हम विवरणात्मक लेख लिखें तो उसमें थोड़ा-बहुत वर्णन अवश्य होता है। कहीं-कहीं लेखक एक और प्रकार का लेख बतलाते हैं और वह है भावात्मक। वास्तव में यह कोई अलग प्रकार नहीं है। यह विवेचनात्मक ही है परंतु इनमें भाव प्रधान होता है और विवेचनात्मक मे बुद्धि या तर्क प्रधान। अब तीनों को अलग २ वर्णन करेंगे।

वर्णनात्मक निबंध

जिस लेख मे मनुष्य, देश, नगर, पशु-पक्षी, नदियों, पर्वतों कारखानों आदि का वर्णन किया गया हो उसे वर्णनात्मक लेख कहते हैं। इन लेखों में हमें तर्क द्वारा किसी वस्तु की विवेचना नहीं करनी होती परंतु जैसी वह वस्तु है उसका उसी प्रकार वर्णन करना होता है। वास्तव मे यह एक शब्दों का चित्र मात्र है। ये लेख वर्तमान

काल से सम्बंध रखते हैं और एक देशीय होते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के वर्णनात्मक लेखों में निम्न लिखित प्रकार से बातें आनी चाहियें।

मनुष्य, पशु-पक्षी आदि प्राणियों के विषयों में

भूमिका, जाति, जन्म, कहां रहता है, शरीर रचना, खान-पान, अवस्था, हानि-लाभ, उपसंहार (मनुष्य के विषय में उसने कितनी शिक्षा पाई है, वह किस धर्म का है और उसके जीवन की मुख्य बातें क्या हैं)।

यात्रा या सैर

भूमिका, यात्रा का कारण, तैयारी कैसे की, कब तैयारी की, मार्ग की घटनाओं का वर्णन, ठहरने का स्थान और उसका वर्णन, लौटने का वर्णन, मार्ग की घटनायें, यात्रा या सैर से शिक्षायें, उपसंहार।

वृक्ष एवं पौधे आदि

भूमिका, कहां पाया जाता है, जाति, किस तरह की जलवायु चाहिये? कैसी भूमि चाहिये? किस ऋतु में पैदा होता है? हानि या लाभ, उपसंहार।

पर्वत आदि

भूमिका, स्थिति, प्रसिद्धता का कारण, विस्तार, जङ्गल, नदियां, खनिज पदार्थ, नगर-गांव, यहां के निवासी, पर्वत के लाभ एवं हानि, उपसंहार।

नगर गांव आदि

भूमिका, स्थिति, नामकरण कब और कैसे हुआ? क्यों प्रसिद्ध है? जनसंख्या, मुख्य उद्योग, निवासी, शासन, उपसंहार।

विवरणात्मक लेख

इन लेखों को आख्यानात्मक निबन्ध भी कहते हैं। ये वास्तव में भूतकालीन घटनाओं के विषय में विवरण मात्र होता है। सभी

ऐतिहासिक घटनायें, महापुरुषों की जीवनियां आदि इन्हीं लेखों के अन्तर्गत मानी जाती हैं।

इन लेखों में निम्नलिखित बातें बतलानी चाहियें

भूमिका, कुल परिचय, जन्म-तिथि और जन्म-स्थान, बचपन की घटनायें, शिक्षा, विवाह, सन्तान, स्वभाव और गुण, जीविका, मुख्य काम, उनसे जाति या देश को लाभ, मृत्यु-काल, जीवन से शिक्षा, उपसंहार।

विवेचनात्मक लेख

संतोष, दया, मान, वीरता, धर्म आदि अमूर्त्त विषयों पर जब कोई लेख लिखा जाता है तो उसे विवेचनात्मक लेख कहते हैं क्योंकि ऐसे लेख विचार प्रधान होते हैं अर्थात् उनसे इन अमूर्त्त विषयों का कारण, हानि, लाभ आदि की विवेचना की जाती है। विवेचनात्मक लेखों में निम्नलिखित बातों पर प्रकाश डालना आवश्य है।

सन्तोष, दया, आदि

भूमिका, परिभाषा, लाभ, हानि, मनुष्य पर प्रभाव, किसी प्रकार का दृष्टांत, कैसे अभ्यास किया जाय, उपसंहार।

दिल्ली

विषय-प्रवेश — देहली भारतवर्ष की राजधानी है। ये उत्तरी भारत में यमुना के किनारे बसी हुई है। दिल्ली भारतवर्ष के प्राचीनतम नगरों में से एक है।

इतिहास — यह माना जाता है कि दिल्ली पांडवों के समयमें बसी। यहां पर पहले खाण्डवन था। उस वन को कटवाकर एक नगर बसाया, जिसको मय नाम के वास्तुकला इंजीनियर ने बनाया था। इस नगर का नाम इन्द्रप्रस्थ रक्खा गया, महाराजा युधिष्ठर उस नगर के राजा बने। इसके उपरांत हमारे भारतवर्ष का इतिहास ही अन्धकार में पड़ जाता है।

परन्तु पृथ्वीराज के समय में फिर देहली का अभ्युदय होता है। पृथ्वीराज के समय मे ही इसका नाम देहली या दिल्ली पड़ा। इसके बारे मे एक किंवदन्ती भी प्रसिद्ध है कि किसी साधु ने पृथ्वीराज से एक लोहे की कील पृथ्वी मे गाड़ने को कहा और बतलाया कि इस कीली के शेषनाग के फन मे गड़ जाने से राज्य अचल हो जायगा। परन्तु राजा ने विश्वास न करके कीली को ढिली कर दिया। ढिली का अपभ्रंश होकर दिल्ली हो गया। कुछ भी हो दिल्ली पृथ्वीराज के समय से नाम पड़ा। पृथ्वीराज दिल्ली का अन्तिम हिन्दू राजा था। उसके उपरांत मुहम्मद गोरी ने भारतवर्ष में मुस्लिम राज्य की नींव डाली। दिल्ली अनेक अफगान, पठान, मुग़ल, तुर्क आदि मुस्लिम बादशाहों की राजधानी रही। अंग्रेजों ने भी दिल्ली को ही राजधानी बनाया और नई दिल्ली की नींव रक्खी। इस प्रकार जब से दिल्ली बसी है तभी से देहली का महत्व रहा है।

जन-संख्या

दिल्ली की जन-संख्या इस समय लगभग १५ लाख है। पंजाब के दंगों के उपरांत यहां पर पंजाब से आये हुये बहुत से शरणार्थी बस गये हैं। इस कारण इसकी जन संख्या बढ़ गई है।

केन्द्र

दिल्ली व्यापार एवं विद्या का केन्द्र है। यहां पर कपड़े आदि के मिल व कारखाने है। अनाज की मडी है। सब्जी व फलों की बड़ी मण्डी है। यहां पर दिल्ली विश्वविद्यालय भी है जहां पर विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं। व्यापार तो भारतवर्ष के सभी मुख्य २ नगरों से होता है और विदेशों से भी व्यापार किया जाता है।

राजधानी

भारतवर्ष की राजधानी होने के कारण लगभग सम्पूर्ण नई दिल्ली में सरकारी कर्मचारी रहते हैं। नई दिल्ली में ही वायसरायजिसको कि अब स्वराज्य मिल जाने से गवर्नर जनरल कहते है उसके रहने का स्थान है। नई दिल्ली में ऐसेम्बली भवन है और सरकारी कार्य करने वाले

मुख्य कार्यालय है। नई दिल्ली में ही माननीय मंत्रियों के निवास स्थान हैं और उनके कार्यालय भी हैं। ये मंत्री ही प्रधान मंत्री सहित राज्य का कार्य संचालन करते हैं। नई दिल्ली मे लगभग सम्पूर्ण आबादी उन राज्य कर्मचारियों की है, जिनके सुदृढ़ हाथों में भारत का भाग्य खेला करता है।

बाज़ार

दिल्ली का मुख्य बाजार चांदनी चौक है। यह बाजार बहुत चौड़ा है, पहले इसके बीच में होकर नहर बहती थी परन्तु अब बड़ी चौड़ी सड़क बन गई है। सड़क की दोनो ओर होकर ट्राम चलती है। बिल्कुल बीच में एक घंटाघर है जो कि बहुत सुन्दर बना हुआ है। घंटाघर में चारों तरफ चार घड़ियां लगी हुई है। घंटाघर के सामने ही दिल्ली म्यूनिसिपल कमेटी का कार्यालय है, जिसको टाउन हाल भी कहते हैं। बाजारों में सर्वदा अतिशय भीड़ रहती है। चांदनी चौक की सजावट उत्तम है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहां पर जैसे सदा प्रदर्शिनी लगी हुई हो। दिल्ली के प्रत्येक बाजार की सड़कें चौड़ी है और बाजार उत्तम सजे हुए हैं।

रेलवे जंक्शन

दिल्ली ई० पी० आर०, जी. आई. पी, ई. आई. आर. और बी. बी. एन्ड सी. आई. आर. का जंकशन भी है, यहां लगभग आठ स्टेशन हैं जहां से भारतवर्ष के प्रत्येक स्थान को रेल जाती है। जंकशन बहुत बड़ी जगह मे बसा हुआ है। यहां प्रत्येक घंटे में कोई न-कोई रेल आती-जाती ही रहती हैं। स्टेशन पर बहुत भीड़ रहती है। यहीं से व्यापारिक माल, मालगाड़ियों द्वारा बाहर भेजा जाता है और यहीं पर उतारा भी जाता है।

दिल्ली में दो हवाई अड्डे भी हैं, जहां से संसार के प्रत्येक मुख्य नगरों को वायुयान द्वारा यात्रा होती है।

देखने-योग्य बहुत-सी इमारतें हैं। लाल किला,

दर्शनीय ऐतिहासिक इमारतें

कुतबमीनार, पाण्डवों का किला आदि। यहां पर पुराने बादशाहों के मक़बरे भी बने हुए हैं, जैसे, हुमायूं का मक़बरा, लोदी वंश के बादशाहों के मक़बरे। लाल किले को देखने को दो आने का टिकट लेना पड़ता है। इसके अन्दर मुगलकालीन वास्तु-कला की सुन्दर कारीगरी देखने को मिलती है। नई दिल्ली में ऐसेम्बली हाउस देखने योग्य है। इन्डियागेट व उसके चारों तरफ हरियाली, फव्वारे व नहरे भी देखने योग्य है। और भी ऐतिहासिक वस्तुएं हैं, जो अधिकतर मुगलकालीन बादशाहों से संबंध रखती है। हां कुतुबमीनार के पास पृथ्वीराज का विजय स्तम्भ भी देखने योग्य है। आधुनिक बिड़ला मन्दिर भी एक देखने योग्य सुन्दर मन्दिर है।

उपसंहार

दिल्ली ने अनेकों युद्ध, भीषण मार-काट, खूब लूट देखी है। दिल्ली अनेकों बार उजड़ी है और अनेक बार बसी भी है। तैमूर और नादिरशाह ने दिल्ली को नष्ट प्राय कर दिया था परन्तु अपनी स्थिति के कारण यह सर्वदा गौरवान्वित रही है। नई दिल्ली संसार के आधुनिक नगरों के समान उत्तमता से बसी हुई है। प्रायः सभी एक-से मकान आदि बने हुए हैं। नई दिल्ली का कैनोट प्लेस के बाजार की गणना संसार के सुन्दर बाजारों मे की जा सकती है। पंजाब के आए हुए शरणार्थियों के कारण यहां की कुछ हालत गिर गई है परन्तु आशा है कि अधिकारी निकट भविष्य में स्थिति का सुधार कर देंगे।

बसन्त वर्णन

विषय प्रवेश

भारतवर्ष, मे वर्ष-भर मे छः ऋतुये होती है। इन ऋतुओं के नाम इस प्रकार हैं (१) ग्रीष्म (२) वर्षा (३) शरद (४) हेमन्त (५) शिशिर (६) बसन्त। प्रत्येक ऋतु दो माह के लिये आती है। इन ऋतुओं में बसन्त को ऋतुराज कहते हैं।

वसन्त आने के पहले

वसन्त ऋतु, शिशिर ऋतु के उपरांत आती है। शिशिर ऋतु में अत्यधिक सर्दी पड़ती है। इस ऋतु मे पतझड़ हो जाता है, फसल कच्ची होती है, बढ़ती रहती है। हर तरफ प्रकृति मे रूखापन होता है। अत्यधिक सर्दी के कारण मनुष्य किसी कार्य मे आनन्द का अनुभव नहीं करता। पतझड़ होने से प्रकृति मे कोई आकर्षण नहीं रहता।

बसंत में प्रकृति वर्णन

वसन्त ऋतु आने पर वृक्षों मे नवीन पत्ते आने के लिये नई कोंपले निकलनी प्रारम्भ हो जाती हैं। वसन्त ऋतु मे हम प्रकृति का पुनर्जन्म भी कह सकते हैं। शिशिर ऋतु से पदाक्रान्त प्रकृति अपनी तमाम शोभा, सुषमा को गंवा बैठती है। वसन्त ऋतु आने पर उसी शोभा और सुषमा को प्राप्त करती है। वृक्षों में नवीन कोंपलें निकलती है। नवीन पुष्प और मंजरियों से प्रकृति सुशोभित होती है। चारों ओर रङ्ग-बिरंगे फूलों पर भौंरे मंडराते हुए सुन्दर मालूम होते हैं. उनका गुञ्जन कानों को प्रिय लगता है। बसन्त ऋतु मे दिशायें साफ होती हैं और आकाश निर्मल। चारो तरफ एक प्रसन्नता का साम्राज्य होता है। प्रकृति में एक नवीन जीवन का संचार दिखाई देता है। फूली हुई सरसों को देखकर तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानों प्रकृति ने पीली साड़ी पहिनी हो। सरसों के फूलों से आच्छादित प्रकृति आंखों को बड़ी भली प्रतीत होती है। रसाल के वृक्षों पर नवीन बौरों से निकले सौरभ का पान कर केवल भौंरे या कोयल ही उल्लासित नहीं होते बल्कि मनुष्य मात्र मदोन्मत्त हो जाता है। कोयल की ध्वनि तो ऐसी प्रतीत होती है मानो संसार ही गा रहा हो। कोयल सर्वदा पंचम स्वर मे "कुहू-कुहू" बोलती है। यह स्वर हृदय से आनन्द का संचार करता है। चारों ओर आनन्द-ही-आनन्द दिखाई पड़ता है। हर-तरफ प्रकृति मे एक अपूर्व शोभा दृष्टिगोचर होती है।

इस ऋतु में सर्दी व गर्मी सम होती है। मनुष्य अपने हृदय में अधिक आनन्द का अनुभव करता है। शरीर में भी स्फूर्ति आ जाती है। जब हृदय में उल्लास हो और शरीर में स्फूर्ति हो तो मनुष्य की बुद्धि भी तेज हो जाती है। इस कारण वसन्त ऋतु के अनुरूप ही मनुष्य अपने को-आनन्दमय कर लेता है। कवि लोग काव्य निर्माण का यही समय उत्तम समझते हैं। मनुष्य अपने हृदय के उल्लास को होली का त्यौहार मना कर प्रदर्शित करते है। प्राचीन समय में वसन्तोत्सव का त्यौहार बड़े त्यौहारों में था। उस समय मनुष्य आपस में खूब नाटक आदि खेलते थे। नाचगाने होते थे। रङ्ग-अबीर उडाया जाता था। सम्भवतः यह होली का त्यौहार ही वसन्तोत्सव का त्यौहार हो। कुछ भी हो, चाहे होली चाहे वसन्तोत्सव परन्तु इसमे संदेह नहीं कि मनुष्य अपने हृदय में उल्लास का अनुभव करता है और उसका प्रदर्शन करता है।

मनुष्य पर वसन्त का प्रभाव और होली

वसन्त ऋतु को कई नामों से पुकारते है ऋतुराज, कुसुमाकर आदि। इस समय प्रकृति की शोभा दिन-दूनी रात-चौगुनी होती है। इस समय मनुष्य को चाहिये कि वह नदी, पर्वत व जङ्गलों की सैर करे। उस आनन्द को, उस प्रसन्नता को जिसे प्रकृति लिये बैठी है अपनावे। यह ऋतु स्वास्थ्यकारी भी होती है। इस समय मनुष्य शरीर को स्वस्थ भी कर सकता है।

उपसंहार

भारतवर्ष

विषय प्रवेश

भारत के भुजबल जग रच्छित
भारत विद्या लहि जग सिच्छित
भारत तेज जगत विस्तारा
भारत भय कम्पित संसारा

जाके तनिकहिं भौंह हिलाये
थर-थर कांपत नृप डरपाये
जाके जय की उज्ज्वल गाथा
गावत सब महि मङ्गल गाथा

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

ऐसा हमारा प्यारा भारतवर्ष एशिया महाद्वीप के दक्षिण मे स्थित है। किसी समय भारतवर्ष संसार का मुकुट मणि था, जैसा कवि ने ऊपर दिखलाया है परन्तु दुर्भाग्य से आपस की फूट और कलह के कारण १००० वर्ष तक विदेशी शासन में रहा और संसार के नीचे गिरे हुए राष्ट्रों से गिना जाने लगा। यह हमारा सौभाग्य है कि १५ अगस्त सन् ४७ को विश्ववंध महात्मा गांधी के अकथनीय प्रयत्नों द्वारा फिर विदेशी शासन से मुक्त हो गया है और अब स्वतन्त्र है।

भारतवर्ष के नाम और उसके कारण

भारतवर्ष के कई नाम है। इसको आर्यावर्त्त, हिन्दुस्तान एवं इण्डिया भी कहते है। भारतवर्ष से एक महान प्रतापी राजा भरत हुए। ये दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र थे। उनका भरत नाम होने के कारण इसका नाम भारतवर्ष पड़ा। यहां के रहने वालों को आर्य कहा जाता है और इस कारण इसको आर्यावर्त्त भी कहते हैं, जब भारत में मुसलमान आये तो वे खैबर आदि के दर्रे से आये और उन्हें सिन्धु नदी पार करनी पड़ी। सिन्धु नदी के कारण उन्होंने इस देश का नाम सिन्धुस्तान रक्खा। परन्तु फारसी में 'स' को 'ह' भी कह सकते है। इस कारण इस देश का नाम हिन्दुस्तान पड़ गया। और यहां के रहने वाले हिन्दू कहलाये। अंग्रेज ने सिन्धु को इण्डस कहा और इस देश का नाम इण्डिया कहा और यहां के रहने वालों को इण्डियन कहा।

भारत की कुल आबादी ४० करोड़ है। इसमे लगभग ३० करोड़ हिन्दू हैं शेष, और जातियां है। मुसलमानों की संख्या अधिक

जन-संख्या एवम् स्थिति

है"। ये उत्तर में हिमालय पर्वत से लेकर दक्षिण में कुमारी अंतरीप तक फैला हुआ है। दक्षिण में बिलोचिस्तान से लेकर ब्रह्मा तक फैला हुआ है। अंग्रेजों ने ब्रह्मा व लंका को भारतवर्ष से अलग कर दिया था और अब मुसलमानों ने अपने लिए अलग राष्ट्र की मांग करके उत्तरी हिन्दुस्तान के कुछ प्रांतों को प्राप्त कर लिया है। उसका नाम पाकिस्तान रक्खा है। यह बटवारा प्राकृतिक नहीं है। प्रकृति ने तो पहले ही से इसको संसार के और सभी देशों से हिमालय और समुद्र द्वारा अलग कर रक्खा था। इसका क्षेत्रफल लगभग २८०००० वर्ग मील है।

जलवायु

भारतवर्ष में अनेक तरह की जलवायु पाई जाती है परन्तु यदि हम सम्पूर्ण भारतवर्ष को ले तो भारतवर्ष की जलवायु को शीतोष्ण कह सकते है।

भारतीय समुद्र के किनारों पर जलवायु सम शीतोष्ण है और दक्षिणी प्रांतों की उष्ण भी। परंतु सम्पूर्ण भारतवर्ष के दृष्टिकोण से यहां पर सर्दियों मे अधिक सर्दी और गर्मियों मे अधिक गर्मी रहती है।

पैदावार व खनिज पदार्थ

भारतवर्ष में प्रत्येक वस्तु पैदा होती है। भारत की अधिकतर जनसंख्या ग्रामों मे रहती है। जिनका कार्य खेती-बाड़ी करना है। उत्तरी प्रांतो की जलवायु में गेहूँ, जौ, चना, मक्का, रुई आदि खूब पैदा होती है। पहाड़ों पर चाय, कहवा, चावल आदि भी अधिक पैदा होते है। दक्षिण मे नील, नारियल अफीम आदि की पैदा अच्छी है। भारत मे खनिज पदार्थ भी निकाले जाते हैं। कोयले के लिये रानीगंज, झरिया, और कोलार की खान प्रसिद्ध हैं। सोना, लोहा, और मिट्टी का तेल भी निकाले जाते हैं।

सब से अधिक

देश भारत

भारतवर्ष में सबसे अधिक वर्षा का भी स्थान चीरापूंजी है। सबसे अधिक गर्मी का स्थान जैकोबाबाद है। सबसे अधिक उच्च स्थान गौरी शंकर की चोटी भी यहीं स्थित है।

अनेक धर्म

भारतवर्ष की जन-संख्या और और राष्ट्रों से अधिक होने के कारण यहां पर अनेक धर्म माने जाते हैं। हिन्दू, ईसाई, मुसलमान, पारसी आदि। हिन्दुओं में भी बौद्ध, जैन, सिख, आदि कई धर्म माने जाते हैं। अनेक धर्म होने के नाते यहा पर सर्वदा ही फूट और कलह का साम्राज्य रहता है। इसी का फल है कि भारत एक राष्ट्र होते हुए दो राष्ट्रों में परिणत हो गया।

प्रांत, नगर

भारतवर्ष १८ प्रांतों मे बटा हुआ है। प्रत्येक प्रान्त का शासन अलग होता है और प्रत्येक प्रान्त मे गवर्नर रहता है। समस्त शासन की बागडोर केन्द्रीय सरकार के हाथ मे होती है। भारतवर्ष की राजधानी देहली है। भारतवर्ष में कलकत्ता, बम्बई आदि अधिक जन-संख्या वाले तथा सुन्दर व प्रसिद्ध बन्दरगाह हैं। इलाहाबाद, बनारस, नागपुर आदि विद्या के केन्द्र भी हैं। यहा नगरो मे व्यापार भी खूब होता है और संसार में अपना स्थान रखते है।

भारत प्राचीन व नवीन

भारत प्राचीन काल मे संसार का सर्वश्रेष्ठ राज्य था। यह संसार के लिये आदर्श रूप था। यहां पर विद्या विज्ञान का केन्द्र था। धन-दौलत की कमी नहीं थी। विदेशी भी इसे सोने की चिड़िया कहकर पुकारा करते थे। और इसी धन दौलत ने विदेशियों को भारत आने के लिये ललचाया। आपस की फूट ने इनको यहां पर स्थान दिया। इसी कारण ५०० साल तक हमें मुसलमानों के शासन के अन्दर पिसना पड़ा। मुसलमानों के हाथ से सत्ता अंग्रेजों के हाथ में चली गई और लगभग १५० वर्ष तक भारत

उन्होंने अच्छी तरह लूटा। अब भारत निर्धन, निरक्षर एवम् एक पतित राष्ट्र हो गया। विदेशियों ने इसे इतना गिराया कि भारतीय अपने को भूल कर उनके ही रङ्ग में रङ्ग गये।

उपसंहार

ईश्वर की महान अनुकम्पा है कि महात्मा गांधी जैसे महापुरुष भारत के गौरव को बढ़ाने के लिये अवतीर्ण हुए। उन्होंने अनेक कष्ट झेल कर भारतवर्ष को विदेशी सत्ता से निकाल कर स्वतन्त्र कर दिया। विदेशी हमें स्वतन्त्रता देते २ हमारे यहां फूट डाल गये। हमें अपने प्रिय भारत के दो टुकड़े कर लेने पड़े, हिन्दुस्तान व पाकिस्तान। ईश्वर से प्रार्थना है कि हमारे इन बिछुड़े हुए पाकिस्तानियों को बुद्धि दे और हमारा भारत फिर एक हो।

०

भूकम्प

विषय प्रवेश

पृथ्वी के हिलने या कांपने को भूकम्प या भूचाल कहते हैं। भूकम्प या भूचाल से बहुत हानि होती है। यह पृथ्वी के लिये एक अभिशाप है।

भूकम्प होने का कारण

भूकम्प होने के कई कारण हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी के अन्दर तरल पदार्थ हैं और जब अन्दर की गर्मी के कारण वे तीव्रता से फैलने लगते हैं तो पृथ्वी हिल जाती है। कभी २ ज्वालामुखी पर्वतों के फटने से पृथ्वी हिल उठती है। भारतवर्ष में प्रत्येक वस्तु को धार्मिक दृष्टिकोण से देखा जाता है। महात्मा व साधुओं का कहना है कि जब पृथ्वी पर पाप अत्यधिक बढ़ जाते हैं तो उनके संहार के हेतु कोई न कोई दैवी घटना अवश्य घटती है और उसमें एक भूकम्प भी है। अर्थशास्त्रियों का कहना है कि जब पृथ्वी पर जन-संख्या अधिक बढ़ जाती है तभी इस जन-संख्या को कम करने के लिये भूकम्प आदि किसी दैवी घटना की आवश्यकता होती

है। कारण कुछ भी हो परन्तु यह अवश्यमेव है कि भूकम्प बहुत ही विनाशकारी है।

बिहार भूकम्प

बिहार में १५ जनवरी सन् १९३४ को एक भयानक भूकम्प आया था। इस भूकम्प के झटके तमाम बिहार, बंगाल, संयुक्त प्रांत आदि में भी आये थे। परन्तु इस का किसी को लेशमात्र भी अनुमान नहीं था कि इन झटकों से उत्तरी बिहार में प्रलय होगई होगी। पृथ्वी कहीं २ पर फट गई और कहीं २ से पानी की धारायें पृथ्वी के अन्दर से निकलने लगीं। कई शहर गांव बरबाद हो गये। सहस्रों नर-नारी बच्चे बूढ़े मृत्यु के मुख मे चले गये। यह कहा जाता है, उस भूकम्प के कारण लगभग ३०,००० प्राणियों के प्राण चले गये। सम्पत्ति का नुकसान तो करोड़ों रुपयों तक पहुँचा था। पटना, मुजफ्फरपुर, गया आदि में बहुत से मकान गिर गए थे। इतिहास प्रसिद्ध शहर मुंगेर तो नष्ट ही हो गया था। वास्तव में सरकार ही कुछ समय के लिये टूट गई थी। किसी तरह का कोई आवागमन, यातायात का साधन नहीं था। बहुत ही भयानक दृश्य था।

क्वेटा का भूकम्प

इसी प्रकार भूकम्प ने सन् १९३५ मे बिलोचिस्तान के प्रसिद्ध शहर क्वेटा में अपनी प्रलय का ताण्डव नृत्य किया था। भूकम्प ने कुछ ही क्षणों में क्वेटा जैसे समृद्धशाली नगर को धराशायी कर दिया था। घर, मकान, बड़ी २ इमारतें, सड़क, वृक्ष आदि सभी नष्ट हो गये। रात को सभी स्त्री-पुरुष, वृद्ध बच्चे निश्चिन्तता से निद्रा सुख को ले रहे थे परन्तु क्षण-भर मे सबको नष्ट कर दिया। क्वेटा से बचे हुए पुरुष जब यहाँ आते तो वह भयानक वर्णन करते थे कि जिसे सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते थे। किसी का हाथ टूटा है, किसी का पैर टूटा है, किसी के सिर पर पट्टी बंधी है। बड़ा भयानक दृश्य था। सभी अपने उन सम्बन्धियों की जिनकी, कि मृत्यु भूकम्प के कारण

हो गई थी कथा सुनाते थे, सुनकर हृदय टूक २ हो जाता था। यह है भूकम्प की भीषणता, बर्बरता।

टर्की में अभी कुछ समय हुआ, भूचाल आया था। हजारों स्त्री-पुरुष मर गये। शहर बरबाद हो गये। जापान में तो भूचाल प्रायः आते ही रहते हैं। इस कारण वहां मकान लकड़ी के बनाये जाते हैं।

ईश्वर की सत्ता के सामने सभी को सिर झुकाना पड़ता है।

उपसंहार

संसार का कोई भी भाग इस भूकम्प के भय से मुक्त नहीं। यद्यपि वैज्ञानिक इस युग को विज्ञान का युग कहते हैं परन्तु अभी तक विज्ञान में इतनी शक्ति नहीं कि इन दैवी आपत्तियों का निराकरण कर सके। ईश्वरीय नियम तोड़ने की शक्ति किसमें है? केवल ईश्वर से ही प्रार्थना है कि इस भीषणता से बचाये रखे।

रक्षा बन्धन

हिन्दुओं के पवित्रतम व मुख्य त्यौहारों में से रक्षा बन्धन भी है।

विषय प्रवेश

यह त्यौहार श्रावण मास की अन्तिम तिथि पूर्णिमा को मनाया जाता है। इसको श्रावणी व सलूनो भी कहते हैं।

मनाने का कारण

प्राचीन ग्रन्थों के पढ़ने से प्रतीत होता है कि पहले जब ऋषि मुनि यज्ञ करते थे तो राजा को रक्षा के लिये वचन बद्ध करते थे। ये वचन बन्धन श्रावणी के त्यौहार पर किया जाता था। उसी दिन हवन-यज्ञ आदि होते थे। वैदिक मंत्रों से यज्ञोपवीत पहना जाता था। मध्य काल में बहनों द्वारा भाईयों के रक्षा बन्धन बांधने का रिवाज चला। रक्षा बन्धन, बाँध कर भाई बनाने के कारण कई मुसलमानों को भी हिन्दू बहनों की रक्षा के लिये अपने शीश देने

पड़े। अब तो केवल कुछ रुपये देकर भाई अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं।

कैसे मनाया जाता है।

इस दिन बहनें भाईयों के राखी बांधती हैं, यह राखी या रक्षा बन्धन तागों का होता है। भाई रक्षा बन्धन बांधने के उपलक्ष में कुछ रुपये देते हैं। केवल कन्यायें ही नहीं बल्कि विवाहित स्त्रियां भी अपने भाइयों के रक्षा बन्धन बांधती हैं और उपलक्ष में रुपये पाती हैं। रक्षा बन्धन भी केवल भाइयों के ही नहीं पिता, चाचा, आदि के भी बांधी जाती है। ग्रामों में कुछ दिन पहले गेहूँ या जौ बोये जाते हैं। ये टूटे-हुए घड़ों में बोये जाते हैं। रक्षा बन्धन के हरे-हरे पत्ते भाइयों के कानों पर लगाये जाते हैं। इन्हें गूंगा कहते हैं। और इनके उपलक्ष में भाइयों से रुपये प्राप्त किये जाते हैं। कैसे भी मनाया जाय सिद्धान्त एक-ही है। इस दिन खूब पकवान आदि बनते हैं। दिन-भर खुशी मनाई जाती है।

मध्यकाल का महत्व

बड़े आश्चर्य की बात है इस त्यौहार का महत्त्व आजकल लोग नहीं समझते। रक्षाबन्धन का महत्व मध्यकाल में अधिक समझा जाता था और विशेषकर राजपूतों में। अपना सहोदर भाई ही नहीं यदि किसी अपरिचित के पास भी रक्षाबन्धन भेज दिया जाता था तो वह रक्षा-बन्धन द्वारा बना हुआ भाई बहन के लिये प्राण तक न्यौछावर करने को तैयार रहता था। मुसलमानों के समय में जब कोई बलवान व्यक्ति किसी सती साध्वी की लाज बिगाड़ने का प्रयत्न करता तो वह किसी बलवान के पास राखी भेज देती और वह बलवान प्राणों के साथ खेलकर उस अबला की रक्षा करता। राखियाँ केवल हिन्दुओं में ही नहीं बल्कि मुसलमानों तक को भेजी जाती थीं। इतिहास कहता है कि बाबर का पुत्र हुमायूं राणासांगा का कट्टर शत्रु था परन्तु राणा सांगा की स्त्री कर्मवती ने बहादुरशाह से डर कर हुमायूं के पास राखी

भेजी और उसे भाई बनाया। हुमायूं ने भी अपने साम्राज्य तक को दांव पर लगाकर उसकी रक्षा की। यह है राखी का महत्त्व। परन्तु आजकल तो हम केवल कुछ रुपये देकर इस राखीका महत्त्व खो देते हैं।

उपसंहार — आजकल प्रायः देखने मे आता है कि लोगों को अपने त्यौहारों के प्रति उपेक्षा भाव है। यह ठीक नहीं। केवल कुछ रुपये देकर अबलाओं की रक्षा नहीं की जा सकती। यदि स्त्रियों को यह विश्वास हो जाय कि जिस पुरुष के राखी बांधी जा रही है वह पुरुष उसकी निष्काम भाव से हर समय रक्षा करेगा तो वह बहुत से संकटों का सामना कर सकती है। भाई और बहनों के लिये तभी रक्षा बन्धन मनाना सफल भी हो सकता है। रक्षाबन्धन तो भाई और बहन के सम्बन्ध को दृढ़ और स्थायी बनाता है। पुरुषों मे निष्काम सहायता की प्रेरणा देता है। निष्काम कार्य, अनासक्ति आदि ऊंचे भाव हृदय मे पैदा करता है। स्त्रियों के हृदय में भाइयों के प्रति पवित्र प्रेम, आशा आदि जागृत होते हैं। बहन इस आशा से राखी बांधती है कि भाई मेरी रक्षा करेगा। भाई यह प्रतिज्ञा करता है कि मैं तन, मन, धन, से बहन की रक्षा करूंगा। यह कितना पवित्र और ऊंचा भाव है। इसी भाव को हृदय में रखकर राखी का त्यौहार मनाना चाहिये।

हिमालय

विषय प्रवेश — हिमालय नाम का महान् पर्वत भारत के उत्तर में फैला हुआ है। पर्वत भारत की उत्तरी सीमा बनाता है। हिमालय संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ हिम—बर्फ और आलय—घर है। यह अधिक ऊंचा होने के कारण सर्वदा बर्फ से ढका रहता है।

हिमालय का वर्णन — हिमालय पर्वत १६०० मील लम्बा और १५० मील चौड़ा है संसार की सबसे उच्च चोटी गौरी शंकर यहीं पर है। समुद्र से यह चोटी लगभग २९००२ फुट ऊंची है। कई बार देशी विदेशी

यात्रियों ने इस चोटी पर पहुंचने का प्रयत्न किया परन्तु सर्वदा निष्फल रहे। धवलगिरी, कंचनजंगा, आदि और भी चोटियां हैं जो सर्वदा ही बर्फ से ढकी रहती हैं। हिमालय के बहुत-से स्थान अब भी अगम्य हैं। हिमालय का निचला प्रदेश जहां बर्फ नहीं है जंगलों से ढका हुआ है। यह जंगल बड़े भयानक और घने हैं। यहां से गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, आदि बड़ी-बड़ी नदियां निकली हैं। उन नदियोंके उद्‌गम स्थान देखने योग्य हैं जैसे, गंगोत्री, यमुनोत्री आदि. यहां से बहुत-सी छोटी २ नदियां भी निकलती हैं। रावी, चिनाव, जेहलम, व्यास, घाघरा, गंडक आदि। यह अधिक उच्च होने से आने-जाने वालों को सुगम नहीं है फिर भी इसमें दर्रे बने हुए हैं, खैबर का दर्रा एक प्रसिद्ध दर्रा है।

हिमालय में अनेक सुन्दर स्थान भी हैं। काश्मीर जो संसार का स्वर्ग कहलाता है हिमालय में ही है। भारत की ग्रीष्मकालीन व पूर्वी पंजाब की राजधानी शिमला गर्मियों में जाने योग्य स्थान है। नैनीताल मसूरी दार्जिलिंग आदि भी हिमालय के पहाड़ी स्थान हैं, इन स्थानों पर गर्मियों में अच्छी चहल-पहल रहती है। हिमालय में हिन्दुओं के तीर्थ स्थान भी हैं जहां पर प्रतिवर्ष हजारों हिन्दू दर्शनार्थ जाते हैं। केदारनाथ, बद्रीनाथ, अमरनाथ इनमें प्रसिद्ध तीर्थ स्थान हैं।

हिमालय पर्वत से भारत को अनेकों लाभ है। हिमालय पर्वत को हम भारत का पहरेदार कह सकते हैं। हिमालय के कारण उत्तर से किसी बाहरी शत्रु का डर नहीं रहता। यह एक किले की भांति भारत की रक्षा करता है। हिमालय से अनेकों नदियां निकल कर उत्तरी भारत की सिंचाई करती हैं। सहस्त्रों एकड़ भूमि को महान उपजाऊ बनाने का श्रेय हिमालय को है। गंगा यमुना का मैदान जो कि महान उपजाऊ होने के कारण घना बसा हुआ है वह केवल इसलिये कि गंगा-यमुना के पानी से यहां की सिंचाई हो सकती है। हिमालय की चोटियों का सदा बर्फ से

हिमालय पर्वत से लाभ

ढकी रहने के कारण नदियों का पानी सूखता भी नहीं है। यहां के जंगलों से हमें उत्तम से-उत्तम लकड़ी मिलती है। भारतवर्ष में हिमालय के जंगलों की लकड़ी से अनेकों कार्य किये जाते हैं। वैद्यों के लिये तो यह जंगल महान उपयोगी हैं क्योंकि यहां पर हर तरह की जड़ी-बूटी मिल जाती हैं जो अनेकों रोगों में औषधि का काम देती हैं। अधिक ऊंचा होने के कारण दक्षिण पवन को रोककर व शीतल करके भारत के मैदान मे वर्षा करवाता है। इस वर्षा के कारण खूब उपज होती है। घाटियों में खेती-बाड़ी भी की जाती है। हिमालय के ऊपर चाय खूब होती है, काश्मीर में केसर व सेव खूब होते हैं। फलों का तो हिमालय भंडार है। हिमालय के ऊपर अनेक आरोग्य स्थान हैं। शिमला, मसूरी, नैनीताल आदि की जलवायु ऐसी उत्तम है कि जिससे मनुष्य का स्वास्थ्य बढ़ता है। गर्मी से विकल धनी पुरुष तो सभी इन्हीं पहाड़ी स्थानों पर चले जाते हैं और गर्मी से भी बचते हैं एवं स्वास्थ्य लाभ भी करते हैं। प्राकृतिक प्रेमियोंके लिए तो यह पर्वत बहुत ही सुन्दर है। ऐसे सुन्दर २ स्थान हैं जहां पर प्राचीनकाल मे ऋषि मुनियों ने बैठकर तपस्या की और ऐसे २ उत्तम ग्रन्थ लिखे जो कि महान उपयोगी सिद्ध हुए। एकांतवासी योगियों के लिए हिमालय पर्वत पर बहुत से स्थान हैं।

हिमालय पर्वत से हमे लाभ अधिक है और हानियां कम हैं।

उपसंहार

केवल एक ही हानि मुख्य कह सकते है कि भारत को हिमालय पर्वत ने एशिया से अलग कर दिया, इससे भारतवर्ष प्राचीनकाल में संसार से ही अलग हो गया। न भारत दूसरों को कुछ दे सका, न दूसरों से कुछ शिक्षा ले सका। फिर भी इस से इतनी बड़ी हानि नहीं, जितना कि लाभ है। हिमालय ने बाहरी शत्रुओं से रक्षा भी की, हिमालय भारत का पड़ोसी है। इसे भारत का मुकट कहा जाता है। कवि ने कहा है-

अगणित पर्वत खंड चहुं दिसि देत दिखाई।
सिर परसत आकाश चरण पाताल छुआई॥
सोहत सुन्दर खेत पांति तर ऊपर छाई।
मानहु विधिपट हरित स्वर्ग-सोपान बिछाई॥
कहिं ईंधन को ढेर सिद्ध-आवास जनावत।
कहुं समाधिस्थित जोगी की गुहा सुहावत॥
विविध-विलच्छन दृश्य सृष्टि-सुखमा-सुख-मण्डल।
नन्दन-वन-अनरूप-भूमि अभिनय रंगस्थल॥

श्रीधर पाठक

रेडियो

विषय प्रवेश

बेतार के आविष्कार को रेडियो कहते हैं। रेडियो का उपयोग, व्याख्यान, संगीत, सन्देश आदि सुनने के लिये किया जाता है। किसी बड़े नगर के रेडियो स्टेशन से यह व्याख्यान, संगीत आदि ब्राडकास्ट (भेजना) की जाती है और बिना किसी तार की सहायता के हम अति दूर बैठकर उनको सुन सकते हैं। इस अद्भुत यन्त्रको देखकर आश्चर्य होता है कि कैसे बना ?

किसने व कब बनाया

अभी कुछ वर्ष व्यतीत हुए सन् १६२१ ई० मे इटली के एक वैज्ञानिक मारकोनी ने इस अद्भुत यन्त्र का आविष्कार किया था और सबसे पहले सन्देश भेजने का स्टेशन इंगलैंड मे स्थापित हुआ था। तभी से रेडियो की नित्य नई उन्नति की जा रही है। आजकल तो ध्वनि के साथ-साथ चित्र भी आते हैं और चित्रोंवाले यन्त्र को टेलीविजन कहते है। यह भी बिना तार की सहायता के आते हैं। यह विज्ञान का अद्भुत कार्य है।

रेडियो की सन्देश भेजने की मशीनें अलग होती है और ध्वनि ग्रहण करने की अलग। सन्देश भेजने की मशीनें केवल रेडियो स्टेशन पर ही होती है। पहले रेडियो स्टेशन के अधिकारी गण एक कार्यक्रम निश्चित करते हैं। इस कार्यक्रम को वह जनता मे कुछ समय पहले विदित कर देते हैं। उसी कार्यक्रम के अनुसार वह अपने स्टेशन पर व्याख्यानदाता, संगीतज्ञ, सन्देश पढ़नेवाले और भी कलाकार बुलाते हैं और निश्चित समय पर वे अपनी चीजें सन्देश भेजने वाली मशीन द्वारा भेजते हैं।

कैसे कार्य करता है

यह सन्देश वहाँ से इस प्रकार भेजा जाता है कि मशीन से निकलने के उपरांत शीघ्र ही ईथर में मिल जाता है। ईथर आकाश में विचरण करने वाला वायु के समान पदार्थ होता है। कहा जाता है कि ईथर इतना द्रुतगामी है कि एक मिनट मे यह पृथ्वी के चार चक्कर लगा लेता है। संदेश ग्रहण करने वाली मशीन बिजली के द्वारा इसी ईथर से सन्देश ग्रहण करके उसी प्रकार की ध्वनि मे सुना देती है। इस प्रकार एक ही संदेश एक ही मिनट में संसार भर मे कितनी भी दूरी हो, बिना किसी तार आदि की सहायता के सुना जा सकता है।

रेडियो से अनेकों लाभ हैं। पहले विदेशों के समाचार ज्ञात होने मे बहुत समय लगता था परन्तु अब हम रेडियो द्वारा समाचार अति शीघ्र सुन सकते हैं। इंग्लैण्ड के पार्लियामेन्ट के सदस्यों के व्याख्यान आप उनके देते समय ही अपने घर पर बैठकर सुन सकते हैं। रेडियो मनोरंजन का भी साधन है। किसी भी प्रकार का गाना, नाटक, खेल, कहानी आदि इसके द्वारा ब्राडकास्ट किया जा सकता है और आप अपने घर आनन्द से सुन सकते हैं।

रेडियो से लाभ

समुद्र में जहाज और हवा मे वायुयान से भी संदेश भेजे जाते है। जहां इन दोनों को किसी खतरे का सामना करना पड़े

अथवा शीघ्र ही रेडियो द्वारा ये अपनी रक्षा की याचना करते हैं और इनको सहायता पहुंचाई जाती है।

रेडियो द्वारा ग्रामसुधार भी उत्तमता से हो सकता है। यदि गांव-गांव में बिजली लग जाय और रेडियो के यंत्र लगा दिए जायें तो निसंदेह ग्रामसुधार का प्रचार उत्तमता से हो सकता है। हम उनको सफाई, कृषि के सम्बन्ध में, मवेशियों के सम्बन्ध में और उन्नति के सम्बन्ध में बता सकते हैं और वे उनसे लाभ उठा सकते हैं।

रेडियो द्वारा शिक्षा प्रचार भी हो सकता है। जहां हमें शिक्षा प्रचार के लिए प्रचारक, अध्यापकगण आदि रखकर इतना व्यय करना पड़ता है। वहां रेडियो द्वारा जनता को शिक्षित किया जा सकता है।

कभी-कभी देखा गया है कि जनता में सरकार के विरुद्ध झूठी अफवाहें फैल जाती हैं, हम रेडियो द्वारा इन झूठी अफवाहों को समूल नष्ट कर सकते हैं।

किसी आने वाली आकस्मिक घटना या शत्रु के हमले आदि के विषय में रेडियो द्वारा जनता को शीघ्र ही सावधान किया जा सकता है। इसी प्रकार के रेडियो से अनेक लाभ हैं व इसके विपरीत कुछ हानियां भी हैं।

हानियां

रेडियो से हानि अधिक नहीं है। रेडियो स्टेशन जितने भी होते हैं उन पर सरकार का अधिकार होता है। इस कारण जैसा भी प्रचार वे चाहते हैं होता है। इन युद्ध के दिनों में रेडियो द्वारा झूठा प्रचार किया गया। इससे जनता में अविश्वास की लहर दौड़ती है। रेडियो द्वारा झूठा प्रचार नहीं करना चाहिये। रेडियो द्वारा गन्दे गीत आदि ब्राडकास्ट करने से जनता की मनोवृत्ति बिगड़ती है। ऐसे गीत आदि बन्द कर देने चाहियें।

उपसंहार

अन्त में यही कहना पड़ता है रेडियो से लाभ-ही-लाभ है यदि इसका उचित प्रयोग किया जाय। वैसे तो प्रत्येक वस्तु में हानि लाभ दोनों होते हैं। दिखलाई तो ऐसा पड़ता है कि रेडियो का भविष्य उज्ज्वल है। अभी रेडियो की कीमत बहुत अधिक है। सर्व-साधारण जनता इसको खरीद नहीं सकती है परन्तु आशा है कि भविष्य में इस कमी को भी पूरा करके रेडियो को सर्वसाधारण की वस्तु बना दिया जायगा।

—

हिन्दुओं के कुछ पवित्र त्यौहार

विषय प्रवेश

हिन्दुओं के यहां जितने त्यौहार मनाए जाते हैं उतने अन्य किसी धर्म में नहीं। प्रत्येक मास में और यहां तक कि प्रत्येक सप्ताह में कुछ-न-कुछ होता ही रहता है। परन्तु इन सब त्यौहारों का कुछ-न-कुछ महत्व अवश्य है। हम यहां पर केवल मुख्य-मुख्य त्यौहारों को लेंगे। हिंदुओं के मुख्य-मुख्य त्यौहार, श्रावणी, दशहरा, दिवाली, होली, निर्जला एकादशी, जेठ का दशहरा आदि हैं।

श्रावणी या रक्षाबंधन

रक्षाबन्धन का त्यौहार श्रावण मास की अन्तिम तिथि पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस दिन भाई-बहन के पवित्र प्रेम को फिर से नयापन दिया जाता है। वर्षा के कारण खेतों के कार्य बन्द हो जाते हैं और किसान लोगों को फुरसत का समय होता है। इस कारण वे बूरा खाने के बहाने ससुराल हो आते हैं। स्त्रियां झूला आदि झूलती हैं, उनके लिये यह अच्छा शारीरिक व्यायाम होता है। स्त्रियां जो कि घर की चारों दीवारों के अन्दर चिरबन्दिनी हैं इस समय बाहर प्रकृति का आनन्द उपभोग कर सकती हैं।

श्री रामचन्द्र जी की रावण विजय के उपलक्ष्य में क्वार के शुक्ल पक्ष की दशमी को दशहरा मनाया जाता है।

दशहरा

इस दिन रामलीला का रावणवध दिवस होता है। सुबह के समय गङ्गा या नदी स्नान फिर घोड़े का व शस्त्रों का पूजन होता है और क्षत्रिय लोग अपने को सुसज्जित करके रामलीला देखने जाते हैं।

रामलीला में रावणवध के पश्चात् रावण की मूर्ति जो कागजों द्वारा वृहद बनाई जाती है और जिसमें आतिशबाजी के गोले भर दिये जाते हैं, जलायी जाती है। इस त्यौहार के दिन राजा लोग अपनी सवारी निकालते हैं व प्राचीन काल में वर्षा ऋतु बीत जाने पर इसी दिन विजय के लिये प्रस्थान करते थे। इस दिन के नौ दिन पहले रामलीला खेली जाती है। हम लोग श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत, हनुमान से शिक्षा ग्रहण करते हैं।

दिवाली

दिवाली का त्यौहार ५ दिन तक मनाया जाता है। प्रथम दिवस धन तेरस होती है। इस रोज लोग बाजार से बर्तन आदि खरीदते हैं। द्वितीय दिवस नरक चौदस या छोटी दिवाली मनाते हैं और इस दिन थोड़े से दिये जलते है। इस दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने नरकासुर का वध किया था। तृतीय दिवस दिवाली होती है, उस दिन घर-घर में दीये जलाये जाते हैं और लक्ष्मीपूजन होता है। चौथे दिन गोवरधन पूजा होती है। इस पूजा में स्त्रियां गोबर का गोवरधन बनाती है और उसकी पूजा करती हैं। पंचम व अन्तिम दिन भैया दूज है, इस दिन भाई बहन के घर जाता है, टीका कराता है और उपलक्ष्य में बहन को कुछ देकर वहीं भोजन करता है।

यह त्यौहार कार्तिक के कृष्ण पक्ष में मनाया जाता है और तेरस से शुक्ल पक्ष की द्वितीया तक मनाया जाता है। इस त्यौहार के दिन लोग अपने घरों की मरम्मत करते है सजाते है और सुन्दर बनाते हैं। बरसात के कारण घर खराब हो जाते थे। इस मौके पर वह ठीक

हो जाते हैं। व्यापारी लोग अपनी वही आदि ठीक कर लेते हैं। क्यों कि वे इसी दिन से अपना नया साल मनाते है।

होली और उत्सव वसंत

किसानों की मुख्य फसल रवी की होती है। यह दिवाली या उसके वाद वोई जाती है। किसान का वर्ष-भर का परिश्रम इसी फसल के अच्छी-तरह आने मे होता है। जब फसल वढ़ जाती है और चारों ओर सरसों फूल उठती है तब वसन्तोत्सव मनाते हैं। यह किसानों का उल्लास है। प्रकृति भी अपने सौंदर्य की पराकाष्ठा पर होती है और हृदय भी उल्लासित। यह उत्सव माघ शुक्ला पंचमी को मनाया जाता है।

होली फागुन की पूर्णिमा को मनाई जाती है यह त्यौहार भी किसानों से अधिक सम्बन्ध रखता है। फसल का पकना आरम्भ हो जाता है। हिन्दुओं के साल का भी अन्तिम दिवस होता है। इस दिन अग्नि जलाकर अपनी वर्ष-भर के परिश्रम से प्राप्त वालों को भून कर रसास्वादन करते हैं। होली को जलाकर वर्ष-भर के झगड़ों को अग्नि में डाल कर आपस मे गले मिलते हैं। यह कहा जाता है इस दिन हिरण्याकश्यप की वहन होलिका ने प्रह्लाद भक्त को गोदी मे लेकर अग्नि प्रवेश किया था। परन्तु स्वयं ही जल गई, प्रह्लाद वच निकले। यह इस वात की याद दिलाती है कि ईश्वर के भरोसे पर कार्य करने वाले व्यक्तियों का कोई भी शत्रु वाल वाका नहीं कर सकता। यह है पवित्र आदर्श जो होली हमें देती है।

जेष्ठ का दशहरा

यह जेष्ठ मास मे शुक्ल पक्ष में दशमी के दिन मनाते हैं। इस दिन का महात्म्य गंगा या किसी नदी के स्नान करने से है। घोर गर्मी पड़ती है, मनुष्य घर से निकल भी नहीं सकते, लू चलती है। इस कारण इस त्योहार के वहाने नदी का स्नान कर मनुष्य-शीतलता

अनुभव करता है। वहां जाकर भोजन आदि कर अपने रूखे और नीरस जीवन से थोड़ा-सा आमोद पा लेता है।

निर्जला एकादशी — यह भी जेठ मास में आती है। दिन बड़े-बड़े होते हैं अति गहरी गर्मी पड़ती है और लू चलती है। पानी बिना मनुष्य कठिनाई अनुभव करता है। इस दिन बिना पानी पिये व्रत रक्खा जाता है। मनुष्य अपनी सहन-शक्ति का अनुभव कर लेता है कि ग्रीष्म समय में वह कितनी शक्ति रखता है। गर्मी पराकाष्ठा पर होती है और बिना पानी पिये रहना, शक्ति की जांच होती है।

उपसंहार — इन त्यौहारों के अलावा भी और त्यौहार होते हैं जैसे कृष्ण जन्माष्टमी, राम नवमी आदि। इन त्यौहारों को हम महापुरुषों के जन्म दिवसों के उपलक्ष में मनाते हैं। हिन्दुओं का प्रत्येक त्यौहार कुछ-न-कुछ महत्व अवश्य रखता है इसलिये वे उपेक्षा की वस्तु नहीं।

टेलीफोन

विषय प्रवेश — टेलीफोन दूर २ बैठे हुए व्यक्तियों के लिए बातचीत करने का सबसे सहल व शीघ्रता का तरीका है। आजकल सरकारी कार्यालयों व व्यापारिक कार्यालयों में टेलीफोन एक अति ही आवश्यक अङ्ग है। दूर २ शहरों मे बैठे या एक शहर मे दो अलग-अलग कार्यालयों में बैठे दो व्यक्ति अति सरलता से बात कर सकते हैं।

कैसे कार्य करता है — टेलीफोन में दो यंत्र होते हैं एक बोलने का, दूसरा सुनने का। आजकल आम तौर से दोनों यंत्र एक-ही यंत्र के दोनों ओर लगे होते है। ये दोनो अलग भी हैं। हम बोलने के यंत्र को मुंह पर लगाते हैं और सुनने के यंत्र को कान में। ये दोनो यंत्र

तार द्वारा एक-दूसरे से मिले भी रहते हैं। जिस यंत्र मे यह दोनों लगे रहते हैं उसे रिसीवर कहते हैं। प्रत्येक टेलीफोन का एक नम्बर होता है। हर-एक-टेलीफोन का नम्बर पृथक-पृथक होता है। नम्बर देने के लिए कार्यालय होते हैं। वह हमको जिस नम्बर से बात-चीत करना चाहें उसी नम्बर से जोड़ देते हैं। इन काम करने वालों को 'आपरेटर' और कार्यालय को 'ऐक्सचेंज हाऊस' कहते हैं। जब हम रिसीवर को उठाते हैं तभी आपरेटर के पास घंटी बजती है। जिसका तात्पर्य होता है कि कोई नम्बर मांग रहा हैं। आपरेटर नम्बर पूछता है और मालूम करके उसी नम्बर से जोड़ देता है। और यहां जिस नम्बर को मांगा है घंटी बजाता है। उसी नम्बर पर घंटी की ध्वनि सुनाई पड़ती है। घंटी की ध्वनि सुनकर वहां वाले व्यक्ति समझ लेते हैं कि कोई बात-चीत करना चाहता है। वह रिसीवर को उठा लेते हैं तो बात-चीत आरम्भ कर देते हैं। बात-चीत आरम्भ हैलो शब्द द्वारा आरम्भ की जाती है। किसी २ टेलीफोन में नम्बर लेने के लिए एक गोलाकार स्टील का पत्ता लगा रहता है जिसमें एक से नौ तक और शून्य नम्बर लिखे रहते हैं। नम्बर लेनेवाला जिस नम्बर को चाहता है। उन्हीं नम्बरों पर अंगुली रखकर घुमाता है और घुमाना बन्द कर देता है तो दूसरी ओर घंटी बजती है। इस तरह के टेलीफोन को ओटोमेटिक टेली [illegible]ोन कहते है।

व्यापारिक लाभ

टेलीफोन के आविष्कार से व्यापारिक जगत को बहुत लाभ पहुंचा है। दिल्ली के अन्दर बैठा हुआ व्यापारी बम्बई के व्यापारी से मालूम कर सकता है कि आजकल उस वस्तु का, जिसका कि वह व्यापार करता है, क्या भाव है और इस तरह से अपने को हानि से बचा सकता है। बड़े २ शहरों जो सट्टे आदि होते हैं, जिनसे कि व्यापारी एक-क्षण में करोड़पति या एक-क्षण मे फकीर बन जाता है वह सब टेलीफोन द्वारा होते हैं। टेलीफोन के कारण ही क्षण २ में बदलने वाले भावों को व्यापारी जान सकता है। सोने आदि के

भाव तो क्षण २ में परिवर्तित होते रहते हैं। जो बाजार इनके भावों को नियंत्रण करते हैं वहां से टेलीफोन आता रहता है। पहले व्यापारियों को प्रत्येक काम के लिए भाग २ कर जाना पड़ता था परन्तु अब तो अपनी दूकान पर बैठा २ पता लगा सकता है कि उनकी अमुक वस्तु अभी तक क्यों नहीं आई व क्या देर है व उसका भव क्या भाव है आदि २।

सरकारी कार्यालय को लाभ

सरकारी कार्यालय सभी एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं अगर टेलीफोन न हो तो एक-एक बात के लिए या तो स्वयं जाकर पूछताछ करो या डाक द्वारा पता लगाओ जिसमें बड़ी देर होती है। यदि टेलीफोन है तो फौरन टेलीफोन द्वारा पता चला सकते हैं। अति देर के काम शीघ्रातिशीघ्र हो सकते है।

और भी लाभ

इसके अलावा वकील, डाक्टर, नेता, पुलिस आदि सभी इस आविष्कार से लाभ उठाते हैं। डाक्टर टेलीफोन द्वारा अपने मरीज का हाल मालूम कर सकता है, वकील अपने मुवक्किल का हाल मालूम कर सकता है। इस आविष्कार से समय की अत्यधिक बचत होती है। वास्तव में टेलीफोन सभ्य संसार के लिए एक वरदान है।

उपसंहार

बड़े २ शहर आग लगने से राख हो जाते थे, अब टेलीफोन द्वारा शीघ्र ही फायर ब्रिगेड को बुलाया जा सकता है। यदि दूर-दूर को व्यक्ति रहते हैं और एक-दूसरे से आवश्यक कार्यों से बात-चीत करना चाहते तो वह टेलीफोन द्वारा शीघ्रातिशीघ्र कम खर्च में बातचीत कर सकते हैं। नहीं तो रेल द्वारा खर्च अधिक करना होगा, समय अधिक लगाना पड़ेगा और कठिनाई अधिक उठानी पड़ेगी। केवल कमी है तो इतनी कि सर्वसाधारण को न इस आविष्कार का इतना ज्ञान है न वह प्रयोग में लाते हैं। सरकार को चाहिए कि टेलीफोन को सर्व साधारण के प्रयोग में लाने के लिये प्रयत्न करे।

विवरणात्मक लेख

श्री कृष्ण

योगिराज, विद्वान्, प्रतिभावान, महान्, संगीतज्ञ, महान् राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण को कौन अभागा नहीं जानता। महान महाभारत के नायक श्रीकृष्ण हिन्दुओं के भगवान् विष्णु के अवतार माने जाते हैं।

भूमिका

योगिराज श्रीकृष्ण का जन्म मथुरा में कारावास में हुआ था। इनकी माता का नाम देवकी व पिता का नाम वासुदेव था। देवकी उस समय के चक्रवर्ती परन्तु पापी एवं दुराचारी सम्राट कंस की बहिन थी। मुनि नारद द्वारा कंस को मालूम हो गया था कि उसकी मृत्यु देवकी के आठवें पुत्र से होगी। कंस ने यह सुनकर देवकी को जेल में डाल दिया, उसकी पहली सातों सन्तानों को मार दिया। जब आठवीं सन्तान श्रीकृष्ण पैदा हुए तो उन्हें वासुदेव ने गोकुल, अपने मित्र के यहां पहुंचा दिया। यहां पर श्री कृष्ण ने जो बचपन से समाज उद्धारक व महान प्रतीत होते थे, आश्चर्यजनक कार्य किए। गऊ-सेवा का सन्देश घर २ में पहुंचाया, स्वयं गऊओं के पीछे जङ्गल २ घूमे। बंसरी की तानों से तमाम अहीरों व उनकी स्त्रियों को प्रसन्न करके सबके हृदय के अन्दर उल्लास बनाये रक्खा। गऊ का दूध व मक्खन खाने वाले बलवान कृष्ण ने कई पापियों को मार गिराया।

जन्म
कुल, परिचय
व
बालपन

अन्त में इन्हीं ग्वाले कृष्ण द्वारा बालपन में ही पापी कंस भी मारा गया। उन्होंने मथुरा के सिंहासन पर धर्म राज्य की स्थापना की और उग्रसेन को गद्दी पर बिठाया। अनपढ़ अहीरों के घर पर पलने के उपरांत भी उन्होंने राजनीतिज्ञता से दक्षता प्राप्त करली थी।

शिक्षा

श्रीकृष्ण की शिक्षा संदीपन गुरु के यहां हुई थी। इन्हीं गुरु के पास श्रीकृष्ण ने सब शास्त्रों में अपने को पारंगत किया। हर-तरह की शस्त्र-शिक्षा भी ग्रहण की। श्रीकृष्ण की रुचि वंसी बजाने व राजनीति सीखने में अधिक थी।

भारत की दशा

श्रीकृष्ण के समय भारत की दशा बड़ी डावांडोल थी। उस समय भारतवर्ष में विलासिता का साम्राज्य था। यहां के लोग बुद्धि को खोकर पाप की ओर अग्रसर हो रहे थे। आपस में बेहद फूट थी। भाई-भाई के खून का प्यासा था। परमात्मा व धर्म की हंसी उड़ाई जा रही थी। भारत की राजनैतिक स्थिति तो बहुत अधिक डावांडोल थी। यहां पर पांचाल, मत्स्य, मगध आदि पचासों छोटे २ राज्य थे। सब मे फूट थी। कई राजा तो बड़े अत्याचारी थे, जैसे कंस, जरासिंधु दुर्योधन आदि। इनकी खूब बन आई थी। इस समय ऐसे व्यक्ति की या यह कहिए ऐसे राजनीतिज्ञ की आवश्यकता थी जो इन सभी पापियों को नष्ट करके भारत में धर्म राज्य व एक छत्र राज्य स्थापित करता और श्रीकृष्ण ने इस कार्य को कर दिखलाया।

उनके कार्य

श्रीकृष्ण ने कंस को मारकर उग्रसेन को राज्य दे दिया और स्वयं जाकर द्वारिका नगरी बसाई। वहां से उन्होंने रुक्मणि से अपना विवाह किया और रुक्म से अपनी शत्रुता बढ़ाई। शिशुपाल जो उस समय बड़े राजाओं में से एक था और साथ ही अत्याचारियों में भी वह एक था, रुक्मणि से विवाह करना चाहता था इस कारण श्रीकृष्ण से शत्रुता करने

लगा। और उसका वध भी श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर द्वारा किए गये राजसूय यज्ञ में कर दिया।

उस समय भारत में कौरव पाण्डवों का जोर बढ़ा। श्रीकृष्ण को इस समय धर्म राज्य स्थापन करने का सुवर्ण अवसर हाथ लगा। श्रीकृष्ण समझ गये कि पाण्डव धर्मात्मा हैं और इन्हीं से देश की भलाई है। इसी कारण पाण्डवों की व श्रीकृष्ण की मित्रता हो गई। कौरवों ने पांडवों के साथ शत्रुता का वर्ताव किया। कभी लाक्षागृह में जलाया, कभी जुए में हराया। सती रमणी द्रौपदी का भी अपमान किया। पांडवों व कौरवों की शत्रुता बढ़ गई व एक महान युद्ध की तैयारी होने लगी।

कौरव व पांडव

इस महान युद्ध को संसार में महाभारत के नाम से पुकारते हैं। इस महाभारत के युद्ध में भारत के प्रत्येक हिस्से ने भाग लिया। इस युद्ध में श्रीकृष्ण ने निःशस्त्र रह कर पाण्डवों की सहायता की और अपनी समस्त सेना को दुर्योधन को दे दिया। युद्ध के पहले अर्जुन को मोह हुआ वह युद्ध में प्रवृत्त नहीं होना चाहता था। परन्तु युद्ध के मैदान में ही श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया और यही उपदेश गीता के नाम से प्रसिद्ध है। इसका उल्था संसार की प्रत्येक भाषा में हो चुका है। यह पुस्तक हिन्दुओं का धर्म ग्रंथ भी हैं। अन्त में श्रीकृष्ण के कौशल से पांडवों की विजय हुई और दुर्योधन की हार। दुर्योधन भी भीम द्वारा मारा गया। जरासिंध भी मारा गया। श्रीकृष्ण के अथक परिश्रम से भारत में धर्म राज्य की स्थापना हो गई। यद्यपि इस युद्ध में लाखों वीरों के प्राण गए और ऐसा प्रतीत होने लगा कि भारतभूमि अब वीर विहीन हो गई। फिर भी आततायियों का संसार से उठ जाना अच्छा हुआ, जो कुछ धर्मात्मा वीर बचे थे, वह भारत रक्षा में समर्थ थे।

श्रीकृष्ण व महाभारत

श्रीकृष्ण ने अपने जीवन में अनेकों कार्य किए। बहुत व्यक्ति उन में बहुत से दोष लगाते है, परन्तु वह निर्दोष थे। उनमे सेवाभाव था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पैर धोने का कार्य भी किया। वह मित्रता के मूल्य को पहचानते थे। सुदामा के निर्धन होते हुए भी व स्वयं एक राजा होते हुए भी उन्होंने सुदामा की भरसक सहायता की। बहुत से व्यक्ति कहते है कि उन्होंने महाभारत कराके भूल की। यदि वह महाभारत न कराते तो भारत बहुत पहले से ही विदेशियों के हाथ मे चला गया होता। परन्तु भारत का सिक्का महाभारत के उपरांत ऐसा बैठा कि साढ़े तीन हजार साल तक किसी भी विदेशी ने भारत की ओर मुंह न किया। इन्हीं सभी कार्यो से भक्त लोग श्रीकृष्ण को भगवान मानते है। इनकी मृत्यु पैर में बहेलिये का बाण लग जाने से हुई। वह इतने महान थे कि अपने मारने वाले को भी क्षमा कर दिया।

उपसंहार व मृत्यु

महात्मा गांधी

वास्तव में महात्मा गांधी ऐसे ही नर्दो में से थे। महात्मा गांधी ने ऐसा महान आदर्श हमारे सम्मुख रक्खा जो कि संसार मे अद्वितीय है। अहिंसा जैसे शस्त्र से हमारा परिचय कराया और १००० साल से बन्धन मे पड़े हुए भारत को स्वतन्त्रता दिलवाई। यह भारतवासियों के लिये भगवान स्वरूप थे।

भूमिका

इस महापुरुष का जन्म पोरबन्दर नगर गुजरात प्रांत में २ अक्टूबर सन् १८६९ मे हुआ था। इनके पिता राजकोट रियासत के दीवान व अच्छे धनी व्यक्ति थे और प्रतिष्ठा भी उनकी खूब थी। आपका विवाह बचपन में ही कस्तूरबा से हो गया था।

जन्म व कुल परिचय

इनके पिता का नाम कर्मचन्द था व इनका नाम मोहनदास था, परन्तु गुजरात की रीति के अनुकूल वह मोहनदास कर्मचन्द कहे जाते हैं।

शिक्षा

महात्मा गांधी ने प्रारम्भिक शिक्षा गुजरात में ही पाई। जब आप थोड़े समर्थ हुए, तब आपको इङ्गलैंड पढ़ने के लिये भेज दिया गया। वहां पर आपने बैरिस्टरी पास की। लोगों को विश्वास था कि आप बैरिस्टरी पास करके किसी रियासत के दीवान बनेंगे, परन्तु ऐसा नहीं हुआ।

आपके कार्य

गुजरात के किसी व्यापारी के आप कानूनी सलाहकार बनकर अफ्रीका गये और वहां पर आप बैरिस्टरी करने लगे, आपका काम चला भी खूब। वहां पर आप प्रवासी भारतीयों के नेता बन गये। वहां पर आपने भारतीयों के लिए बुरे नियमों को हटाने के लिये सरकार से सत्याग्रह संग्राम छेड़ दिया और अहिंसा के प्रयोग में सफल हुए। इसके कारण आपने कई बार जेल यात्रा भी की। भारतीयों की मांगे स्वीकृत हुई। अफ्रीका से वापिस लौटने पर अफ्रीका के इस विजेता का भारत में खूब स्वागत किया गया। सन् १६१६ से महात्मा गांधी का प्रभाव कांग्रेस पर, जो उस समय एक राजनैतिक संस्था थी और अब भी है, बढ़ने लगा। १६१६ का सत्याग्रह, १६२० के असहयोग आंदोलन आदि में आप मुख्य संचालक रहे। १६२१ के सत्याग्रह एवं १६३० के नमक सत्याग्रह के भी आप ही संचालक थे। आप कांग्रेस के तो सर्वेसर्वा थे। १६४२ के भारत छोड़ो सत्याग्रह के भी आप ही नियामक थे। १६४६ और १६४७ के अन्दर अंग्रेजों से समझौता करने वाले आप ही थे। १५ अगस्त सन् १६४७ को बिना लड़ाई इतिहास में अद्वितीय तरीके से स्वतन्त्रता प्राप्त करने वाले आप ही महान पुरुष थे। जिस कार्य को असम्भव समझा जाता था

उस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त करके संसार को आपने चकित कर दिया। १९४७ के हिन्दू-मुस्लिम दंगों में शान्ति के कार्य करने वाले भी आप ही थे और देश-हित ही में आप ने अपने प्राण तक दे दिए।

आप जीवन में सत्य एवम् अहिंसा को अपना मूल मन्त्र मानते थे। सत्य को ही ईश्वर का स्वरूप समझते थे। मन, वचन, कर्म से अहिंसा के पुजारी थे। इन्हीं कारणों से देशवासियों में इनका प्रभाव बहुत था। यह जिस कार्य के लिए कहते समस्त देश उस कार्य को करने के लिये तैयार हो जाता था। इनके लिए सब धर्म एक समान थे। हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मण, अछूत सब को एक समान समझते थे। इनका जीवन सादा था। आश्रम में रहते थे और प्रत्येक कार्य अपने हाथ से करते थे। केवल एक वस्त्र धारण करते थे। अपना जीवन गरीब-से-गरीब भारतीयों की तरह बिताते थे। तप, ईश्वर-विश्वास, दया, दमा, सत्य प्रेम, तथा जितेन्द्रियता की साक्षात् मूर्ति थे।

महात्मा गांधी अपने समय के सर्वश्रेष्ठ पुरुष थे। संसार-भर में सबसे अधिक व्यक्ति इन्हीं को जानते हैं।

उपदेश

इन्होंने संसार को उपदेश दिए। वह उपदेश जिन पर वह स्वयं भी चलते थे। यह कहा करते थे वही पुरुष सबसे अधिक बलवान है जो मरना जानता है, जो दूसरों के द्वारा सताया जाता है लेकिन आह भी नहीं करता। ये तोप, बन्दूक, बम पर विश्वास नहीं करते थे। हिंसात्मक वस्तुओं से तो केवल विनाश कर भौतिक शरीर को ही जीता जा सकता है, परन्तु अहिंसा द्वारा जो कि आत्मिक शस्त्र है उससे हृदय पर भी विजय पाई जा सकती है। यही सच्ची विजय है। जापान व जर्मनी जैसे महान राष्ट्रों को कुचल देने वाले अंग्रेजों की महान शक्ति अहिंसा के आगे झुक गई। किसी से शत्रुता मत करो। भगवान के यहां अछूत व ब्राह्मण सभी बराबर हैं। किसी के धर्म में

स्थापन न करो। एक ईश्वर के पास पहुंचने के पृथक् २ धर्म, पृथक् २ मार्ग हैं। ईश्वर सबका एक है। शत्रु को दण्ड न दो, क्षमा कर दो। यही सबसे बड़ा दण्ड है। पापी से घृणा मत करो बल्कि घृणा पाप से करो। इन सभी उपदेशों से संसार का उपकार किया।

हिंदू धर्म से कुरीतियों को निकालने के लिए अनेक कार्य किए।

समाज सेवा

अछूतोद्धार का कार्य करके करोड़ों अछूतों को जोकि पद दलित थे, ऊपर उठाया। खादी का प्रचार करके हजारों ग़रीबों की भोजन की व्यवस्था की। अंतर्जातीय विवाह प्रथा को चलाया। आपके पुत्रों के विवाह अन्य जातियों मे ही हुए हैं। और भी अनेक समाज-सुधार के कार्य किए।

उपसंहार
मृत्यु

ऐसे महान पुरुष को यदि हिंदू तेतीस कोटि देवताओं मे सम्मिलित करना चाहते हैं तो क्या हानि है? इनमें श्रीकृष्ण की राजनीतिज्ञता, महात्मा बुद्ध की अहिंसा, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र की सत्यता सभी कुछ निहित थी। इनको ईश्वर का अवतार ही कहा जा सकता है।

इस महान देशभक्त, राजनीतिज्ञ एवम् सत्य-स्वरूप को ३० जनवरी सन् १९४८ को नाथूराम विनायक गोडसे नामक व्यक्ति ने सायंकाल में उनकी प्रार्थना समय गोली से मार दिया। अहिंसा के पुजारी की मृत्यु हिंसा से हुई। उस समय हिंदू मुस्लिम दङ्गों को शांत करने में प्रयत्नशील थे और दिल्ली थे। अभी भारत को ही नहीं बल्कि संसार को इस महान पुरुष की आवश्यकता थी। ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे और हम सबमें इतना बल दे कि हम उनके आदर्शों पर चल कर अपने जीवन को महान बना सकें।

श्री रामचन्द्र जी

हिन्दू धर्म के रक्षार्थ जितने अवतार हुए उनमें श्री रामचन्द्रजी भी एक अवतार हैं। हिन्दू धर्म का वह भाग जो इन्हें अवतार नहीं मानता, जैसे, आर्य समाज वह भी इन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम मानता है। यह त्रेता-युग में ऐसे समय में भारतवर्ष में अवतीर्ण हुए जबकि यहां पर रावण जैसे अत्याचारी पुरुषों का बोल बाला था और धर्म का नाश हो रहा था।

त्रेता-युग में सूर्यवंशी क्षत्रियों का राज्य था। इस वंश में राजा दशरथ जैसे महान प्रतापी राजा हुए। इनके तीन रानियां थीं। कौशल्या, सुमित्रा वा कैकेयी। बहुत समय बीत गया परन्तु राजा दशरथ के सन्तान नहीं हुई। तब उन्होंने पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि यज्ञ किया और इसके फल-स्वरूप कौशल्या के राम, कैकेयी के भरत व सुमित्रा के लक्ष्मण व शत्रुघ्न अवतीर्ण हुए। श्रीरामचन्द्र जी सबसे बड़े भाई थे।

धीरे-धीरे चारों भाई बड़े हुए व गुरु के यहां शिक्षा प्राप्त करने लगे। जब सम्पूर्ण शिक्षा में पारंगत होगये तब एक दिन ऋषि विश्वामित्र राज दरबार में आए और उन्होंने दशरथ से राम व लक्ष्मण को वन में राक्षसों को नाश करने के लिये मांगा, जो कि उनके यज्ञ आदि नष्ट कर दिया करते थे। पहले तो दशरथ आनाकानी करने लगे परन्तु फिर सोच कर उन्होंने राम व लक्ष्मण दोनों को ही ऋषि विश्वामित्र के साथ विदा कर दिया। आश्रम को जाते ही पहले मार्ग में ताड़का नामक एक महान राक्षसी को राम ने मारा। तदुपरांत ऋषि के यज्ञों का नाश करने वाले सुबाहु का नाश किया व मारीच नामक राक्षस को अति दूर फेंक दिया।

उन्हीं दिनों मिथिलापति श्री जनक की पुत्री सीता का स्वयंवर होनेवाला था। विश्वामित्र को भी निमन्त्रण आया और यह दोनों

भाई श्रीराम व लक्ष्मण को लेकर जनकपुर पहुँच गये। श्री जनक ने इनका बहुत आदर किया।

श्री जनक का प्रण था कि जो शिव-धनुष को हाथ में लेकर चढ़ा देगा, उसी को अपनी पुत्री सीता को विवाह दूंगा। लेकिन चढ़ाना तो दूर रहा रावण जैसे महान योद्धा भी उसे तिल-भर न हिला सके। अन्त में गुरु की आज्ञा से श्री रामचन्द्र जी ने धनुष को तोड़ दिया। सीता ने प्रसन्नता पूर्वक राम के गले में जयमाला डाल दी। इसी समय रौद्र-रूप धारण कर वहां परशुराम आए। वह क्रोधी थे। उन्होंने राम पर धनुष तोड़ देने के कारण अतिशय क्रोध किया परन्तु बाद में राम को अवतार समझ कर चले गए व राम व सीता का विवाह हो गया।

राजा दशरथ अब वृद्ध हो चुके थे। उनकी इच्छा थी राम को राज्य तिलक दे दिया जाय और वह इसी प्रकार का आयोजन करने लगे। उस समय भरत व शत्रुघ्न अपनी ननिहाल में थे। रानी कैकेयी की दासी मंथरा को राज्य-तिलक बुरा लगा और उसने कैकयी को भड़का दिया कि उसके साथ धोखा किया जा रहा है। रानी कैकेयी ने भी यही समझा और कोप-भवन में जा बैठी। राजा दशरथ के पूछने पर व आश्वासन देने पर कि जो कुछ वह मांगेगी वही दिया जायगा। रानी कैकेयी ने दो वर मांगे। प्रथम राम को चौदह वर्ष का वनवास व भरत को राज्य-तिलक। राम पिता व माता की आज्ञा पर राज्य को लात मार कर वन को चल दिए। साथ में लक्ष्मण व सीता भी चले। क्योंकि सीता पतिव्रता थी वह भला पीछे कैसे रह जाती, व लक्ष्मण भ्रातृभक्त भला वह क्यों घर रहते।

भरत ने भी राज्य स्वीकार नहीं किया उन्होंने भाई को वन से लाने की चेष्टा की। परन्तु भला राम जैसे पितृ-भक्त कैसे लौट सकते। वन में श्रीराम के ऊपर कष्टों की एक बाढ़-सी आई। रावण की बहन सूपर्णखा वन में घूम रही थी, उसे यह दोनों भाई मिल गए। वह इनकी सुन्दरता पर मोहित हो गई और इनके सम्मुख विवाह-प्रस्ताव रक्खा।

उसकी इस पापी पूर्ण इच्छा को सुन कर लक्ष्मण ने उसके नाक व कान काट लिए। सूपर्णखा रोती-चिल्लाती अपने भाई खर व दूषण के पास गई। खर व दूषण युद्ध करने के लिए श्रीराम के पास आए। परन्तु श्रीराम के तीखे बाणों की चोट खाकर दोनों ही धराशायी हो गए। सूपर्णखा ने अपने बड़े भाई लंकेश रावण से पुकार की। रावण धोखे से सीता को चुराकर ले गया। श्रीरामचन्द्र और लक्ष्मण सीताजी की खोज करते हुए सुग्रीव से मिले जो बन्दरों का राजा था। उसके भाई बाली को मारकर सुग्रीव को राज्य दिलाया तथा उसकी स्त्री को दिलाया। तदुपरांत वह वानरों की सेना लेकर, समुद्र पर पुल बांधकर लंका में जा पहुँचे। यहाँ पर रावण का भाई विभीषण श्रीराम से आ मिला। घोर युद्ध हुआ, अंत में रावण मारा गया व सीता का उद्धार हुआ। लंका का राज्य विभीषण को दे दिया गया।

श्रीरामचन्द्रजी की संपूर्ण जीवनी को पढ़ने से मालूम होता है कि श्रीराम मातृ-पितृ-भक्त थे। भातृ प्रेम भी उनमें कूट-कूट कर भरा था। वह सर्वगुण सम्पन्न थे। वह एक महान योद्धा भी थे, वह धैर्य, उत्साह, सहन-शीलता के तो प्रत्यक्ष उदाहरण थे। उनमें उदारता, त्याग व आत्माभिमान और मनुष्यों से बढ़-चढ़कर था। श्रीरामचन्द्र जी प्रण के पक्के, उदार, सदाचारी, वीर, दानी, क्रोध को जीतनेवाले महान आदर्श पुरुष थे।

आज इस महान् हिन्दू जाति के परमात्मा के पद पर सुशोभित श्रीराम आदर्श का काम दे रहे हैं। यह श्रीराम की आदर्श शिक्षायें ही हैं जो कि हिन्दू जाति को सैंकड़ों थपेड़ों से बाहर निकाल लाई हैं। राम के जीवन चरित्र से हमें अपने कर्त्तव्यों का ज्ञान होता है। माता-पिता के प्रति हमारे क्या कर्त्तव्य हैं, भाई के प्रति क्या कर्त्तव्य हैं, पत्नी के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये आदि उनके जीवन चरित से मालूम हो जाता है। इसीलिए बहुत प्राचीन काल से केवल उसी राम के नाम स्मरण मात्र से हम अपना उद्धार समझते हैं।

श्रीराम हमारे हृदय मन्दिर के देवता हैं। उन्होंने अपने जीवन द्वारा हमारे जीवन के अंधकारपूर्ण समय में प्रकाश दिखाया।

श्रीराम ने आर्य-धर्म की पताका भारतवर्ष में फहराई उन्होंने अनार्य राजा रावण को मार कर भारतवर्ष को अत्याचारों से मुक्त किया। इस प्रकार आर्यों की स्वतन्त्रता को हजारों साल तक प्रगतिशील रक्खा। भारतवर्ष में राम राज्य के आदर्श राज्य था। जबतक भारतवर्ष है तब तक श्रीराम रहेंगे व भारतीय समाज अपने जीवन में उनसे प्रेरणा लेता रहेगा।

पं० जवाहरलाल नेहरू

विषय प्रवेश

पं० जवाहरलाल नेहरू स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान-मन्त्री हैं। स्वतन्त्रता प्राप्त कराने में भी यह अग्रणी रहे। भारत के राजनैतिक रंग-मंच पर महात्मा गांधी के बाद सबसे अधिक लोकप्रिय व महत्वपूर्ण व्यक्ति जवाहरलाल नेहरू हैं।

जन्म

पं० नेहरू का जन्म प्रयाग में १६ नवम्बर सन् १८८६ को हुआ था। आपके पिता मोतीलाल नेहरू सर्वोत्तम प्रतिभा-युक्त, योग्यता-सम्पन्न और देश के माने हुए नेता थे। उनका जीवन राजाओं की भांति बीता था। अपने यौवन काल में उन्होंने बहुत-सा धन कमाया था। वह इलाहाबाद में रहते थे। सफल वकील, लाखों की वार्षिक आय, देश के नेता, कर्मचारियों में सम्मान, किसी वस्तु की कमी नहीं। जवाहरलाल नेहरू की माता का नाम स्वरूप रानी था। जो कि एक प्रतिभाशालिनी विदुषी, पतिव्रता तथा सुयोग्य स्त्री थीं। ऐसे भरे-पूरे एक योग्य घर में जवाहरलाल का जन्म हुआ था। आपकी दो बहनें भी हैं।

आपका बचपन बहुत आराम से बीता। आप अपने पिता के एकमात्र पुत्र थे और उनके अतुल सम्पत्ति थी।

बचपन व शिक्षा

बचपन में आपकी शिक्षा घर में ही हुई। आप को सुयोग्य अंग्रेज मास्टर पढ़ाने आते थे। और इस तरह से आप पर अंग्रेजी प्रभाव पड़ने लगा। साथ-ही आप का ध्यान बचपन में ही देश की ओर हो गया। यह अंग्रेजी सभ्यता का प्रभाव था।

आपकी उच्च-शिक्षा विलायत में हुई। वहां आपने हैरो में भी शिक्षा प्राप्त की और केम्ब्रिज में भी। आपने बेरिस्टरी भी इङ्गलैंड से की। वहां की उच्च-शिक्षा प्राप्त करके आप भारत में वापिस आए। परन्तु ईश्वर को इनकी उच्च शिक्षा से रुपया कमवाना स्वीकार नहीं था। देश के लिए आपकी शिक्षा काम आई। आपका विवाह कमला से १९१६ में हुआ।

राजनीति में

जब शिक्षा प्राप्त कर जवाहरलाल वापिस भारत आए, उस समय राजनैतिक क्षेत्र में महात्मा गांधी का पदार्पण हो चुका था। उनकी धूम भारत में मची हुई थी। १९१९ में रौलट एक्ट पास हुआ और देश में क्रान्ति की लहर दौड़ने लगी। इसी समय पंजाब में मार्शल ला लगा। इन सबका असर जवाहरलाल जी पर हुआ। वह पिताके साथ राजसी साज पर लात मार कर देश की सेवाके लिए कूद पड़े। देशके लिये गरीबी धारण कर ली। और पिता-पुत्र दोनों ही महात्मा गांधी के दांये बांये हाथ रहे। १९२१ के बाद पिता-पुत्र दोनों ने ही अनेक बार जेल-यात्रा की, अनेकों कष्ट सहे। आपके सम्पूर्ण कुटुम्ब ने भी अनेकों कष्ट सहे।

आप कई साल तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के जनरल सेक्रेटरी के पद पर रहे। सन् १९२८ में इस राष्ट्रीय सभा के सभापति पं० मोतीलाल नेहरू हुए और सन् १९२९ में राष्ट्र की बागडोर पिता

ने पुत्र को दी। आपको इसीलिये "सुयोग्य पिता का सुयोग्य पुत्र" कहा जाता है। जवाहरलाल राष्ट्रपति बने। आपने प्रथमबार रावी तट पर पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा की। आप इस सभा के चार बार सभापति रह चुके हैं। ऐसा सौभाग्य किसी को भी प्राप्त नहीं हुआ है।

आपका सम्पूर्ण परिवार ही देश के लिए अपने को अर्पण कर चुका है। आपकी पत्नी कमला नेहरू भी अनेक बार जेल गईं यहां तक कि रुग्णावस्था में भी जेल-यात्रा की। आप अपने पति के पद-चिन्हों पर चलने वाली थीं। आपकी मृत्यु योरुप में हुई। पं० नेहरू आपकी मृत्यु के समय वहां पहुंचाये गये थे। आपकी बहिन विजय लक्ष्मी भारत में प्रथम महिला मंत्रिणी हुई और प्रथम महिला राजदूत होकर मास्को गई हैं।

त्यागमूर्ति

पं० जवाहरलाल त्याग की तो मूर्ति हैं। आपका जीवन राजा महाराजाओं की तरह बीत सकता था। परन्तु आपने सब-कुछ देश पर न्यौछावर कर दिया। आनन्द भवन जो कि सम्पूर्ण भारत देश में अपनी समता नहीं रखता है देश को अर्पण कर दिया। आपने अपना तन, मन, धन, सभी-कुछ देश को दे रक्खा है। इसी कारण लोग आपको त्याग-मूर्ति कहते हैं।

सन्तान

आपके एकमात्र पुत्री इन्दिरा है। यह भी सुयोग्य एवम् विदुषी रमणी हैं। इनका विवाह एक पारसी सज्जन फिरोज गांधी के साथ हुआ है।

प्रधानमंत्री

सन् ४२ के "भारत छोड़ो" आन्दोलन में यह जेल मे भेज दिए गए थे। जेल से छूटने के बाद ब्रिटिश पार्लियामेंट के तीन सदस्य जो भारत-समझौते के लिए आए हुए थे, उन्होंने आपसे समझौते की बात-चीत की। आप भारत की ओर से प्रतिनिधि थे। उससे पहले

आपने आजाद हिन्द फौज के सैनिकों को छुड़ाने के लिए देश व्यापी आन्दोलन किया। आप प्रथमवार अन्तर्कालीन सरकार के प्रधान-मन्त्री पद पर सुशोभित हुए और १५ अगस्त सन् १६४७ को भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त की। तब से आप स्वतन्त्र भारत के प्रधान-मन्त्री हैं।

आपने भारत को स्वतन्त्र कराने में अनेकों कष्ट सहे हैं। यद्यपि महात्मा गांधी से कई बातों पर आपका

उपसंहार

मतभेद था परन्तु कांग्रेस के सच्चे सिपाही होने के नाते उन्होंने महात्मा के प्रत्येक आदेश को माना। आप भारत के नवयुवकों के हृदय सम्राट् हैं। आजकल तो आप भारत के सर्वेसर्वा ही है। अपने प्रधान-मन्त्री से भारत को अनेकों आशायें हैं। ईश्वर इनको चिरायु करे।

रुपये की आत्म-कथा

लगभग सभी लोगों को यह तो अनुभव होगा ही कि प्रत्येक अपनी आत्म-कथा नहीं लिख सकता। आत्म कथा तो

विषय प्रवेश

केवल लब्ध प्रतिष्ठित ही लिख सकते हैं। और उनमें से मैं भी एक हूँ। मैं ऐसा दावा क्यों करता हूँ कि म बहुत प्रतिष्ठित हूँ। इसका कारण यह है कि मैंने संसार भ्रमण किया है और यह अनुभव किया है कि जिस किसी व्यक्ति से मैं मिला वह मुझ पर व मेरी आवाज पर मुग्ध हो गया। मैं अपनी इस छोटी-सी जीवनी में अपनी योग्यताओं का विवरण दूंगा जिसके कारण प्रत्येक प्राणी मुझ पर मुग्ध हो जाता है।

मेरा जन्म टकसाल में सन् १८८० में हुआ। मैं आज १०६ साल का हूँ। टकसालियों ने मेरा नाम करण संस्कार

जन्म

किया और मेरा नाम रुपया रक्खा। मुझे अपने बचपन की सभी घटनाएं अभी तक

अच्छी तरह स्मरण हैं। मैं बचपन में बहुत सुन्दर चमकीला था। प्रत्येक व्यक्ति मेरी सुन्दरता पर मुग्ध था। परन्तु अधिक लोगों के सम्पर्क से व कठोर यातनायें सहने से अब मेरा रंग काला पड़ गया है।

हां, तो मैं कह रहा था कि मैं बचपन में अपने साथियों के साथ टकसाल मे रहा। परन्तु मेरी बचपन से घूमने की बहुत इच्छा थी और एक दिन ऐसा भी आया कि मैं और साथियों सहित अपने संरक्षकों द्वारा बाहर लाया गया। बाहर तो विचित्र हालत थी। जिस को देखो वही मेरे व मेरे साथियों के सहयोग की इच्छा कर रहा है। क्या वकील, क्या व्यापारी, क्या प्रोफेसर, क्या क्लर्क प्रत्येक को मेरी चाहना है। मुझे मेरी इतनी आवभगत व प्रतिष्ठा देख कर हृदय में प्रसन्नता हुई। यहां तक मेरी प्रतिष्ठा हुई कि लोग अपने मां-बाप भाई बहिन आदि को भी भूल गए। कवियों ने यहां तक कह दिया कि "दादा बड़ा न भैया, सब से बड़ा रुपैया।"

हां, तो इस तरह मेरा घूमना शुरू हुआ। सर्व प्रथम तो मुझे बैंक में ले जाया गया। वहां पर मुझे तिजारी मे कैद रक्खा गया। मैं यह सब कैसे सह सकता था? जी बाहर जाने को छटपटाने लगा। भाग्य ने साथ दिया कि मुझे अन्य कुछ साथियों के साथ एक अच्छे कपड़े वाले बाबूजी को दे दिया गया। मुझे अपने और साथियों के बिछुड़ने से अत्यन्त दुःख हुआ परन्तु प्रसन्नता भी थी कि अब मैं ससार देखने जा रहा हूँ। बाबू मेरी सुन्दरता व आवाज पर मुग्ध था परन्तु वह मुझे अधिक देर तक अपने साथ न रख सका। उसे मिठाई की आवश्यकता थी और उसने मुझे एक मोटे हलवाई को दे दिया। हलवाई ने मुझे दो बार अपने लोह के सेर पर मारा और फिर बाबू को मिठाई दे दी। मुझे अपने पिटने पर अति क्रोध आया परन्तु हलवाई के यहां भी अधिक दिन न ठहर सका और एक दिन उसके बच्चे ने फीस में मुझे स्कूल मास्टर के यहा दे दिया। इसी तरह अब मैं दुनिया की सैर को निकला।

तब से मैं दुनिया का भ्रमण ही कर रहा हूँ। जो कोई मुझे पाता है मेरी बहुत प्रतिष्ठा करता है। कभी धोती में बांधता है, कभी जेब में रखता है कभी तिजोरी में बन्द करता है कभी बक्स में बन्द करता है, कहना यह है कि प्रत्येक व्यक्ति मेरी सङ्गत चाहता है और कोई भी मुझे छोड़ना नहीं चाहता। परन्तु मेरा नाम चञ्चल है। कभी मेरे पैर एक जगह नहीं टिकते। इधर-उधर घूमना ही मेरा काम है।

पर आप यह न समझिये कि मैंने कोई कठिनाई नहीं उठाई। एक बार मेरी जेल हो गई। सुनिये, कैसे? मैं एक कंजूस के हाथ पड़ गया और उसने मुझे नीचे जमीन में गाड़ दिया। वहां पर मैं सालों कैद रहा और यहां तक मेरा रङ्ग काला पड़ गया, परन्तु मुझे छोड़ा नहीं। एक बार उसकी लड़की का विवाह था और उस विवाह में उसे मेरी आवश्यकता पड़ी। मैं जेल से छूट गया और ईश्वर से प्रार्थना की कि मुझे फिर कभी जेल न देखनी पड़े।

यात्रा के अनुभव व उपसंहार

मैं अपनी यात्रा के अनुभव भी बतला दूं। जहां कहीं भी मैं गया, चाहे बम्बई चाहे कलकत्ता सब कहीं मनुष्यों ने मेरी बड़ी इज्जत की। मुझे सबने स्थान दिया। मेरे पीछे मनुष्य अपने प्राण तक न्योछावर करने को तैयार रहता था। एक बार एक व्यक्ति ने मेरे असली मालिक से मुझे छीन लिया मेरे मालिक ने उस व्यक्ति को ईंट मारकर घायल कर दिया। और पुलिस में कर दिया। इतना है मेरा मोह। कोई भी मुझे अपने से अलग करने को तैयार नहीं। मुझे सभी बहुत प्यार करते हैं।

अब भी मैं भ्रमण कर रहा हूँ। आजतक की आत्मकथा मैंने आपको सुना दी। न जाने इस जीवन का अन्त कब होगा परन्तु इतना जानता हूँ कि जब तक जीवित रहूँगा प्रत्येक व्यक्ति का प्यारा रहूँगा और सर्वदा सैर सपाटे करता रहूँगा।

महाराणा प्रताप

विषय प्रवेश

पृथ्वी कभी भी वीरों से खाली नहीं होती। मुगल सम्राट अकबर के समय में ऐसा प्रतीत होता था कि अब पृथ्वी पर वीर नहीं रहे। अकबर की धाक भारत पर ऐसी बैठी हुई थी कि समस्त भारतवर्ष में उसकी तूती बोल रही थी। ऐसे समय में राजस्थान में बप्पारावल के वंश में एक ऐसा वीर पैदा हुआ जिसने अकबर के अभिमान को ही चूर नहीं किया बल्कि अपने देश-धर्म व जाति के गौरव को भी अति ऊंचा कर दिया। उसका नाम महाराणा प्रतापसिंह था।

जन्म व कुल परिचय

महाराणा प्रताप का जन्म ६ मई १५४० को हुआ था। आपके पिता का नाम राणा उदयसिंह था और पितामह का नाम राणा संग्रामसिंह, जिनको इतिहास में राणा सांगा के नाम से पुकारते हैं। ये सभी मेवाड़ के शासक रहे हैं और चित्तौड़ इनकी राजधानी। इनका वंश सिसौदिया कहलाता था। इस वंश के राणा सदा से ही स्वतन्त्रता प्रिय व आत्माभिमानी रहे थे। युद्ध करना व मौत से खेलना तो इनका एक खेल मात्र होता था, राणा संग्रामसिंह के शरीर पर ८० घाव थे। राणा उदयसिंह के समय में चित्तौड़ जीत लिया गया था। उदयसिंह वहां से भाग निकला और उसने मेवाड़ में उदयपुर नामक नगर बसाकर उसको अपनी राजधानी बनाया। तब से उदयपुर ही मेवाड़ की राजधानी चला आ रहा है।

उस समय का राजपूताना

उस समय समस्त भारत में राजस्थान के ही हिन्दू राजपूत राजा राज करते थे। इनकी तलवार की धाक समस्त भारत में बैठी हुई थी, परन्तु अकबर ने कुछ ऐसी चाल से काम लिया कि समस्त राजपूताना

ने अकबर की स्वाधीनता स्वीकार कर ली। तक कि स्वयं महाराणा प्रताप के छोटे भाई शक्तिसिंह भी अकबर से जा मिले। बहुत से राजाओं ने तो अपनी लड़की भी अकबर को व्याह दी। ऐसे भीषण समय में जब कि कोई भी अपना कहने को नहीं था, सम्राट अकबर से वीर प्रताप ने टक्कर ली।

भीषण प्रतिज्ञा

गद्दी पर बैठने के उपरान्त ही महाराणा प्रताप ने भीषण प्रतिज्ञा की कि जब तक मैं चित्तौड़ को नहीं जीत लूंगा सोने चांदी के बरतनों में भोजन नहीं करूंगा, बिस्तरों पर नही सोऊंगा, मूंछों पर ताव न दूंगा आदि २। उन्होंने मृत्यु पर्यन्त अपनी प्रतिज्ञा को निभाया, समस्त राजसी साजों को छोड़ दिया। अब भी उदयपुर के महाराणा इस प्रतिज्ञा के फलस्वरूप सोने-चांदी के बरतनों के नीचे पत्तल रख लेते हैं और सुन्दर बिस्तरों के नीचे घास-फूंस बिछा लेते हैं।

हल्दी घाटी की लड़ाई

उस समय अकबर के दरबार में के जयपुर महाराज मानसिंह की अच्छी धाक थी। ये वीर सेनापति समझे जाते थे, इनकी बुआ अकबर को व्याही थी और बहन सलीम को। एक बार ये मेवाड़ गये, वहां महाराणा प्रताप ने इनका उचित सत्कार तो किया परन्तु भोजन के समय सिर दर्द का बहाना कर दिया। महाराजा मानसिंह चिढ़ गए और उन्होंने इसका बदला लेने की ठानी। उन्होंने दिल्ली जाकर बादशाह को मेवाड पर आक्रमण करने के लिए उत्साहित किया और बादशाह अकबर तो अवसर की खोज में था ही उसने सलीम के नेतृत्व में १ लाख सेना भेजदी।

सन् १५७० में हल्दी घाटी नामक स्थान पर राणा भी अपनी कुछ हजार वीर राजपूतों की सेना के साथ आ डटे। यहीं पर घोर लड़ाई हुई जिसमें कुछ ही घन्टों में ६४ हजार व्यक्ति मारे गए।

स्वयं महाराणा प्रताप ने बहुत वीरता दिखाई। लड़ते २ वे मानसिंह को खोजने के लिये आगे बढ़े और सलीम के हाथी के पास तक जा पहुँचे। अन्त में घायल हो गए और उनका प्यारा घोड़ा चेतक घायल होकर उन्हें युद्ध भूमि से भगा ले गया।

धीरे धीरे महाराणा प्रताप से मेवाड़ के सभी किले जाते रहे।

२५ वर्ष वनवास

परन्तु फिर भी इस स्वतन्त्रता प्रिय वीर ने अकबर की स्वाधीनता स्वीकार न की। महाराणा प्रताप, सभी किलों पर अकबर का अधिकार हो जाने के बाद घोर जंगलों में चले गये। इन जङ्गलों में २५ वर्ष तक वे दुर्गम पहाड़ों व निर्जन गुफाओं में भटकते फिरे। बादशाही सेना उनका हर स्थान पर पीछा करती थी। वे भी अवसर देखकर बादशाही सेना को नष्ट करने में पीछे नहीं हटते थे। इन जंगलों में उन्हें बहुत कष्टों का सामना करना पड़ा। सूखी रोटियों पर गुजारा करना पड़ता था और कभी २ वे भी नहीं मिलती थी। जंगलों में घास फूंस खाकर रहे, परन्तु वाह रे स्वतन्त्रता प्रिय वीर महाराणा प्रताप! आप धन्य हैं। अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए भी अकबर की अधीनता स्वीकार न की।

कहते हैं एक बार घास फूस की रोटियां बनाईं और बच्चे को दी गई उसी समय एक वन-बिलाव आया और लड़की से रोटी छीन कर भाग गया, लड़की रोने लगी। महाराणा का हृदय जो पत्थर से भी कठोर था द्रवित हो गया। उन्होंने अकबर के पास सन्धि-पत्र भेजा, परन्तु अकबर के दरबार में पृथ्वीराज जैसे राजपूत वीर ने इन्हें सचेत कर दिया और सन्धि-पत्र फाड़ दिया गया।

महाराणा प्रताप ने अन्त में निश्चय किया कि मेवाड़ भूमि छोड़

मेवाड़ विजय

देंगे परन्तु उनके मन्त्री भामाशाह ने असंख्य धन लाकर उनके चरणों में अर्पण कर दिया। उस धन से उन्होंने फिर सेना इकट्ठी

की और समस्त मेवाड़ विजय किया केवल चित्तौड़ विजय न हो सका।

महाराणा प्रताप क्षत्रिय वंश के थे। उनके अन्दर वीरता कूट-कूट कर भरी थी। वे सच्चे देशभक्त थे। देश के लिए अनेक कष्टों को उठाया और प्राणों की भी बाजी लगा दी। अन्त में वे विजयी भी हुए। वे त्यागमूर्ति थे व दृढ़ प्रतिज्ञ भी थे। जन्मभूमि की सेवा करने को वे तन, मन, धन से सर्वदा तैयार रहे। अनेक कष्टों को झेला। इस महावीर की मृत्यु १६ जनवरी सन् १५६७ मे हुई। मृत्यु के समय उन्हे केवल एक ही दुःख था कि अमरसिंह कहीं उनकी प्रतिज्ञा, चित्तौड़ विजय को न भूल जाय। परन्तु वीर राजपूत सरदारों ने उन्हे आश्वासन दिया कि वे मरते दम तक स्वतन्त्रता की रक्षा करेगे और चित्तौड़ विजय का प्रयत्न करेगे, तब वे सुख से चिर निद्रा में सो गये।

मृत्यु व उपसँहार

छत्रपति शिवाजी

महान राजनीतिज्ञ एवम् वीर शिवाजी को कौन नहीं जानता। इनके समय में मुगल साम्राज्य अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गया था। इस वीर ने उस साम्राज्य को ऐसा धक्का दिया कि फिर संभाले न संभल सका। इतिहासज्ञ कहा करते है वीर शिवाजी के कारण "पूना के घोड़ों ने सिन्धु का पानी पिया।"

विषय प्रवेश

इस हिन्दू-धर्म-रक्षक वीर शिरोमणि का जन्म सन् १६२७ में पूना के निकट हुआ था। इनके पिता का नाम शाहजी था ये बीजापुर सम्राट के यहां उच्च पदाधिकारी थे। शिवाजी की माता का नाम जीजाबाई था। इनके शिक्षक दादाजी कोणदेव थे व इनके अध्यात्म गुरू का नाम सन्त रामदास था।

जन्म व कुल परिचय

शिवीजी के पिता शाहजी की इच्छा थी वे वीजापुर सम्राट के यहां उनकी तरह ही एक उच्च पदाधिकारी हों। परन्तु शिवाजी पर उनकी माता जीजावाई का प्रभाव अधिक पड़ा। जीजावाई एक विदुषी, सुयोग्य और देश व धर्म भक्त स्त्री थी। उन्होंने बचपन से शिवाजी को हिन्दू धर्म-रक्षा के लिए राज्य स्थापन की शिक्षा दी। दादा कोणदेव व सन्त रामदास का भी उनके ऊपर अधिक प्रभाव पड़ा। सन्त रामदास ने जननी व जन्म-भूमि की रक्षा के लिये उभारा। दादा कोणदेव ने इन्हें महान राजनीतिज्ञ बना दिया।

शिवाजी पर प्रभाव।

उस समय समस्त भारत पर मुसलमान अत्याचार कर रहे थे। हिन्दुओं के चोटी व जनेऊ छीने जा रहे थे। कहते हैं कि बादशाह औरङ्गजेब ने ७४ मन जनेऊ तुलवाये थे। गऊएं काटी जा रही थ। कहना यह कि समस्त भारत मुसलमानी अत्याचारों से पदाक्रान्त था। इस समय का प्रभाव भी शिवाजी पर पड़ा।

इस समय का भारत

शिवाजी ने लगभग वीस साल की अवस्था तक दादा कोणदेव से शिक्षा ग्रहण की। उन्होंने अस्त्र-शस्त्र चलाना, कुश्ती लड़ना, घोड़े की सवारी करना, सैन्य-संगठन करना व युद्ध मे विजय के तरीके सीख लिये। राजनीति की शिक्षा भी दादा कोणदेव से ग्रहण की।

शिक्षा

युद्ध विशारद शिवाजी ने मावली वीरों को इकट्ठा किया। जनता ने शिवाजी की सहायता की। वीर शिवाजी ने वीजापुर के किलों पर धावा बोलना आरम्भ कर दिया। धीरे २ उन्होंने कई किले अधिकार

वीजापुर नरेश व

अफजल खां

में कर लिए। बीजापुर सम्राट ने अपने कूट-नीतिज्ञ सरदार अफजल खां को शिवाजी को पकड़ने भेजा। इधर शिवाजी भी अफजल खां की घात में थे। अफजल खां ने शिवाजी से सन्धि करने का प्रस्ताव किया और मिलने की इच्छा प्रकट की। शिवाजी समझ गये, वे राजी हो गये। उन्होंने नीचे कवच आदि धारण किए व ऊपर साधारण कपड़े पहिने और हाथ में बाघनखा नामक अस्त्र छिपा कर ले गये। अफजल खां अवसर की ताक में था परन्तु वीर शिवाजी ने अवसर न दिया। जैसे ही अफजल खां मिलने को हुआ शिवाजी ने उसे बाघनखा से मार दिया। इधर-उधर छिपी हुई मराठी सेना ने मुसलमानों पर आक्रमण कर दिया। मुसलमानी सेना भाग गई। शिवाजी की विजय हुई।

शायस्ताखां से युद्ध

उस समय भारत में मुगल सम्राट औरङ्गजेब का राज्य था। वीर शिवाजी ने औरङ्गजेब से टक्कर लेना शुरू किया औरङ्गजेब ने अपने वीर सेनापति शायस्त खां को इनको वश मे करने भेजा। साथ में राजा जसवन्तसिंह भी आये। शायस्ता खां ने आते ही पूना पर अधिकार कर लिया। शिवाजी एक रात को बरात बनाकर पूना गये और वहां शायस्ताखां के महल पर हमला कर दिया। शायस्ताखां भाग निकला।

शिवाजी का नजरबन्द होना व छूटना

शायस्ताखां के हारने पर औरङ्गजेब घबड़ा गया। उसने अपने सबसे बड़े योद्धा जयसिंह को विजय करने भेजा। महाराज जयसिंह माने हुए वीर थे। इधर शिवाजी हिन्दुओं से युद्ध करना नहीं चाहते थे। उन्होंने महाराज जयसिंह से सन्धि कर ली। इस सन्धि समाचार से प्रसन्न होकर शिवाजी को औरंगजेब ने आगरे आने का निमन्त्रण दिया। जब

शिवाजी आगरे पहुँचे तो औरंगजेब ने उन्हें कैद कर लिया। शिवाजी भी कम चतुर न थे। वे मिठाई की टोकरी में बैठ कर निकल भागे।

शिवाजी फिर दक्षिण पहुँचे और औरङ्गजेब के कई दुर्ग जीत लिये। अब शिवाजी हर तरह शक्तिशाली हो गये, बीजापुर नरेश ने उनकी स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार की। सन् १६७४ में वीर शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ। कितने दुर्गों पर उन्होंने अपना अधिकार कर लिया, छत्रपति की उपाधि धारण की। इनका दक्षिण मे खूब दबदबा बैठ गया।

राजा बनना

शिवाजी का राज्य प्रबन्ध अति उत्तम था। शासन करने के लिये उन्होंने सभा बनाई थी जिस का नाम 'अष्ट प्रधान' था, इसके प्रत्येक सदस्य के अधिकार में एक विभाग था। इनकी राज्य प्रबन्ध की कुशलता के कारण ही मराठा राज्य इतना सुदृढ़ हो गया कि आगे चल कर दिल्ली का राज्य भी छीन लिया।

राज्य प्रबन्ध

शिवाजी ने अपने जीवन में अनेक लड़ाइयां लड़ीं। वे एक साधारण जागीरदार के यहां पैदा हुए थे। परन्तु अपने बाहुबल व योग्यता के कारण अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। अधिकतर लड़ाइयों में रहते हुए भी इनका शासन प्रबन्ध अति उत्तम था। इन मे धार्मिक असहिष्णुता का लेश भी नहीं था, इन्होंने कभी भी एक मस्जिद तक न गिरायी। ये सच्चरित्र भी उच्चकोटि के थे। शत्रु की स्त्रियों के साथ सद्व्यवहार करते और उनको यथास्थान पहुँचा देते थे। साहस-दृढ़ता और उत्साह उनकी रग-रग में भरा था। वे दूरदर्शी भी थे। धर्म पर उनका दृढ़ विश्वास था। इस महान राजनीतिज्ञ की मृत्यु सन् १६८० में ५३ वर्ष की आयु में हो गई।

उपसंहार

गोस्वामी तुलसीदास

जन्म व कुल परिचय

कविकुल शिरोमणि, भक्तवर, गोस्वामी तुलसीदास को, जिनकी कविता का आदर आज भारत के घर-घर में है कौन नहीं जानता। परन्तु उनके जीवन के विषय में अधिकतर ज्ञात नहीं। जो कुछ भी हमें ज्ञात है या तो जनश्रुतियों के आधार पर या स्वयं उनके स्फुट पदों द्वारा। गोस्वामीजी का जन्म संवत १५८९ विक्रम राजापुर ग्राम में हुआ था। राजापुर बांदा जिले में है। कुछ विद्वानों का कथन है कि सोरों में पैदा हुये थे। परन्तु यह प्रमाणिक नहीं माना जाता। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे व माता का नाम हुलसी था। रहीम ने कहा है

सुरतिय, नरतिय नागतिय सब चाहत अस होय।
गोद लिये हुलसी फिरे तुलसी सों सुत होय॥

इनका बचपन का नाम रामबोला था।

शिक्षा

कवि श्रेष्ठ तुलसीदास के गुरु का नाम नरहरिदास था। ऐसा उन्होंने स्वयं लिखा है। "बन्दऊ गुरुपद कंज कृपासिन्धु नर रूप हरि"। इन्हीं नरहरिदास जी ने इनको राम की कथा सुनाई थी। उस समय के प्रसिद्ध विद्वान शेष सनातन जी से इन्होंने वेद, वेदांग, दर्शन इतिहास, पुराण आदि पढ़े थे।

विवाह

गोस्वामी जी का विवाह बचपन में ही हो गया था। कहा जाता है कि इनको अपनी स्त्री से अत्यधिक प्रेम था। एक बार वह मायके बिना पूछे चली गई। ये भी उसके पीछे वहाँ पहुँच गये। इस पर उनकी स्त्री को लज्जा आई और कहा

लाज न लागत आपको, दौरे आयहु साथ।
धिक धिक ऐसे प्रेम को, कहा कहौ मैं नाथ॥

अस्थि चर्ममय देह मम, ता में जैसी प्रीति।
तैसी जो श्रीराम मे, होति न तब भय भीति॥

बस, इसी बात पर गुसाईं जी ने घर त्याग दिया। प्रेम की सरिता जो तुलसी के हृदय मे बह रही थी, उसने रुख पलट दिया। अब श्रीराम की ओर बहने लगी।

कवि तुलसीदास

श्रीराम की ओर अपने प्रवाह बदलकर उन्होंने कविता का आश्रय लिया। इसी कविता के कारण तुलसी दास जी संसार के सर्व श्रेष्ठ कवियों मे गिने जाते हैं। उनका सबसे बड़ा ग्रन्थ राम चरित मानस है।

यह ग्रंथ उन्होंने अवधीभाषा मे दोहे व चौपाई मे लिखा है। इसमे श्रीराम की आद्योपान्त कथा है। यह ग्रंथ लगभग सभी हिन्दुओं के पास पाया जाता है। लगभग सभी हिन्दुओं को इसकी बहुत सी चौपाईयां कंठस्थ याद होती हैं। इस ग्रंथ ने तुलसीदास जी को अमर कर दिया है। यह ग्रंथ हिन्दुओं का धार्मिक ग्रंथ है। इस ग्रंथ के अतिरिक्त तुलसीदास जी ने लगभग १२ ग्रंथ और भी बनाये। जिन में विनय पत्रिका, गीतावली, जानकी मंगल, पार्वती मंगल, दोहावली बरवै रामायण आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अवधी व ब्रज भाषा दोनों मे लिखा। जीवन के प्रत्येक पहलू को लिखा। ये हिन्दी के सर्व श्रेष्ठ व भारतीय जनता के प्रतिनिधि कवि थे। आज सैकड़ों वर्ष उपरांत भी इनकी कवितायें राजा से लेकर रंक तक बड़े चाव से पढ़ते हैं। राम चरित मानस की एक प्रति प्रत्येक हिन्दू के यहां दिखाई देगी। जीवन की अनेक समस्याओं को सुलझाने के लिये लोग इनकी इस पुस्तक का सहारा लेते हैं।

मृत्यु

इस महान कवि व भक्त की कीर्ति युग-युग तक रहेगी। इनकी मृत्यु संवत १६८० में असी घाट काशी जी में हुई। इनकी मृत्यु के विषय मे निम्नलिखित दोहा बहुत प्रसिद्ध है।

संवत सोलह सौ असी, असी गंग के तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर॥

मीराबाई

विषय प्रवेश — भक्त शिरोमणि मीरा का हिन्दी जगत सदा आभारी रहेगा। इन्होंने साहित्य के 'भक्त-काल' में अपनी कविता रूपी सरिता को वहाया था। स्त्री कवियों में तो ये सर्व श्रेष्ठ समझी जाती हैं।

मीरा का जन्म, जन्म व कुल परिचय — संवत १५५५ से १५६० के बीच माना जाता है। इनके पिता का नाम राठौर रतन सिंह था। ये अपने मां बाप की इकलौती पुत्री थी। इनके पिता मेडता प्रांत के जागीरदार थे। बचपन से ही मीरा का ध्यान भक्ति की ओर अधिक था। ये बचपन में भी गुड्डे-गुड़ियों से खेल नहीं खेलती थी बल्कि एक साधु द्वारा प्राप्त गिरधारी जी की मूर्ति की पूजा किया करती थी। इनके पितामह राव बूंदा जी भी अनन्य भक्त थे। उनके साथ रहने से मीराबाई के ऊपर भक्ति का रंग और भी चढ़ गया।

विवाह — मीरा का विवाह सवत् १५७३ चित्तौड़ के महाराजा सांगा के पुत्र कुंवर भोजराज के साथ हुआ था। ये चित्तौड़ में मेड़तनी रानी के नाम से प्रसिद्ध थी क्योंकि ये मेड़ता प्रान्त की रहने वाला थी। कुंवर भोज-राज भावी राणा थे। इस कारण मीरा का जीवन सुखमय था, परन्तु "करम गति टारे नाहिं टरै" मीरा विधवा हो गई। अभी विवाह को कुछ ही वर्ष व्यतीत हुए थे।

मीरा के इस आघात के कारण बचपन में लगे भक्ति के अंकुर

जीवन की अन्य घटनायें

..ा सींचना आरम्भ कर दिया। मेवाड़ की भावी महारानी अपनी इच्छा से लोक-लाज छोड़ बैठी। इनका आचार व्यवहार सभी कुछ साधुओं का सा हो गया। साधु-सन्तों को ये अपने यहाँ बुलाती और उनके साथ सत्संग व कीर्तन करती। यह मेवाड़ के राजकुमार विक्रमाजीत को बिलकुल पसन्द नहीं था कि राजमहल में साधु सन्यासियों की भीड़ रहे। इससे राजकुल की मर्यादा नष्ट होने का भय था। परन्तु जिसका यह मत हो वह किस की बात क्यों माने ?

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई।
सन्तन ढिग बैठ २ लोक-लाज खोई।"

विक्रमाजीत ने इनके विचारों को बदलने के लिए अनेक उपाय किये परन्तु सफल न हुए अन्त में उन्होंने विष का प्याला चरणामृत कह कर भेजा। मीरा इतनी भक्ति के रङ्ग में रङ्गी हुई थी कि उस प्याले को पी गई और कुछ न हुआ। फिर एक पिटारी सांप रख कर भेजी और कहा कि इसमें सालिग्राम हैं। पिटारा खोल नें पर उसमें ठीक सालिग्राम निकले। ये उनकी भक्ति का प्रभाव था।

इनके घरवालों ने इन्हें बहुत दुःख दिये, तब इन्होंने एक पत्र भक्त शिरोमणि तुलसीदास जी को लिखा और उनसे सलाह मांगी।

घर के स्वजन हमारे जेते सबन उपाधि बढ़ाई।
साधू सङ्ग और भजन करत मोइ देते क्लेश महाई॥
हमको कह करिबो है अब सो लिखिये सब समझाई।

गोस्वामी जी ने उन्हें उत्तर दिया कि

जा कहँ प्रिय न राम वैदेही।
तजिये ताय कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही॥

इस उत्तर को पाकर उन्होंने चित्तौड़ को छोड़ दिया। सर्व प्रथम

के अपने साथ के मेड़ता प्रांत गईं, परन्तु वहां भी अधिक दिन न रहीं। वे तीर्थयात्रा को निकल पड़ीं।

पहले वृन्दावन गईं वहां वह कुछ समय ठहरीं, फिर वहां से वह द्वारिका गईं और वहीं पर बस गईं। वहां पर रणछोड़ जी का मन्दिर था उसी मन्दिर की सेवा-पूजा में वह दिन-रात बिताने लगीं।

द्वारिका ही में इनकी मृत्यु हुई। कहते हैं इनकी मृत्यु १६२० और १६३० के बीच में हुई।

कवियत्री मीरा

मीरा का मान कवयित्री होने के कारण अधिक है। वह भारतीय नारियों में कवि शिरोमणि मानी जाती है। क्योंकि वह अधिक पढ़ी लिखी हुई नहीं थी। इस कारण इनकी भाषा बहुत सुन्दर नहीं है परन्तु भाव बहुत सुन्दर है। इनकी भाषा में राजस्थानी अधिक है। सभी भजन भक्ति रस से ओत प्रोत हैं। इन्होंने कुछ गीतमय काव्य की रचना भी की। जिसमें 'नरसी जी का मायरा' व 'राग गोविन्द' बहुत प्रसिद्ध हैं। इनके गुरु का नाम भक्तवर रैदास था। यद्यपि रैदास जाति के चमार थे परन्तु मीरा के लिए जाति-पांति का कोई भेदभाव नहीं था। मीरा के भजन बहुत ही लोकप्रिय हैं। यह हिन्दी साहित्य की अमर निधि है। इनकी भक्ति रस से ओत-प्रोत कविता जब तक हिन्दी साहित्य की शोभा को बढ़ाती रहेगी, भक्त कवयित्री मीरा तब तक अमर रहेंगी।

विवेचनात्मक लेख
ईश्वर भक्ति

भूमिका

उस परम पिता परमेश्वर का किसी भी प्रकार स्मरण करना ईश्वर भक्ति कहलाता है। इस सृष्टि को बनाने वाली, रक्षा करने वाली एवम् नष्ट करने वाली एक सर्वशक्तिमान् शक्ति है, जिसे हम परमात्मा ईश्वर, भगवान्, अल्ला, गोड़ आदि अनेक नामों से पुकारते हैं। सब अपनी २ श्रद्धा के अनुसार उसको भक्ति करते हैं। यहां तक कि नास्तिक भी जो परमात्मा का अस्तित्व ही नहीं मानते कठिनाई में फंसकर याद कर बैठते हैं।

ईश्वर भक्ति क्यों की जाती है

आज इस विज्ञान के युग में प्रत्येक बात तर्क द्वारा मानी जाती है। प्रश्न उठता है कि भक्ति क्यों की जाती है। भक्ति का कारण केवल यह दिखाई देता है कि हमारे ऊपर एक अदृष्ट सत्ता है जो कि संसार में प्रत्येक स्पंदन में कार्य करती है। किसी ने कहा है कि

तेरी सत्ता के बिना, हे प्रभु मंगल मूल।
पत्ता तक हिलता नहीं खिले न कोई फूल।

उसी सत्ता के द्वारा हमारी रक्षा होती है। वही सत्ता सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, सबसे बड़ी. सबकी शासक है। उसी सत्ता को ईश्वर या परमात्मा कहते है और सब शक्तियों से पूरित होने के कारण हम उसकी उपासना करते हैं।

एक अदृष्ट वस्तु का जिसका रूप व आकार हमारी बुद्धि से परे की वस्तु हो हम उसका ध्यान नहीं कर सकते।

ईश्वर भक्ति कैसे की जाती है

हैं ग्रहण करने के लिये अवश्य एक रूप या आकार की आवश्यकता होती है। यह रूप या आकार हम अपनी बुद्धि के अनुसार अपने अनुरूप बनाते हैं या उस महान व्यक्ति को, जिसमें संसार के जन साधारण से अधिक गुण हों और जिसका आदर्श हमें परमात्मा के निकट लाता है, देते हैं। हम उसको ईश्वर रूप समझ लेते हैं। इसी कारण से हिन्दुओं में राम कृष्ण को परमात्मा का अवतार माना जाता है।

जब हमारे सन्मुख ईश्वर का रूप आ जाय तो उसकी उपासना करना कठिन नहीं होता। उपासना करने के कई ढङ्ग होते हैं। प्रत्येक ढङ्ग का तात्पर्य ईश्वर को प्रसन्न करना और उसके सन्निकट पहुंचना होता है।

हिन्दुओं मे प्रचलित प्रथम ढङ्ग स्मरण है। जिसको भजन करना कहते है। इस ढङ्ग में व्यक्ति ईश्वर का स्मरण हृदय से करता है व मुख से ईश्वर का नाम उच्चारण करता है और ईश्वर की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करता है। परन्तु यदि ईश्वर का नाम मनुष्य मुख से लेता रहे और शुभ कर्म न करे तो ऐसी ईश्वर भक्ति निरर्थक होती हैं। साधारणतया देखा जाता है कि हाथ मे माला लेकर मनुष्य राम नाम लेते रहते हैं और उनके आदर्श सिद्धान्तो पर ध्यान नहीं देते यह उचित नहीं है।

दूसरा ढङ्ग पूजा का है। इसको बहुत से धर्म ढोंग और बुरा समझते है। हिन्दू धर्म में इसको उत्तम समझा जाता है। मुसलमान इसको बुतपरस्ती कहते है। इसमे हिन्दू लोग परमात्मा की मूर्ति बना लेते है और उस मूर्ति की पूजा करते है। हिन्दुओं मे भी जो आर्यसमाज के अनुयायी है वे मूर्तिपूजा के विरोधी है कुछ भी हो इस ढंग से भी मनुष्य परमात्मा का ध्यान कर सकता है।

तृतीय ढङ्ग जो सबसे उत्तम व सब धर्मों मे माननीय है कि उन

कामों को करना जिससे ईश्वर प्रसन्न हो। जैसे दया, दान, सेवा, जप, न्याय, सच बोलना आदि हैं। अगर मनुष्य ईश्वर पर अटल विश्वास करके और उसके बताये सत्कर्मों को करता चले तो निःसंदेह ईश्वर प्रसन्न होता है। यही सच्ची उपासना है। संसार के प्रचलित प्रत्येक धर्म इन सभी सिद्धान्तों को मानता है, साथ में एक और भी बात है। इन उत्तम कार्यों के करने पर फल प्राप्त करने का लालच न रखे, नहीं तो स्वार्थ हो जायेगा और इस तरह की उपासना निरर्थक हो जायगी।

ईश्वर भक्ति करने के और भी ढंग हैं, जैसे योग तीर्थ आदि करना कथा आदि सुनना। परन्तु यदि यह सब करने के उपरान्त मनुष्यों को आध्यात्मिक लाभ नहीं होता तो यह सब ही निरर्थक है।

उपसंहार

ईश्वर भक्ति को कभी भी यह सोच कर नहीं करना चाहिये कि ऐसा करने से हमें मोक्ष की प्राप्ति होगी अथवा अपार धन राशि मिलेगी अथवा हम संसार के कष्टों से छुटकारा पाजायेंगे। ईश्वर न्यायकारी है, वह खुशामद प्रिय नहीं। समय पर न्यायानुसार तुम्हें फल अवश्य मिलेगा। निःस्वार्थभाव से अपने कार्य करते हुए ईश्वर की उपासना करनी चाहिये। ईश्वर द्वारा प्रेरित उत्तम बातों को अवश्य मानना चाहिये. जैसे असत्य से दूर रहना, सेवा करना आदि। ईश्वर भक्ति का मुख्य ध्येय होता है कि अपने को संसार की बुराई से परे रखना जो मनुष्य अपने को जितने समय कल्पित भावनाओं से परे रख सकता है, वह मनुष्य उतना ही ईश्वर के निकट पहुँच जाता है और उसे उतनी ही ईश्वर भक्ति का फल मिलता है।

आज्ञापालन

भूमिका

गुरुजन हमसे जो करने के लिए कहते हैं उसे आज्ञा कहते हैं और उस आज्ञा के अनुसार काम करने को आज्ञापालन कहते हैं। गुरुजन से प्रयोजन उन व्यक्तियों से है, जो हम से अवस्था, अनुभव या पद में बड़े हैं। मां, बाप, बड़े भाई, पति, सेनानायक आदि सभी अपने से बड़े माने जाते हैं और इन सभी की आज्ञा पालन करनी चाहिये।

आज्ञापालन या आत्मसमर्पण

बहुत से छोटे बच्चे और कुछ बड़े भी आज्ञा पालन का अर्थ आत्मसमर्पण समझते हैं और किसी की आज्ञा पालन करना अपनी कायरता व कमजोरी मानते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं है। बड़ों की आज्ञा भले ही अनुचित हो, अवश्य माननी चाहिये। ये आज्ञायें हमें कायर अथवा कमजोर समझ कर नहीं दी जातीं। ये तो हमें उचित रास्ते पर लाने के लिये व हमें अनुशासन तथा एकता के सूत्र में बांधने के लिये दी जाती हैं। कायरता या आत्मसमर्पण तो वहां होता है, जहां पर कि शत्रु द्वारा दी गई आज्ञा अपने ही विरुद्ध मान ली जाय।

अनुचित व उचित आज्ञा

अब प्रश्न उठता है कि क्या बड़ों द्वारा दी गई प्रत्येक आज्ञा का पालन करना चाहिये, भले ही वह अनुचित क्यों न हो। इसका उत्तर स्पष्ट है। प्रथम तो बड़े गुरुजन अनुचित आज्ञा देते ही नहीं हैं। यदि दें तो अनौचित्य बतला देना चाहिये। यदि फिर भी आज्ञा दें तो आज्ञा अवश्य माननी चाहिये। इसमें हानि आज्ञा देने वाले की है। मानने वाले की नहीं। जहां आज्ञा धर्म के सर्वथा विरुद्ध हो वहां पर उस आज्ञा का विरोध करना

चाहिये। जहां थोड़ी वहुत हानि हो वहां पर अनौचित्य बतलाकर उस आज्ञा का पालन करना चाहिये।

वहुत से व्यक्ति अपने से छोटी अवस्था वाले व्यक्तियों की दी गई आज्ञा का पालन अनुचित समझते हैं। उसे वे अनादर समझते हैं व मर्यादा-उल्लंघन समझते हैं। वास्तव में अगर कोई छोटी अवस्था वाला व्यक्ति विना किसी वड़े पद पर हुये कोई आज्ञा देता है तो वह अनुचित है। यदि कोई छोटी अवस्था वाला व्यक्ति वड़े पद पर है तो आज्ञा का पालना सर्वथा उचित है। सेना में सेनानायक चाहे किसी अवस्था का हो उसकी आज्ञा का पालना सर्वदा किया जाता है। कार्यालय में अफसर अपने मातहत को आज्ञा दे सकता है परन्तु वही मातहत किसी सभा का सभापति होने पर अफसर को भी आज्ञा दे सकता है। सेना में सेनानायक अपने वड़े भाई को भी आज्ञा दे सकता है।

आज्ञा से लाभ

आज्ञा पालन से अनेकानेक लाभ हैं। हमारे गुरुजन हमें अपने अनुभवों से परिपूर्ण आज्ञा देते हैं। वे अवस्था में वड़े होते हैं। संसार की अनेक उलझनों से निकले हुए होते हैं। उन्हें वहुत अनुभव होता है और उनके अनुभव से हम अनेक कठिनाइयों से वच जाते हैं। आज्ञापालन से हमें अनुशासन में रहना आता है और अनुशासन होने के कारण हम अपनी इच्छाओं पर भी शासन करना सीखते हैं। आज्ञापालन से आलस्य दूर हो जाता है और शरीर में स्फूर्ति आती है। आज्ञापालन एकता के सूत्र में वांधने वाला है। एक व्यक्ति को अधिकार होता है कि वह कई व्यक्तियों को आज्ञा दे सके। इससे उसकी आज्ञा को पालन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति आपस में एकता का अनुभव करता है। जिस समाज में आज्ञापालन को महत्व नहीं दिया जाता वह समाज अव्यवस्थित होता है। प्रत्येक व्यक्ति नेता या आज्ञा देने वाला नहीं वन सकता। यदि कई नेता वन जावें तो विचार विभिन्नता के कारण एक सूत्र में नहीं वंध सकते। इस कारण

एक नेता की आज्ञा का पालनकर समाजकी उन्नति करनी चाहिये। जिस कुटुम्ब में आज्ञापालन की कमी होती है और बड़ों का अनादर होता है वह कुटुम्ब कभी पनप नहीं सकता। आज्ञापालन करने से बड़ों का बड़प्पन रह जाता है और छोटे कर्तव्य पालन कर प्रसन्न होते हैं। आज्ञापालन से ही मनुष्य की शिक्षा का पता चलता है। जो व्यक्ति स्वयं आज्ञा पालन नहीं कर सकते वह दूसरे से भी नहीं करा सकते

उपसंहार

मनुष्य को उन्नति करने के लिये आवश्यक है कि वह आज्ञापालन करे। आज्ञापालन द्वारा जो अपने को नीचे बनाता है, वही पीछे से ऊंचा उठकर श्रेष्ठ पद पाता है। भारतवर्ष में आज्ञापालन के श्रेष्ठतम उदाहरण मौजूद हैं मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी अपने पिता की आज्ञा पर साम्राज्य को लात मार १४ वर्ष वनवास मे रहे। कठोर प्रतिज्ञा करने वाले भीष्म भी पिता की इच्छा समझ आजन्म ब्रह्मचारी रहे वीर ब्रह्मचारी परशुराम ने पिता की आज्ञा पर माता का वध कर दिया था। इन नर रत्नों का नाम अमर है। इन व्यक्तियों से देश का मान था। इसी से आज्ञापालन का महत्व बहुत अधिक है।

एकता

विषय प्रवेश

यदि बहुत से व्यक्ति एक उद्देश्य के लिये एकत्रित होकर कार्य करें और परस्पर एक दूसरे की सहायता करें तो उसे एकता कहते हैं।एकता रहने से मनुष्य, जाति और राष्ट्र उन्नति के शिखर पर पहुँच जाते हैं।

एकता का बल

छोटी २ कक्षाओं मे पढ़ते समय एक बुड्ढे तथा उसके लड़कों की कहानी पढ़ी होगी। बुड्ढे की मृत्यु के समय उसके लड़के लड़ने लगे तो उसने बुलाकर छोटी २ लकड़ियों के बंधे हुये गट्ठर को तोड़ने के लिए कहा। परन्तु किसी से न टूटा। फि

अलग २ कर तोड़ने को कहा तो प्रत्येक ने एक २ लकडी तोड़ दी। इस उदाहरण से लड़कों की बुद्धि में एकता का बल समझ में आ गया। चींटी कितना छोटा सा प्राणी है परन्तु जब वे एकत्रित होकर बड़े से बड़े कीड़े को उठाने का प्रयत्न करती हैं तो उठा ले जाती हैं। तिनका कितना छोटा होता है परन्तु जब ये ही तिनके मिल कर रस्सी के रूप में परिणत हो जाते हैं तो बलवान् हाथी को भी बांध लेते हैं। छोटी-छोटी बूंदें आकाश से एक २ करके गिरती हैं परन्तु पृथ्वी पर आकर वे ही बूंदें एक नदी का रूप धारण कर लेती हैं। इन सब उदाहरणों से एकता का बल समझ में आ गया होगा।

जिन देशों में आज फूट है, वे ही देश अवनति के गर्त में पड़े हुये हैं। जिन देशों में एकता है वे भले ही छोटे हों परन्तु उन्नति के शिखर पर पहुँचे हुये हैं। उनका व्यापार, शिक्षा, यहां तक कि साम्राज्य भी उन्नत अवस्था में है। यह कहा जाता है कि ब्रिटिश साम्राज्य में सूर्य नहीं छिपता। बर्तानिया देश एक छोटा सा देश है। उसका इतना बृहद् साम्राज्य देख कर आश्चर्य होता है परन्तु यह एकता का बल है। दूसरी ओर भारत एक बृहद् देश है जन संख्या भी अधिक है परन्तु यहां फूट है। पृथ्वीराज व जयचन्द की फूट के कारण ही मुहम्मद गोरी ने भारतवर्ष का राज्य छीना और फूट के कारण वह युग तक परतन्त्र रहा व अनेक कष्ट सहे।

इस प्रकार उदाहरणों से पता चलता है कि एकता की कितनी आवश्यकता है। यह एक अमूल्य वस्तु है।

एकता की सर्व व्यापकता

यदि हम ध्यान पूर्वक विचार करें तो हमें मालूम होगा कि सृष्टि के प्रत्येक अणु में एकता विराजमान है। प्रकृति क्या वस्तु है? यह अनेक वस्तुओं का मेल है। हमारा शरीर पांच तत्वों से मिल कर बनी है। हम एक पेड़ को जंगल नहीं कह सकते या एक फूल को बाग नहीं कह सकते। जंगल वही है, जहां पर बहुत से पेड़ हों और बाग वही है, जहां अनेक तरह के अनेक फूल हों।

यदि मनुष्य स्वयं अपने जीवन के ऊपर दृष्टि डाले तो उसे मालूम होगा कि उसे पग २ में दूसरे की सहायता की आवश्यकता पड़ती है। दिन रात उसे एकता की आवश्यकता रहती है। उसका कुटुम्ब घरवार सभी तो एकता के सूत्र में बंधे हुये हैं।

जीवन में एकता

बिना एकता के मनुष्य कभी सुखी रह नहीं सकता। यदि पति-पत्नि भाई-बहिन, पिता पुत्र व अन्य सम्बन्धियों में एकता न हो तो फूट और कलह होगी, इस फूट और कलह से ही सर्वनाश होता है। रावण और विभीषण की फूट सभी जानते हैं। और इसी भाई २ की फूट ने सोने की लंका को खाक में मिला दिया।

जब यह निश्चय है कि मनुष्य दूसरों की सहायता के बिना अपने जीवन में सफल नहीं हो सकता तो बुद्धिमत्ता इसीमे है कि वह दूसरों को वना कर रक्खे। जिसके पास जितने सहायक होंगे अथवा ऐसा कहिये जितने मित्र होंगे वही अपने जीवन मे उतना ही अधिक सफल होगा। जो व्यक्ति मित्रहीन होगा उसकी पराजय निश्चित है। वह कभी भी जीवन संग्राम मे सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

एकता को प्राप्त करने के लिये तथा स्थिर रखने के लिये सबसे प्रथम मनुष्य को अपना स्वार्थ छोड़ देना चाहिये। जहां स्वार्थ को स्थान दिया, वहां एकता उड़ जाती है। मनुष्य को मधुरभाषी भी होना अत्यन्त आवश्यक है। कुटिलता से एकता बहुत दूर होती है। सहनशीलता, सत्य एवं धैर्य भी एकता को स्थिर रखने के लिये परम आवश्यक है। यदि इन मे किसी को भी हाथ से छोड़ा तो समझ लीजिये कि एकता गई। इन सभी बातों को ध्यान मे रखकर जो व्यक्ति एकता प्राप्त करते हैं, निःसन्देह वह व्यक्ति अपने जीवन-संग्राम में सफल होते और उन्नति के शिखर पर बैठते हैं।

उपसंहार

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का वास्तविक अर्थ है कि वीर्य की रक्षा करना। वीर्य शरीर में सार वस्तु है। इसके स्खलित हो जाने पर शरीर मे कमजोरी, मस्तिष्क में बुद्धि की कमी आती है। मनुष्य निस्तेज हो जाता है तथा शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है। इसी कारण प्राचीन ऋषि मुनियों ने ब्रह्मचारी की महिमा का खूब वर्णन किया है। उन्होंने ब्रह्मचारी की महत्ता को स्वीकार किया है और सभी व्यक्तियों से ब्रह्मचारी को सर्वश्रेष्ठ आसन दिया है।

विषय प्रवेश

प्राचीन समय में ऋषि व मुनियों ने मनुष्य जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व संन्यास। ब्रह्मचर्य आश्रम मे बालक गुरु के पास पढ़ने भेज दिया जाता था। वहां पर वह २५ वर्ष तक अखंड ब्रह्मचारी रह कर विद्याध्ययन करता था। इसी समय वह अपने सम्पूर्ण जीवन को बनाता था। ब्रह्मचारी रहने के कारण उस मे विद्या का विकास होता था। बुद्धि की तीव्रता होती थी और वह अपने जीवन में पूर्णतया सफल होता था। आजकल समाज में कुछ ऐसी त्रुटियां आ गई हैं कि गुरु के पास भेजकर बालक को इतने समय तक नहीं रखा जा सकता परन्तु यदि मनुष्य प्रयत्न करे तो अपने जीवन में अधिक से अधिक वर्ष तक ब्रह्मचारी रह सकता है।

प्राचीन पद्धति

प्रत्येक मनुष्य को कम से कम २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी अवश्य रहना चाहिये तथा प्रत्येक स्त्री को कम से कम १६ वर्ष तक रहना चाहिये। इससे अनेक लाभ है व सम्पूर्ण जीवन ही सुधर जाता है।

आदि वैद्य धन्वन्तरि महाराज ने अपने शिष्यों को आयुर्वेद की शिक्षा देते हुए कहा था कि मृत्यु, रोग, बुढ़ापे

ब्रह्मचर्य से लाभ

का नाश करने वाला अमृत रूप ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य से मस्तिष्क को बल व प्रौढ़ता प्राप्त होती है। उत्साह बढ़ता है। शरीर में बल बढ़ता है। स्वास्थ्य ठीक रहता है। हमारे मुख पर तेज व गुलाबी छटा दिखाई देती है। बुद्धि में तीव्रता आती है मेधा, शक्ति बढ़ती है। इसी ब्रह्मचर्य के कारण प्राचीन ऋषि मुनि बड़े मेधावी होते थे, यहां तक वेदों को भी कण्ठस्थ कर लेते थे। ब्रह्मचर्य से रोगों का नाश होता है और सुन्दर वंश की वृद्धि होती है।

ब्रह्मचर्य से आत्मा का उत्थान होता है। आत्मा का उत्थान बुद्धि की तीव्रता पर निर्भर है और बुद्धि की तीव्रता ब्रह्मचर्य से आती है। संसार में तीन बल प्रसिद्ध हैं। एक शरीर बल, दूसरा धन बल व तीसरा मनोबल। इन तीनों बलों में मनो-बल महान है और वह तब तक प्राप्त नहीं हो सकता, जब तक शरीर में बल न हो। इसलिये शरीर बल का होना आवश्यक है और शरीर बल भी तभी हो सकता है जब कि ब्रह्मचर्य का पालन किया हो। इस लिये ब्रह्मचर्य का पालन सर्व श्रेष्ठ वस्तु है। मनुष्य इसी के बल से संसार में विजय प्राप्त कर सकता है।

ब्रह्मचारियों के उदाहरण

पुराने समय से लेकर अब तक बहुत से ब्रह्मचारी हुये जिनका नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखा हुआ है ऐसा कौन सा अभागा मनुष्य होगा जो भीष्म पितामह, परशुराम, महावीर हनुमान, व ऋषिवर दयानन्द को नहीं जानता है। ये सभी अखंड ब्रह्मचारी एवम् अमर हैं और ये सभी आजन्म ब्रह्मचारी रहे। भीष्म पितामह ने अपने पिता शान्तनु के लिये आजन्म ब्रह्मचर्य का पालन किया था। इसी ब्रह्मचर्य का बल था कि वह बुढ़ापा होते हुये भी महाभारत जैसे महायुद्ध में १० दिन तक समस्त सेना के नायक रहे। १० दिन तक १० सहस्त्र सेना का प्रतिदिन संहार किया।

यहां तक भगवान श्रीकृष्ण को भी बाध्य कर दिया कि वे प्रतिज्ञा तोड़ दें। धन्य ब्रह्मचारी तुमसे परमात्मा को भी हार खानी पड़ी! श्रीकृष्ण अपनी रक्षा के लिए ब्रह्मचारी के वाणों से दुखित होकर अपनी प्रतिज्ञा भूल कर रथ का पहिया लेकर दौड़ पड़े। ये है ब्रह्मचर्य की महिमा। उस समय एक से एक महावीर था परन्तु कोई भी दुर्योधन की सेना का नेतृत्व भीष्म पितामह के बराबर दस दिन तक नहीं कर सका और ब्रह्मचर्य के बल पर ही उनकी इच्छा मृत्यु भी हुई।

महावीर हनुमान ब्रह्मचारी होने के कारण ही अजेय थे। रावण जैसे महान योद्धा को एक मुष्टि मे ही धराशायी कर दिया। ५०० योजन लम्बा समुद्र लांघने की शक्ति ब्रह्मचर्य के कारण उनमें थी। पहाड़ तक उठा लाने में समर्थ थे। इसे ब्रह्मचर्य की महिमा न कहें तो क्या कहें। इक्कीस वार पृथ्वी को नि:क्षत्रिय बना देने वाले परशुराम ब्रह्मचर्य के कारण ही सब कुछ कर सके। ऋषि दयानन्द के विषय में प्रसिद्ध है कि

"विज्ञान पाठ वेद पढ़ों को रढ़ा गया।
विद्या विलास विज्ञवरों का बढ़ा गया॥
सारे प्रमादी ग्रन्थ मतों को हिला गया।
आनन्द सुधासार दया का पिला गया॥
वह कौन दयानन्द यती के समान है।
महिमा अखंड ब्रह्मचर्य की महान है॥

ब्रह्मचर्य का पालन मन, वचन, कर्म तीनों से होना चाहिये।

उपसंहार

ब्रह्मचारी को स्त्री दर्शन से जितना हो सके बचना चाहिये। आयुर्वेद में लिखा है कि आयु को लम्बा करने की अनेक विधियां हैं जिनमें ब्रह्मचर्य सबसे उत्तम विधि है। ब्रह्मचारी को स्वाद की परवाह न करनी चाहिये। लालच, लोभ आदि से दूर केवल विद्या

अध्ययन में ही मन लगाना चाहिये। ब्रह्मचर्य से मनुष्य की स्वयं उन्नति होती ही है, समाज तथा राष्ट्र की भी उन्नति होती है।

क्षमा

क्षमा बड़ेन को चाहिये छोटन को उत्पात।
कहा विष्णु को घटि गयो जो भृगु मारी लात॥ 'रहीम'

किसी अपराध करने वाले को दंड न देकर छोड़ देने को क्षमा कहते हैं। क्षमा एक वशीकरण मन्त्र है। इस मन्त्र के द्वारा बड़े से बड़ा शत्रु भी वश में हो जाता है। प्रथम तो क्षमाशील व्यक्ति के शत्रु होते ही नहीं, यदि हों तो वे क्षमाशील व्यक्ति का कुछ बिगाड़ नहीं सकते; क्योंकि यह तो एक स्वाभाविक बात है कि यदि दो व्यक्ति झगड़ रहे हों और उनमें से एक शांत हो जाय और क्रोध न करे तो दूसरा स्वयमेव ही शांत हो जायगा।

विषय प्रवेश

क्षमाशील व्यक्ति अनायास ही लड़ाई झगड़े से बच जाता है। लड़ाई झगड़ों में दोनों पक्षों को हानि रहती है। परन्तु एक पक्ष के क्षमा कर देने पर दूसरा पक्ष स्वयं ही शान्त हो जाता है। जनता की सहानुभूति व आदर क्षमाशील व्यक्ति को सर्वदा प्राप्त होता रहता है। यदि एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को गाली दे रहा हो और दूसरा व्यक्ति चुपचाप सुन रहा हो तो जनता दूसरे व्यक्ति के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करेगी और पहले व्यक्ति का कोई भी सहायक न रहेगा। क्षमा से हम क्रोध पर विजय व सहनशीलता सीखते हैं। यदि हम क्रोधी हैं तो क्षमाशील नहीं हो सकते क्योंकि क्रोध आ जाने पर मनुष्य सब कुछ भूलकर प्रत्युत्तर दे बैठता है। इसी प्रकार जो सहनशील नहीं, वह कभी भी क्षमाशील नहीं हो सकता। क्षमा में एक

क्षमा से लाभ

महान शक्ति छिपी हुई है, कई बार देखा गया है कि इससे दुष्ट इतना लज्जित हो जाता है कि फिर कभी दुष्टता नहीं करता।

क्षमा में शंका

क्षमा में एक दोष लगाया जाता है कि क्षमा निर्बलों का अस्त्र है बलवानों का नहीं। यह अनुचित है। क्षमा बलवान और निर्बल दोनों का अस्त्र है। क्योंकि यदि कमजोर व्यक्ति क्षमाशील है तो निःसंदेह उसके लिये यह अच्छा गुण है, क्योंकि वह बलवान के द्वेष और कोप से बच जाता है, और यदि बलवान क्षमाशील है तो वह प्रशंसा व आदर के योग्य है। सभी कहेंगे कि अमुक व्यक्ति समर्थ होते हुए भी दयालु है और क्षमा कर देने वाला है। पूज्यनीय महात्मा गांधी का कहना था कि जो व्यक्ति मारना या पीटना जानता है वह बलवान अवश्य है परन्तु जो व्यक्ति मरना या पिटना जानता है वह सबसे अधिक बलवान है। उनकी बताई हुई अहिंसा इसी आधार पर टिकी हुई है! वह कहते थे कि यदि कोई व्यक्ति दायें गाल पर चांटा मारे तो उसके सम्मुख बांया गाल भी कर दो, यदि वह मनुष्य है और मनुष्यता से हीन नहीं है तो अवश्य ही लज्जित होगा। आज इस क्षमा के बल पर ही वे भारत को स्वतन्त्र करा सके।

उदाहरण

एक बार कहा जाता है कि दो अंग्रेज सिपाहियों ने महात्मा गांधी को अफ्रीका में पीटा और इतना पीटा कि वे बेहोश हो गये जब वे घर लाये गये और उन्हें होश आया तो बहुत से व्यक्तियों ने उनसे कहा कि वे उनकी रिपोर्ट पुलिस में करा कर उन्हें दंड दिलवाये लेकिन महात्मा गांधी ने उन्हें क्षमा कर दिया। वे दोनों अंग्रेज व्यक्ति इतने लज्जित हुए कि दूसरे दिन स्वयं ही क्षमा मांगने आये। महात्मा गांधी का पूर्ण स्वतन्त्रता युद्ध क्षमा पर ही टिका हुआ था।

क्षमा के लिए एक बात अवश्य ध्यान देने योग्य है कि अनुचित स्थान व अनुचित समय पर की हुई क्षमा फलवती नहीं होती है। भगवान श्री राम की स्त्री को राक्षस राजा रावण चुराकर ले गया। श्री राम ने बहुत प्रयत्न किए कि रावण सीता को लौटा दे तो क्षमा कर दिया जायेगा परन्तु वह न माना और युद्ध अनिवार्य हो गया। इस युद्ध से सोने की लंका का सत्यानाश हो गया। इसी प्रकार हम एक व्यक्ति को अनुचित कर्म करते हुए देखते हैं तो हमारा कर्तव्य है कि हम उसे उचित रास्ते पर ले आयें, यह नहीं कि हम उसे क्षमा करके उसके अनुचित कर्मों से अपना मुंह फेर लें।

अनुचित क्षमा

क्षमाशील व्यक्ति सर्वदा ही आदर के योग्य है। क्रोध से सर्वदा ही हानियां होती हैं और पीछे पछताना पड़ता है। परन्तु क्षमा से हमेशा ही शत्रु पर विजय होती है। सहनशीलता आती है। इस पर मनुष्य का अधिकार है। भगवान विष्णु की छाती पर ऋषिवर भृगु ने लात मारी। परन्तु भगवान विष्णु ने उठकर उनके पैर पकड़ लिए और कहा कि "ऋषिवर मेरी छाती कठोर है, आपके चरण कोमल, कहो आपको चोट तो नहीं आगई" ऋषि लज्जित हो गये और क्षमा मांगने लगे। क्षमा से ही बड़प्पन प्रकट होता है। प्रत्येक को क्षमा शील होना चाहिये। इसी में उसकी भलाई है।

उपसंहार

❀

पति-भक्ति

पत्नी का मन-कर्म वचन से पति सेवा में रत रहने को पति-भक्ति कहते हैं। पत्नि के लिए पति सेवा के सिवाय और कोई दूसरा शुभ कार्य नहीं। उसका सबसे उत्तम आभूषण पति-सेवा है। हिन्दुओं में विवाह एक पवित्र बन्धन माना जाता है जब कि और जातियों में यह केवल

विषय प्रवेश

इकरारनामा मात्र है और जब इच्छा हुई तोड़ा भी जा सकता है। हिन्दुओं में विवाह धार्मिक संस्कार होने के नाते स्वप्न में भी पति के प्रति बुरी भावना रखना बुरा माना जाता है। यह सम्बन्ध उच्च सम्बन्ध है। पूर्व जन्म के संस्कारों का फल है।

पति-भक्ति कैसे की जाती है

अपने पति को अपने से, भिन्न न समझना। सदा उसी के अनुकूल आचरण करना। दुख में व सुख में सर्वदा ही पति की सेवा करना, कष्ट में उसका साथ न छोड़ना, सर्वदा ही हृदय में प्रेम, श्रद्धा व आत्मसमर्पण का भाव रखना, मधुर भाषण आदि से पति के उत्साह को बढ़ाना आदि पति-भक्ति कहलाती है। गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है कि -

एकै धर्म एक व्रत नेमा। करम वचन मन पति पद प्रेमा।
मन वच क्रम पतिहि सेवकाई। तियहि न पति सम आन उपाई।

मन, कर्म, वचन से पति की सेवा में संलग्न स्त्री अपने इस लोक व परलोक दोनों को सुधार लेती है। पति-भक्ति के गुणों से युक्त स्त्री अपना, अपने पति का, ससुर कुल व पितृकुल का मुख उज्ज्वल करती है।

पति भक्ति के पाश्चात्य सभ्यता

आजकल देखा जाता है कि पुरुषों से अधिक स्त्रियां पश्चिमी सभ्यता में रंग रही है वे पुरुषों को केवल अपना साथी मात्र समझती हैं। वे पति-भक्ति में विश्वास नहीं करतीं। वे अपनी रंगरेलियां मनाने में, फैशन बनाने में व अपने पति से उसके स्वास्थ्य के विषय में शिष्टाचार के नाते पूछ लेने में ही अपने कर्तव्य की इति श्री समझती है। ऐसी स्त्रियां सम्मान की पात्र नहीं समझी जातीं। इन स्त्रियों को हिन्दू समाज कुलटा एवम चरित्रहीन की उपाधि देता है। न ऐसी स्त्रियाँ अपने ससुर कुल में आदर पाती हैं न पितृकुल में। इनका यह लोक व परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं।

गृहस्थी की गाड़ी के पति और पत्नी दो पहिये होते हैं। इन दोनों में से एक भी पहिया खराब हो जाय तो गाड़ी नहीं चल सकती। इस गृहस्थी को चलाने के लिए यह आवश्यक है कि पति व पत्नि में प्रेम व परस्पर अनुकूलता रहे। ये तभी हो सकता है कि दोनों ही अपने २ कर्तव्य को ठीक तरह से निभाये चले जायें। पत्नी अपने कर्तव्य को पति-भक्ति द्वारा पूर्णरूपेण निभा सकती है। पति-सेवा में ही स्त्री का गौरव है। इसी के द्वारा वह सती कहला सकती है। हिन्दू शास्त्रों मे कहा गया है कि भले ही पति लूला, लंगड़ा, अन्धा रोगी व दुराचारी आदि कैसा भी हो, स्त्री का कर्तव्य है कि वह उसकी सेवा में रत रहे व उसे अपना देवता समझे। महाकवि तुलसीदास ने कहा है कि

पतिभक्ति व गृहस्थ धर्म

वृद्ध, रोग-वस जड़, धन हीना। अन्ध, वधिर, क्रोधी अति दीना॥
ऐसेहु पति कर किय अपमाना। नारि पाव यमपुर दुःख नाना॥

इसमें सन्देह नहीं कि पति भले ही दुराचारी हो यदि पत्नी उसको सच्चे हृदय से प्रेम करती है और सच्चे हृदय से सेवा करती है तो वह अवश्य ठीक रास्ते पर आयेगा। स्त्री का परम धर्म ही पति-सेवा है।

इतिहास उन सती शिरोमणियों की गाथाओं से भरा पड़ा है जिनका नाम हम आज भी आदर की दृष्टि से लेते हैं। महासती सीता, राम द्वारा निर्वासित होने पर भी राम को दोष नहीं देतीं बल्कि यही प्रार्थना करती हैं कि जन्म जन्मांतर तक मुझे श्रीराम ही पति मिलें। कितना ऊंचा आदर्श था। सती अपने पति शिव की बुराई न सुन सकीं और जलकर भस्म हो गयी। आज हम उनके नाम पर नतमस्तक होते हैं। पद्मिनी अग्नि में जलकर मर गई, लेकिन अपने पति से विमुख होकर सतीत्व को नष्ट न होने दिया।

पतिव्रताओं के उदाहरण

और भी पतिव्रताओं के अनेक उदाहरण हैं। सभी उदाहरण अनुकरणीय हैं।

पत्नि को तो पति-भक्ति में लीन रहना चाहिये। साथ ही पति को भी पत्नी-व्रत पालन करना चाहिये ऐसा नहीं कि वह पत्नी को पैर की जूती समझे एवं उसे मारता पीटता रहे, ऐसा करना ठीक नहीं।

उपसंहार

पत्नि भी पश्चिमी सभ्यता में न रंग कर पुराने आदर्शों का पालन करे। इसी में उसके सतीत्व की रक्षा है। उसका कल्याण है। और संसार में इसी से उसका आदर होता है। यह लोक भी सुधर जाता है और परलोक संभल जाता है।

सत्य

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय साँच है ताके हृदय आप॥

जो वस्तु जैसी आंखों से देखी हो, कानों से सुनी हो और समझी हो, उसको उसी प्रकार प्रकट कर देने को सत्य कहते हैं। इसके उल्टी जो असली बात को छिपाकर दूसरी बात कहते हैं उसे असत्य या झूठ कहते हैं। सत्यवादी पुरुष सब जगह, प्रत्येक समय आदरणीय होता है। सत्य सब गुणों का आधार और सबसे बड़ा गुण है। सब धर्मों का सार सत्य में है। संसार में अनेक धर्म फैले हुये हैं परन्तु सब धर्म जिसको एक मत होकर स्वीकार करते हैं वह सत्य है।

विषय प्रवेश

सत्य से इतने अधिक लाभ हैं कि जिनकी गणना नहीं की जा सकती। सृष्टि का एक एक परमाणु सत्य पर अवलंबित है। सत्य के बिना महाप्रलय हो जाती है। यदि हम मनुष्य के लिये सत्य के लाभ देखें तो उसके वैयक्तिक जीवन में, पारिवारिक जीवन में सर्वत्र

सत्य से लाभ

ही उसकी प्रतिष्ठा, उसका मान सत्य पर आश्रित है। पति-पत्नी का स्नेह अत्यधिक होता है। लेकिन यह प्रेम विश्वास से आता है और विश्वास बिना सत्य के नहीं हो सकता। यदि पति-पत्नी दोनों ही एक दूसरे से असत्य बोलें तो निसन्देह वह गृहस्थ कभी सुखी नहीं रह सकता। यह सर्वथा झूठ है कि व्यापार से झूठ से काम चलता है झूठे दुकानदार के पास ग्राहक बहुत कम पहुँचते है।

सत्य में शंका

बहुत से व्यक्तियों का कहना है संसारी मनुष्यों को तो झूठ बोलना चाहिये, सत्य बोलना तो केवल साधु व वैरागी का काम है। यह नितान्त गलत है। सत्य प्रत्येक के लिये है। प्रत्येक सत्य वक्ता मनुष्य आदर के योग्य है। जीवन के प्रत्येक पहलू में सत्य लाभ-दायक है। असत्य कुछ लोग तो स्वार्थवश बोलते है और कुछ लोगों को तो केवल आदत होती है। असत्य बोलने मे उनका कोई स्वार्थ नहीं होता। किन्तु आदत से मजबूर होते है। ऐसे मनुष्यों पर कभी विश्वास नहीं किया जाता और न वह कोई समाज मे स्थान ही रखते हैं। स्वार्थवश झूठ बोलने वाले भी घृणा के पात्र होते है। सत्य से ही ईमानदारी आती है। सत्य से ही विश्वास आता है।

कटु सत्य

एक बात ध्यान देने योग्य है। कभी कभी सत्य दूसरों को अप्रिय लगने वाला होता है। महाराज मनु ने कहा है कि 'दूसरों को अप्रिय लगने वाला तथा दूसरों को हानि पहुँचाने वाला सत्य न बोलें अर्थात ऐसे समय पर चुप रहे' इसका मतलब यह नहीं कि ऐसे समय मे झूठ बोल दे। उन्होंने आगे कहा है कि 'यदि बात झूठी हो और सुनने वालों को प्रिय लगती हो तो ऐसे प्रिय भाषण से भी दूर रहना चाहिये।' कभी-कभी हम सत्य का शाब्दिक अर्थ मे प्रयोग करते हैं और ऐसा सत्य दूसरों को दुःख पहुँचाने वाला भी हो सकता है। जैसे एक अन्धे को जाते देख कर हम उसे 'ओ अन्धे' कह कर भी सम्बो-

षित कर सकते है। सत्य के शाब्दिक अर्थ से तो यह सत्य ही हुआ परन्तु अन्धे के हृदय पर चोट पहुंची। यदि हम उसे 'अजी सूरदास जी' कह कर सम्बोधित करें तो यह भी सत्य होगा परन्तु वास्तविक अर्थ में नहीं, क्योंकि अन्धा महाकवि सूरदास के बराबर नहीं हो सकता, परन्तु उसे यह सत्य प्रिय लगेगा।

उदाहरण

हमारा प्राचीन इतिहास सत्यवादी मनुष्यों के उदाहरणों से भरा पड़ा है। श्रीरामचन्द्र जी जिस कुल में पैदा हुये थे उसके विषय में तुलसीदासजी ने लिखा है कि

रघुकुल रीति सदा चलि आई।
प्राण जाय पर वचन न जाई॥

महाराज दशरथ ने प्राण गँवा दिये परन्तु सत्य का साथ न छोड़ा। श्री राम ने वन-वन ठोकरें खाई परन्तु सत्यवादी रहे। सत्यवादी हरिश्चन्द्र को कौन नहीं जानता? राज्य गया, स्त्री बिकी, स्वयं को श्मशान में काम करना पड़ा, परन्तु सत्यवादी रहे। भारतेन्दु ने कहा है कि

चन्द्र टरै सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार।
पै दृढ़ श्री हरिचन्द्र कौ, टरै न सत्य विचार॥

धर्मात्मा युधिष्ठर तो सत्य के अवतार ही थे। महात्मा गांधी जो इसी युग के थे, सत्य की मूर्त्ति थे। कहा जाता है कि राजनीति में सत्य से काम नहीं चलता, परन्तु उन्होंने सत्य द्वारा विजय प्राप्त कर संसार को चकित कर दिया।

उपसंहार

मनुष्य पर भले ही कठिनाइयां आवे, भले ही प्राण पर संकट आ बने परन्तु फिर भी सत्य से मुंह न मोड़ना चाहिये। जो सत्यवादी पुरुष है वे सदा माननीय होते हैं। संसार उनको आदर्श मानकर उनका अनुकरण करता है। वे संसार मे पूज्य माने जाते हैं। थोड़े से लोभवश या स्वार्यवश कभी भी असत्य का सहारा न लेना चाहिये।

भारत की राष्ट्र भाषा

विषय

भारतवर्ष में कौनसी भाषा राष्ट्र भाषा मानी जाय, यह आज का एक गंभीर प्रश्न है। किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र के लिये एक राष्ट्र भाषा का होना अत्यन्त आवश्यक है। बिना एक राष्ट्र भाषा के न तो राष्ट्र में संगठन हो सकता है और न एकता ही आ सकती है। बिना राष्ट्रभाषा के कोई राष्ट्र उन्नति भी नहीं कर सकता। यह कहना भी अनुचित न होगा कि राष्ट्र भाषा के बिना कोई राष्ट्र जीवित ही नही रह सकता।

राष्ट्र भाषा बनने के गुण

राष्ट्रभाषा बननेके लिए किसी भाषामें कुछ विशेष गुण होने चाहिए हैं। प्रथम और मुख्य गुण तो यह कि वह भाषा राष्ट्रके अधिक से अधिक व्यक्तियों द्वारा बोली, लिखी व पढ़ी जाती हो। द्वितीय भाषा नियमित तथा व्याकरण बद्ध हो। तृतीय भाषा की लिपि पूर्ण तथा सरल हो और चतुर्थ भाषा स्वदेशी हो एवम् प्राचीन हो ताकि उसके स्थायी होने का विश्वास हो।

राष्ट्र भाषा के लिये चार भाषायें

आजकल राष्ट्र भाषा के लिये चार भाषाओं के नाम लिये जारहे हैं। (१) हिन्दी, (२) उर्दू, (३) हिन्दुस्तानी व (४) अंग्रेजी। अब देखना है कि इन चार भाषाओं में से कौन सी भाषा राष्ट्र भाषा की कसौटी पर खरी उतरती है। वैसे तो और भी प्रान्तीय भाषाये भारत में प्रचलित हैं परन्तु वे अपने-अपने प्रान्त में ही सीमित हैं और इसी कारण वे राष्ट्र भाषा के पद के लिये नहीं गिनी जाती।

अंग्रेजी

प्रथम हम अंग्रेजी को लेते हैं। यही भाषा परतन्त्र भारत में राष्ट्र भाषा के स्थान पर बैठी हुई थी और अब भी इसके समर्थक उसी स्थान पर रखना चाहते हैं। प्रथम तो यह विदेशी भाषा है-जो कि

विदेशी शासन के साथ साथ भारत में प्रवेश कर गई। द्वितीय इसके बोलने व पढ़ने लिखने वाले भारत में कुछ ही शिक्षित व्यक्ति हैं– अधिकतर इस भाषा से अनभिज्ञ हैं, तृतीय इसकी लिपि, व्याकरण दुरूह है सहल नहीं। जन साधारण इसे सरलता पूर्वक नहीं सीख सकता। चतुर्थ भारतवर्ष का प्राचीन गौरव इस भाषा में नहीं है। इन सब कारणों से यह भाषा राष्ट्र भाषा के पद को कदापि भी सुशोभित नहीं कर सकती। फिर इस भाषा ने हमें गुलामी सिखाई है यदि फिर भी इसी भाषा को अपनायेंगे तो निःसन्देह हमें कम से कम भाषा के लिये तो विदेशियों का गुलाम बनाये रक्खेगी।

उर्दू

अब उर्दू को लीजिये। यह भाषा अकबर महान के समय से भारत में प्रचलित हुई। यह कोई नवीन भाषा नहीं है। यह विदेशी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी ही है। इसको लश्करी भाषा भी कहते हैं। क्योंकि यह मुसलमानी काल में सेना में बोली जाती थी। इसके बोलने, पढ़ने, व लिखने वाले अधिकतर मुसलमान हैं या देश के उस भाग के निवासी हैं जहां पर कि मुसलमानों का प्रभाव अधिक रहा। पंजाब, सिन्ध, सीमाप्रांत आदि में इसका चलन बहुत था। अब पाकिस्तान बन जाने के कारण भारत में इसके बोलने वाले कम रह गये हैं। इस भाषा में फ़ारसी शब्दों की भी भरमार हो रही है इस कारण यह विदेशी ही हो गई है। इसकी लिपि व व्याकरण नियम-बद्ध नहीं है और जन साधारण के समझ के परे की वस्तु है महा-पंडित राहुल सांकृत्यायन ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुये कहा था कि "उर्दू लिपि जो वस्तुतः अरबी लिपि है, इतनी अपूर्ण है कि उसे स्वयं बहुत से इस्लामी देशों से निकाल दिया गया है। इसको राष्ट्र भाषा बनाने का ख़याल आना ही नहीं चाहिये।"

हिन्दुस्तानी

हिन्दुस्तानी भाषा कांग्रेस के नेताओं द्वारा नामकरण की हुई नवीन भाषा है। इस भाषा की व्याख्या इस प्रकार की जाती है कि हिन्दुस्तानी वह भाषा

है जिसमें हिन्दी, अंग्रेजी उर्दू, संस्कृत, अरबी फारसी, एवम् प्रत्येक प्रान्तीय भाषाओं के शब्द हों, जिसकी लिपि रोमन हो। इस का प्रादुर्भाव हिन्दू, मुसलमान व ईसाइयों मे एकता भाव पैदा करने के लिये हुआ था। प्रथम तो इस भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रत्येक भाषा का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जायगा। द्वितीय साहित्य एवम् विज्ञान इस भाषा में नहीं लिखा जा सकता, क्योंकि साधारण बोलचाल की भाषा से विज्ञान व साहित्य की भाषा पृथक होती है। और इस भाषा मे साहित्य के लिये कमी रहेगी। व्याकरण व नियम तो इस भाषा मे हो ही नहीं सकते क्योंकि यह तो मिश्रित भाषा है। इस कारण यह भाषा राष्ट्र भाषा के लिये कदापि उपयुक्त नहीं और यहां तक भी कह देना अनुचित नहीं है कि हिन्दुस्तानी भाषा कोई भाषा नहीं है।

हिन्दी

अब केवल हिन्दी रह जाती है। प्रथम तो हिन्दी प्रत्येक प्रांतों मे थोड़ी बहुत लिखी, पढ़ी व बोली जाती है। यहां की आबादी की बहु संख्या हिन्दी से परिचित है। जनता की बोलचाल की भाषा भी हिन्दी ही है।

जब जन साधारण की भाषा यही है तो इसे राष्ट्र भाषा बनने का पूर्ण अधिकार है। इसकी लिपि इतनी सरल व नियम बद्ध है कि एक व्यक्ति एक महीने मे साधारणतया लिखना पढ़ना सीख सकता है। इसकी लिपि पूर्ण भी है। जैसा आप मुंह से उच्चारण करते है वैसा लिख भी सकते है। इसका व्याकरण भी पूर्ण है। यह भारत की प्राचीनतम् भाषा है। देश का गौरव इस भाषा मे वर्णित है। इस भाषा का क्षेत्र विशद है। न इनमे शब्दों की कमी है, न लिपि का अव्यवस्थित रूप। हर तरह से यह भाषा राष्ट्र भाषा की कसौटी पर खरी उतरती है और यही एक भाषा है जोकि भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा के पद को सुशोभित कर सकती है।

सदाचार

अच्छे व्यक्तियों के अच्छे आचरणों को सदाचार कहते हैं।

विषय प्रवेश

प्राचीन महापुरुषों ने अच्छे कामों का नामकरण कर दिया है जैसे सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य का पालन, करना, अहिंसा का पालन करना ईश्वर विश्वास, विचार पूर्वक काम करना आदि। जो इन अच्छे कामों को करता है वह सदाचारी पुरुष कहलाता है। जो इन प्राचीन ऋषियों के बनाये अच्छे नियमों के प्रतिकूल चलता है, वह दुराचारी कहलाता है। सदाचारी पुरुष का सर्वत्र तथा सर्वदा आदर ही होता है। दुराचारी का कोई मुख देखना भी पसन्द न करेगा। वह घृणा का पात्र समझा जाता है।

सदाचार के गुण

सदाचारी पुरुष कभी मिथ्या भाषण न करेगा। कभी स्वार्थवश या लोभवश ऐसा काम न करेगा जिस से किसी को हानि या दुःख पहुँचे। वह परोपकारी होगा, जितेन्द्रिय होगा। वह ईश्वर में अगाध विश्वास करने वाला होगा। ऐसे पुरुष विद्वान् होते हैं व धर्म परायण होते हैं। इनका प्रत्येक कार्य दूसरे के लिये अनुकरणीय होता है। सदाचारी पुरुष सतर्क रहता है कि कहीं ऐसी भूल न बन जाय कि सदाचार में कमी आवे। ऐसे व्यक्ति आदर्श सत्पुरुष होते हैं। ऐसे पुरुषों से ही राष्ट्र का नाम उज्जवल होता है। इनके आदर्श को ही सामने रख कर जन-साधारण अपने जीवन की कठिनाइयों से पार हो जाते हैं।

सदाचार वास्तव में धर्म ही है। जन साधारण के पास इतना समय तो होता ही नहीं कि वे धर्म की पुस्तकों का अध्ययन करें और उनसे धर्म के विषय में सीखें। वे तो केवल कुछ मोटी-मोटी बातें आदर्श महापुरुषों से सीख लेते हैं और उन्हीं का अनुकरण करने लग जाते हैं। उनके लिये यही धर्म है। कभी-कभी मनुष्य के जीवन में

ऐसा समय भी आ जाता है जब मनुष्य कि कर्त्तव्य विमूढ़ हो जाता है और सोचता है कि अब क्या करना चाहिये ? उस समय उसके पास एक ही रास्ता है कि जैसा कुछ सदाचार सिखलाता है, उसी के अनुसार करे। ऐसा करने में उसे कुछ हानि नहीं होगी।

सदाचारी के उदाहरण

जो मन वचन कर्म से पूर्ण रूपेण सदाचारी होगा, वह सर्वदा उन्नति के शिखर पर पहुँचा हुआ होगा। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम पूर्ण रूपेण सदाचारी थे। उन्हें अवतार तक मानते हैं वह हिन्दुओं के राम बन बैठे हैं। योगीराज श्रीकृष्ण पूर्ण सदाचारी थे और ग्वाले के घर मे पल कर भी उन्होंने भारत से अधर्म का नाश करके धर्म राज्य की स्थापना की। हमारे पूज्य महात्मा गांधी तो सदाचार की मूर्त्ति ही थे। ये अपने समय के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष थे। सदाचार के बल पर ही एक सहस्त्र वर्ष के गुलाम भारत को स्वतन्त्रता दिलवाथी। सदाचारी पुरुष जो कर दिखाये वही थोड़ा है।

उपसंहार

सदाचारी पुरुष सर्वत्र और सर्वदा ही आदरणीय होता है। सदाचार से ही व्यक्ति के स्वयं की, कुल की, जाति व राष्ट्र की उन्नति है। सदाचारी व्यक्ति कभी अपने मन में क्लेश नहीं पाता। प्रत्येक पुरुष उनके सन्मुख नत मस्तक होता है। ऐसे पुरुषों से कभी कोई पाप भी नहीं बनता है। यदि एक व्यक्ति पूर्ण सदाचार से रहे तो समझ लो कि वह धर्म परायण है, क्योंकि सदाचार मे ही धर्म निहित है।

सह शिक्षा

विषय प्रवेश

लड़के व लड़कियों को एक स्थान पर विद्याध्यन करने को सह-शिक्षा कहते हैं। लड़के व लड़कियों की साथ पढ़ने की प्रणाली पहले भारत में नहीं थी

यह यूरोप की देन है। इस प्रणाली से लाभ व हानि दोनों ही हैं। यह प्रणाली अभी तक भारत में पूर्ण रूपेण सफल नहीं हुई है। जनसाधारण इसको लड़कियों का चरित्र भ्रष्ट करना बतला कर इस शिक्षा प्रणाली को उपयोग मे नही ला रहे।

सहशिक्षा से लाभ

सह शिक्षा से कई लाभ बताये जाते हैं। एक तो इस तरह कम खर्च पड़ता है क्योंकि एक ही अध्यापक दोनों को पढ़ा देता है। स्थान भी एक है। पृथक २ दो विद्यालय बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। द्वितीय लड़के व लड़कियों को परस्पर मिलकर रहने की क्रियात्मक शिक्षा मिलती है। लड़के व लड़कियों मे एक दूसरे के प्रति सहानुभूति बढ़ती है। इस तरह से अपने आगे आने वाले जीवन मे वे अधिक सुखी रह सकते है। स्त्रियां स्वाभाविक लज्जा शील व भीरु होती है। सह शिक्षा से वह व्यर्थ की लज्जा तथा भीरुता निकाल देती है। पुरुष स्त्रियों के सन्मुख झेप महसूस करता है परन्तु सहशिक्षा के कारण व्यर्थ की झेंप छूट जाती है। यदि लड़का या लड़की संयमी है तो इस सहशिक्षा के कारण उन्हे और अधिक सतर्क रहना पड़ेगा। इस सतर्कता का यह फल होगा कि आगे आने वाले जीवन मे ये कभी भी चरित्रहीन न हो सकेंगे।

सहशिक्षा से हानियां

सहशिक्षा से लाभ की अपेक्षा हानियां अधिक हो रही है। देखने मे यह आता है कि विद्यालय भ्रष्टाचार के घर बने हुए है। लड़कों व लड़कियों का चरित्र भ्रष्ट हो रहा है। यह तो स्वाभाविक है कि यदि फूंस व अग्नि को एक जगह पर रख दिया जाय तो अग्नि अवश्य प्रज्वलित होगी। कम अवस्था मे लड़के या लड़कियों को अपने हानिलाभ का ज्ञान तो विशेष होता नहीं, स्वतन्त्रता उन्हे रहती ही है फिर चरित्र भ्रष्ट होने मे क्या देर लगती

है। जीवन को उन्नति की ओर अग्रसर करने वाले सदाचार की भीषण हानि हो रही है। दुराचार व व्यभिचार का सहशिक्षा में अधिक भय है। दूसरे यदि अध्यापक है तो बहुत सी बातें लड़कियां न समझ सकेंगी, यदि स्त्री अध्यापिका है तो लड़कों को पूरा लाभ नहीं। इस तरह से शिक्षा का काम अधूरा रह जाता है।

कुछ सहशिक्षा के पक्षपाती कहते हैं कि यदि लड़के व लड़कियां पूर्ण ब्रह्मचारी रहें तो चरित्र नहीं गिर सकता, यदि नहीं रहते तो यह सहशिक्षा की कमी नहीं बल्कि शिक्षा की कमी है। पुरुष २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रह सकता है परन्तु स्त्रियां स्वाभाविक तौर से १६ वर्ष की आयु तक ही ब्रह्मचारिणी रह सकती हैं। यह ही शास्त्रीय लेख है। यदि १६ वर्ष के बाद स्त्री ब्रह्मचारिणी नही रहती तो उस पर आप दोषारोपण नहीं कर सकते। फिर लड़के व लड़कियां अपने समय का अधिकांश भाग साथ-साथ वितायेंगे, इसी में गिर जाने का भय रहता है।

उपसंहार

यह शिक्षा प्रणाली यूरोप से भारत में आई है। इससे लाभ अवश्य है परन्तु एक ही ऐसी भीषण हानि है। जिससे सब पर पानी फिर जाता है। यूरोप में स्त्री व पुरुष के चरित्र पर अधिक जोर नहीं दिया जाता परन्तु वे स्वाभाविक ही इतने चरित्रवान होते हैं कि वहां इस शिक्षा से चरित्र गिर जाने का अधिक भय नहीं रहता है। उत्तम तो यह है कि लड़के और लड़कियों को पृथक २ शिक्षा दी जाय ताकि उन्हें किसी प्रकार का भय न रहे।

मित्रता

विषय प्रवेश

मनुष्य सांसारिक कार्यों मे इतना व्यस्त रहता है कि उसे अपनी जीवन नीरस प्रतीत होने लगता है। उसकी इच्छा सदैव यह रहती है कि उसे ऐसा साथी

मिले जिससे कि वह अपने दुःख व सुख की बात कह सके। कठिनाईयों में उसकी सहायता कर सके। उसे पथ-भ्रष्ट होने पर सच्चा रास्ता दिखा सके। और नीरसता प्रतीत होने पर उसका मनोरंजन कर सके। ऐसा साथी मिलने पर उस साथी को मित्र कहते हैं और उसके सम्बन्ध को मित्रता कहते हैं।

संसार में सच्चे मित्रों की अति ही कमी है। स्वार्थवश मित्र बनने वाले और अपना स्वार्थ पूरा हो जाने पर आंखें दिखाने वाले तो बहुत से मिल जावेंगे। रहीम जी ने कहा है कि

सच्चे मित्र

कहि रहीम सम्पति सगे, बनत बहुत बहु रीत।
विपति कसौटी जे कसे, सोई सांचे मीत॥

वास्तव में सच्चे मीत वही हैं जो कि आपत्ति के समय काम आवें। महाकवि तुलसीदास ने कहा है कि

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपत्ति काल परखिये चारी।

कविवर गिरधर ने इन मतलबी दोस्तों को देखकर ही कहा है-

साईं या संसार में मतलब का व्यौहार।
जब लगि पैसा गांठ में तब लगि ताको यार॥
तब लगि ताको यार, यार सङ्ग ही सङ्ग डोले।
पैसा रहा न पास यार मुख से नहीं बोले॥
कह गिरिधर कविराय जगत यहि लेखा भाई।
करत बेगरजी प्रीति यार बिरला कोई सांई।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने एक सच्चे मित्र की परिभाषा बताते हुए बड़ी सुन्दर बातें कही हैं

जो न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिनहिं बिलोकत पातक भारी॥
निज दुःख गिरि सम रज करि जाना। मित्र के दुःखरज मेरु समाना॥
जिनके अस मति सहज न आई। ते शठ हठ कत करत मिताई॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुण प्रगटे अवगुणहिं दुरावा॥

देत लेत मन शंक न धरही। बल अनुमान सदा हित करही ॥
विपति काल कर शत गुण नेहा। श्रुति कह सन्त मित्र गुण एहा ॥

यही सच्चे मित्र के गुण हैं। मित्र का कर्तव्य है कि वह अपने दुःख की बिल्कुल चिन्ता न करे और अपने मित्र के थोड़े से दुःख को बहुत समझे, उसे पथ भ्रष्ट होने से बचावे। विपत्ति काल में मित्र से पहले की अपेक्षा बहुत अधिक प्रेम करे।

स्वार्थी मित्रों से हानियां

स्वार्थी मित्र जब तक आपके पास उसके स्वार्थ पूरा होने का साधन है, आप को अपना बनाये रक्खेंगे व आपका मनोरंजन भी करेंगे, साथ ही आपको गर्त की ओर ले जाने का प्रयत्न करेंगे। सर्वदा आपसे चापलूसी की बातें भी करते रहेंगे। जहां स्वार्थ पूर्ण हुआ वहां उन्हें आप से कोई मतलब नहीं। इन्हीं स्वार्थी मित्रों के कारण बड़े-बड़े साम्राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। इन स्वार्थी मित्रों से सर्वदा दूर रहना चाहिये। ये विषैले सांप से भी अधिक जहरीले होते हैं और इनका डसा कभी भी नहीं अच्छा हो सकता।

मित्रता का उदाहरण

भारतीय इतिहास में मित्रता के एक से एक उत्तम उदाहरण मिलेंगे। मित्रता में राजा और रंक एक समान होते हैं अन्यथा मित्रता हो ही नहीं सकती। भगवान् श्रीकृष्ण द्वारिकाधीश थे। परन्तु अपने मित्र सुदामा को देखकर के बिलख-बिलख कर रोये और निर्धन ब्राह्मण को सर्वस्व सौंप देने को तत्पर थे। अपने मित्र के चरण तक आंसुओं से धोये। इससे उत्कृष्ट उदाहरण आपको और कहां मिल सकेगा ?

उपसंहार

प्रत्येक मनुष्य का एक मित्र अवश्य होना चाहिये। परन्तु यह अवश्य देख लेना चाहिये कि वह सच्चा मित्र है कि नहीं। सच्चा मित्र आपको आपत्तियों से बचायेगा। विपत्ति के समय आप का साथ

देगा। आप को पथ भ्रष्ट होने से बचायेगा। कभी मनुष्य अपनी गल-तियों को स्वयं नहीं मालूम कर सकता। आपको आपका मित्र उन गलतियों को समझायेगा। स्वार्थी मित्रों की पहचान करके उनसे सर्वदा दूर रहना चाहिये। ये मित्र महान् दुःखदाई होते हैं, इन से अवश्य बचना चाहिये।

स्वावलम्बन

अपने ही बल भरोसे पर काम करने को स्वावलम्बन कहते हैं।

विषय प्रवेश

स्वावलम्बन का गुण अति ही उत्तम है। इस गुण के कारण दूसरों का सहारा नहीं ढूंढना पड़ता। प्रथम तो आपके जीवन में ऐसे बहुत से व्यक्ति आये होंगे जो आपके प्रतिकूल रहे हों। ऐसे मनुष्य से तो आप किसी प्रकार की सहायता की आशा कर ही नहीं सकते। परन्तु बहुत से आपके अनुकूल भी होंगे फिर भी हर समय आपकी सहायता नहीं कर सकते। मनुष्य का अपने ही पैरों के बल खड़ा होना चाहिये।

स्वावलम्बन के गुण

स्वावलम्बी व्यक्ति अपने सभी कार्य अपने हाथ से करता है। वह कभी अपने कार्य के लिये दूसरों की ओर लालची दृष्टि से नहीं देखता न किसी की चापलूसी करता है। यद्यपि यह सत्य है कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है और उसे जीवन निर्वाह करने के लिए समाज पर अवलम्बित रहना पड़ता है। परन्तु स्वावलम्बी व्यक्ति समाज से केवल वही सहायता लेता है जिसका कि उसे अधिकार है। वह समाज के सिर पर बोझ के समान नहीं होता बल्कि समाज का बोझ हलका करने वाला होता है। ऐसा व्यक्ति सर्वत्र सर्वदा आदरणीय होता है। बहुत से मनुष्य नौकरों के बिना तनिक भी काम नहीं कर सकते। ऐसे मनुष्य आलसी

होते हैं अपव्ययी होते हैं। स्वावलम्बी मनुष्य के पास आलस्य फटकने भी नहीं पाता। ऐसे व्यक्ति मितव्ययी होते हैं और बचे हुए पैसे को किसी अच्छे काम में लगा सकते हैं।

किसी ने सच कहा है कि ईश्वर उसी की सहायता करता है जो कि अपनी सहायता स्वयं कर सकते हैं। जो व्यक्ति ईश्वर के भरोसे बैठे रहते हैं और कुछ नहीं करते ऐसे मनुष्य निकम्मे होते हैं। इनमें पुरुषार्थ बिलकुल नहीं होता और यह अपने जीवन में कभी सफल नहीं हो सकते। पुरुषार्थी व्यक्ति अपने जीवन में कभी असफल नहीं होगा। स्वावलम्बन कर्तव्यपरायणता भी सिखाता है स्वावलम्बी पुरुष से सभी सद्भावना बनाये रखते हैं।

स्वावलम्बन से देश व जाति की उन्नति

स्वावलम्बन से देश व जाति की भी उन्नति होती है। जो राष्ट्र जितना स्वावलम्बी होगा उतना ही उन्नति के शिखर पर होगा। जाति व राष्ट्र तभी उन्नति कर सकते हैं जबकि वे दूसरे की सहायता पर निर्भर न हो बल्कि अपनी आवश्यकताओं को स्वयं ही पूरी कर लेते हैं। गत महायुद्ध में व प्रथम महायुद्ध में जर्मनी तमाम विश्व के विरुद्ध लगातार कई वर्ष तक लड़ता रहा। इसका कारण था कि वह स्वावलम्बी था। उसे किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं थी। वह अपनी आवश्यकताओं को स्वयं ही पूरी कर लेता था। जो राष्ट्र जितना अधिक स्वावलम्बी होगा उस राष्ट्र के व्यक्ति उतने ही अधिक बलशाली, पुरुषार्थी व विपत्ति मे न घबराने वाले होंगे। जब ऐसे व्यक्ति होंगे तो राष्ट्र क्यों न उन्नति करेगा।

स्वावलम्बन में शंका

स्वावलम्बन से यह शंका की जाती है कि यह ऐसा गुण है जो एकता को नष्ट करता है व फूट उत्पन्न करता है, यह अनुचित है। मनुष्य यदि स्वावलम्बी है तब भी वह सामाजिक प्राणी है और उसे

समाज मे अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिये समाज मे एकता रखनी होगी। वह किसी से शत्रुता नहीं करता बल्कि अपने कार्यों के लिए किसी पर आश्रित नहीं रहना चाहता। इससे तो फूट घटती है, बढ़ती नहीं।

उपसंहार

स्वावलम्बी पुरुष समाज मे, जाति व राष्ट्र में आदरणीय होता है। व्यक्ति ऐसे मनुष्य को आदर्श समझते हैं। ईश्वर भी ऐसे मनुष्य की मदद करता है। हमारे पूज्य महात्मा गांधी तो टट्टी उठाने तक का काम अपने आप कर लेते थे। उनका कहना था कि 'मनुष्य दूसरे से सहायता ले सकता है परन्तु उसे कोई अधिकार नहीं कि वह अपना काम दूसरों से कराये। दूसरों पर आश्रित रहने वाले मनुष्य आलसी दुःखी व निकम्मे होते हैं। प्रत्येक मनुष्य को स्वावलम्बी बनना चाहिये। इसी मे उसका पुरुषार्थ है।

'पर उपदेश कुशल बहुतेरे'

विषय प्रवेश

प्रत्येक व्यक्ति की यह इच्छा रहती है कि वह दूसरों से आदर पाये, लोग उसके इशारे पर चलें, वह नेता बन जाये। इसी कारण वह दूसरों को उपदेश देकर अपनी बुद्धिमानी का सिक्का जमाना चाहता है। वह चाहता है लोग उसे चरित्रवान, सदाचारी एवम् नेता समझें। परन्तु वास्तविकता कुछ और ही है। वह जिन बातों का उपदेश करता फिरता है उसका स्वयं कभी पालन नहीं करता। ऐसे ही व्यक्तियों को लक्ष्य करके गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है कि—

'पर उपदेश कुशल बहुतेरे'

आजकल हमारे देश मे कुछ ऐसा हाल हो गया है कि जहां देखो वहीं सभाये की जा रही है और हर एक उस

उपदेश देने वालों की धूम

सभा में उपदेश देने की चेष्टा कर रहा है। उपदेशक कहता है कि शराब पीना बन्द कर दो और शाम को होटल में बैठ कर स्वयं बोतलें खाली कर देता है। वह उपदेश देता है कि जुआ मत खेलो परन्तु स्वयं क्लब में बैठकर खूब खेलता है। ऐसे उपदेशकों का समाज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उपदेश देना सहल है परन्तु जिन बातों का उपदेश दिया है, उन पर चलना कठिन है।

सच्चे उपदेशक

जो व्यक्ति जैसा कहते हैं वैसा करते भी हैं, उनकी बात माननीय होती है। ऐसे व्यक्तियों का समाज, जाति और राष्ट्र पर प्रभाव पड़ता है परन्तु ऐसे व्यक्ति बहुत कम होते हैं। आधुनिक युग में महात्मा गांधी इस उदाहरण रूप में लिये जा सकते हैं। आपने जो कुछ भी भारतवासियों को उपदेश दिया, पहले उस पर स्वयं चले। उन्होंने सब को स्वावलम्बी बनने का उपदेश दिया और स्वयं स्वावलम्बी रहे दूसरों को खद्दर पहनने का उपदेश दिया तो स्वयं तो खद्दर पहना। ऐसे व्यक्ति आदर के पात्र होते हैं। उस समय के लोग उनका अनुकरण करते हैं।

झूठे उपदेशक

जो व्यक्ति कोरे उपदेशक होते हैं व राष्ट्र के लिये, जाति के लिये व समाज के लिये कलंक रूप होते हैं। स्वयं बुद्धिमानी का ढिंढोरा पीटते फिरते हैं परन्तु समाज को उससे लाभ नहीं होता। न ऐसे कुशलता पूर्वक अपने उपदेश को समझा ही सकते हैं। कठिनाई या ऐसे समय जब कि मनुष्य किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है, ऐसे बहुत से उपदेशक उपदेश करने आ जाते हैं परन्तु जब उपदेशक महाशय के ऊपर स्वयं कोई कठिनाई आकर पड़ती है तो उन उपदेशों को भूल जाते हैं। इसका कारण यह है कि इन व्यक्तियों का चरित्र गिरा हुआ होता है। ये पुरुष सदाचारी व जितेन्द्रिय नहीं होते। ये

तो केवल जीभ को हिलाकर दूसरों की बुराई निकालना जानते हैं अपनी बुराइयों को ये कभी नहीं देखते हैं। ये तो केवल अपना बड़प्पन दिखा कर अपने मुंह मियांमिट्ठू बनते हैं। ऐसे व्यक्ति अधिक समय तक धोखा नहीं दे सकते। समय पड़ने पर इन सबकी पोल खुल जाती है और इनका वास्तविक रूप सम्मुख आ जाता है फिर ये धोखा नहीं दे सकते।

उपसंहार

प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि जो कुछ वह कहे उसे करके भी दिखाये। जैसे उपदेश दे उस पर स्वयं भी चले। तभी उसका आदर होगा, ऐसे व्यक्तियों को चाहिये कि सदाचारी और जितेन्द्रिय बने। जब स्वयं ऐसा होगा तो दूसरों पर उसके उपदेशों का प्रभाव पड़ेगा और तभी वह सच्चा उपदेशक बन सकेगा।

सङ्गीत विद्या

सङ्गीत का सौंदर्य

सङ्गीत में उन व्यक्तियों के लिये जो कि इससे आनन्द प्राप्त करते हैं बहुत सा सौंदर्य भरा पड़ा है। सङ्गीत में वह शक्ति है, जो हमारे हृदय में तरह-तरह की भावनायें उठा देती हैं। एक कायर से कायर व्यक्ति को वीरता का जामा पहना देती है। करुणारस से ओतप्रोत सङ्गीत को सुन कर आंखों में आंसू तक आ जाते हैं। देश भक्ति के सङ्गीत सुनकर हजारों व्यक्ति देश पर दीवाने हो गये। एक धार्मिक सङ्गीत को सुनकर धर्म के प्रति जो भावनायें उठती हैं, वह हजारों उपदेशों से नहीं उठ सकती। भारतवर्ष में यह कहा जाता है कि तानसेन, बैजूबावरा ऐसे महानसङ्गीतज्ञ थे कि वे जड़ वस्तु को भी सङ्गीत द्वारा चेतन के समान कर सकते थे।

सङ्गीत ने एक कला की दृष्टि से भारत में बहुत उन्नति की है।

भारत व सङ्गीत विद्या।

भारतवर्ष में ऐसी बहुत सी राग-रागनियां हैं जो कि एक विशेष समय के लिये अलग-अलग है। साल के प्रत्येक मौसम के लिये अलग २ रागनियां होती है, यहां तक कहा जाता है कि दिन के प्रत्येक घंटे के लिये अलग-अलग रागनियां होती है। भैरवी प्रातःकाल के लिए उत्तम है और तभी मनोनुकूल होती है। पूर्वी संध्या समय गाई जाती है और विहाग अर्द्धरात्रि के समय अच्छा लगता है। सङ्गीत ने ऐसी उन्नति कहीं और विदेशों में नहीं की, जितनी कि भारतवर्ष में की। भारतवर्ष में सङ्गीत के साथ बजाने के लिए इतने बाजे आविष्कार हुए हैं, जितने शायद विदेशों में न मिलेंगे। ये बाजे सङ्गीतज्ञ को केवल उसकी ध्वनि की ही रक्षा नहीं करते बल्कि संगीत में एक ऐसा रस भर देते हैं कि सुनने वाले रस में झूमने लगते हैं।

भारतवर्ष में सामवेद केवल संगीत की कलाओं से भरा पड़ा है।

भारतवर्ष में संगीतज्ञों के उदाहरण

यह की संगीत विद्या प्राचीन कालमें अति उच्च-कोटि की थी। जब कि संसार असभ्य था तभी भारतवर्ष के अनेक राग रागनियां निकल चुके थे। महान संगीतज्ञ कृष्ण को कौन नहीं जानता। इनकी वंशी की ध्वनि सुन कर आदमियों का तो क्या पशुओं तक को बेहाल होकर दौड़ना पड़ता था। इनकी वंशी की ध्वनि से गोप गोपियों को अपने वस्त्रों तक का ज्ञान न रहता था। दूर जङ्गल में चरती हुई गाये दौड़कर आ जाती थीं। अकबर के समय तानसेन प्रसिद्ध संगीत हुए हैं। इनके विषय में कहा जाता है कि अपने संगीत के बल पर ये जंगल से हिरन तक इकट्ठे कर लेते थे। वह सूखे जंगल को भी हरा भरा कर सकते थे।

इसी समय वैजूबावरा नाम के भी संगीतज्ञ हुए हैं जो कि बुझे हुए दीपकों को भी संगीत विद्या से जला देते थे।

उपसंहार

संगीत विद्या वह विद्या है जो कि सुनने वालों के हृदय पर पहुँच कर आघात करती है। उसके हृदय में ऐसी भावनायें उत्पन्न कर देती है जो कि उसकी समझ में कभी भी नहीं आ सकती। प्राचीन काल में संगीत पर भूमते हुए रण-स्थल को प्रस्थान करने वाले सिपाही प्रसन्नतापूर्वक प्राण दे दिया करते थे। क्योंकि उनके चलने के समय से मारू बाजा बजना शुरू होता और अन्त तक बजता था। जो कि उनके हृदय मे वीरता की भावना भरता रहता था। संगीत विद्या में सभी गुण है। परन्तु अब भारत इस गुण को भूलता जा रहा है। हमे चाहिये कि हम फिर प्रयत्न करें और इस गुण को सीखें।

अछूतोद्धार

विषय प्रवेश

आजकल अछूतोद्धार का कार्य बड़े जोरों से हो रहा है, समाचार पत्रों में नित्य ही यह खबर पढ़ने मे आती है कि आज अमुक जगह अछूतों के लिये मन्दिर खोल दिये गये, आज अमुक जगह उच्च वर्ग के व्यक्तियों ने अछूतों के हाथ से भोजन किया। इन सब बातों को पढ़ कर तथा सुन कर एक विचार दिमाग मे आता है कि क्या वास्तव मे जो कुछ हो रहा है वह ठीक है। यदि वह ठीक है तो ये पहले अछूत कैसे बने और क्यों बने ?

अछूत कैसे बने

अछूत कहे जाने वाले व्यक्ति केवल भारतवर्ष में ही हैं। संसार के और किसी राष्ट्र मे छूआछूत का भेद नहीं समझा जाता है। और राष्ट्रों में पद के अनुसार मनुष्य और मनुष्य में भेद हो सकता है

परन्तु समाज में प्रत्येक मनुष्य, मनुष्य है कोई ऊंच और नीच नहीं, वैसे भी ईश्वर ने हर एक को एक समान अधिकार दिये हैं। ईश्वर की दृष्टि में प्रत्येक मनुष्य बराबर है। ये तो हिन्दू समाज की जाति-व्यवस्था है जो कि किसी समय विद्वानों ने श्रम-विभाजन की दृष्टि से बनाई थी परन्तु समय बीतते २ यह दृष्टिकोण मिट गया और जाति जन्म के अनुसार मानी जाने लगी। जिन व्यक्तियों ने निकृष्ट काय करने का भार ऊपर लिया था या सेवा करने का भार ऊपर लिया था उन्हें शूद्र कहा जाने लगा। कालान्तर में ये शूद्र अछूत के रूप में आ गये। समाज ने इन्हें इतना गिरा दिया कि अपने को पद दलित समझने लगे। इनको छूना भी पाप माना जाने लगा।

हिन्दू जाति का कलंक

भारतवर्ष में हिन्दू जाति की संख्या लगभग ३० करोड़ है, जिनमें से लगभग ८ करोड़ ये अछूत कहे जाने वाले व्यक्ति हैं। वास्तव में इनको अछूत कहना अथवा इनको हीन समझना, इनकी छाया से भी परे भागना हिन्दू जाति के लिये अपमान का कारण है। मनुष्य को मनुष्य से घृणा नहीं करना चाहिये। फिर वे तो तुम्हारी सेवा करते हैं, सेवक से भी घृणा ? यह महापाप है। आज इसी कारण ये अछूत कहे जाने वाले व्यक्ति हिन्दू धर्म से क्लेश तथा अपमान पाकर विधर्मी बन रहे हैं। इस प्रकार हिन्दू जाति की संख्या प्रति दिन घट रही है। मद्रास प्रांत में तो यहां तक है कि शूद्र ब्राह्मण के साथ सड़क पर नहीं चल सकता। साधारणतया प्रत्येक प्रान्त में इतना अवश्य है कि जिन कुओं से ऊंची जाति के व्यक्ति पानी भरते हैं वहा पर उन्हें पानी नहीं भरने दिया जाता, इनके बच्चों को स्कूल में पढ़ने नहीं दिया जाता, इनको छूआ नहीं जाता-आदि।

समय को देखते हुए समाज ने आंखें खोली। सबसे पहले ऋषि

अछूतोद्धार

वर स्वामी दयानन्द ने इन अछूतों को गले लगाया। जगह-जगह आर्यसमाज की स्थापना होने से अछूतों के साथ कटु व्यवहार छूटने लगा। जो शूद्र विधर्मी बन गये थे उन्हें फिर से शुद्ध किया जाने लगा। महात्मा गांधी ने तो इनकी दशा सुधारने में अपने प्राणों की बाजी ही लगादी। गांधी जी तो इन्हें अछूत कहना पसन्द नहीं करते थे और वह उन्हें हरिजन नाम से सम्बोधित करते थे। पं० मदनमोहन मालवीय जी ने इनकी दशा सुधारने में अकथ परिश्रम किया। इन सभी व्यक्तियों के परिश्रम का फल है कि आज समाज ने करवट बदली है। अब हिन्दुओं को अपनी गलती मालूम होने लगी हैं। अपने बिछुड़े भाइयों को गले लगा रहे हैं। यदि वे ऐसा करेंगे तो निसंदेह अपने देश की भलाई करेंगे।

उपसंहार

शूद्र भी मनुष्य होते हैं। वे अपने कर्तव्यके नाम पर आपका गन्दा से गन्दा काम करते हैं, अन्यथा वे भी चाहें तो आपकी तरह इन गन्दे कामों को न करें। फिर इन कामों को आपको करना पड़ेगा। तब आप अपने को अछूत कैसे कह सकेंगे। फिर वे भी तो मनुष्य हैं। मनुष्य को मनुष्य से घृणा नहीं करनी चाहिए। एकता में ही अपनी, जाति की और राष्ट्र की भलाई है। सबको मिलकर छूआछूत का भेद मिटा कर राष्ट्र की उन्नति में लगना चाहिये।

अहिंसा और परमाणुबम

विषय प्रवेश

गत महायुद्ध में जापान को हराने का श्रेय अमेरिका ने परमाणुबम का आविष्कार करके लिया है। परमाणुबम विज्ञान की सबसे अधिक आधुनिक, सबसे अधिक शक्तिशाली एवम् सबसे अधिक विनाशकारी खोज है। इस आविष्कार के होने से समस्त संसार में

हलचल मच गई है, क्योंकि इसके द्वारा किसी भी राष्ट्र को कभी नत मस्तक किया जा सकता है। दूसरी ओर महात्मा गांधी द्वारा राजनीति में प्रथम बार प्रयोग में लाई हुई अहिंसा है। अहिंसा आधुनिक आविष्कार तो नहीं है परन्तु राजनीति में इसका प्रयोग प्रथम बार किया गया है। संसार ने आश्चर्य पूर्ण दृष्टि से देखा कि अहिंसात्मक लड़ाई में महात्मा को पूर्ण सफलता मिली और भारत स्वतन्त्र हो गया। अब देखना यह है कि इनमें कौन अधिक शक्तिशाली तथा कौन अधिक श्रेयस्कर है।

आत्मिक विजय

जापान को अमेरिका ने विजय अवश्य कर लिया पर विजित के हृदय को विजयी विजय न कर सके। जापानियों के हृदय में अमेरिका के प्रति घृणा है। वे इस अवसर की खोज में रहेंगे कि वे किसी प्रकार अमेरिका वालों को अपने देश से निकाल दें और सम्भव है इसी लड़ाई-झगड़े में विज्ञान की कोई ऐसी खोज हो जो कि परमाणुबम से भी बढ़ कर निकले। परन्तु दूसरी ओर अहिंसा से भौतिक विजय ही नहीं बल्कि हृदय पर भी विजय मिलती है। आज संसार में अंग्रेजों की शक्ति दूसरी महान शक्ति गिनी जाती है। अंग्रेजों के ही साथी अमेरिका के निवासी थे, जिनके अधिकार में परमाणुबम जैसी महान शक्ति है। फिर भी अहिंसात्मक युद्ध में विजय अहिंसा की हुई। अंग्रेज झुक गए और उन्हें भारत से जाना पड़ा। संसार की दूसरी महान् शक्ति के घुटने अहिंसा के सामने टिक गये। भारत छोड़ने पर भी भारतीयों के प्रति। अंग्रेजों में घृणा भाव नहीं आया। इसे कहते हैं हृदय पर विजय। अंग्रेज हमारे मित्र हैं। अहिंसा से बढ़कर किसी शक्ति का आविष्कार नहीं हो सकता। क्योंकि यह तो स्वयं ही पूर्ण हैं।

विनाशकारी

परमाणुबम विनाशकारी है। इस परमाणु बम से हीरोशिमा बिल्कुल नष्ट भ्रष्ट हो गया। पहले दिन जो कि एक समृद्धिशाली नगर था, वह क्षण भर में

परमाणु बम

नष्ट भ्रष्ट होकर खंडहर हो गया। हजारों स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढे मारे गये। लाखों की सम्पत्ति नष्ट हो गई। अहिंसा विनाश को रोकती है। अहिंसा का आधार ही यह है कि किसी को कष्ट न होने देना, अहिंसा से विनाश हो ही नहीं सकता, अहिंसा का उपासक मारना नहीं जानता, मरना जानता है।

परमाणु बम का अधिकारी तो शक्ति के बल पर अनधिकार चेष्टायें भी करेगा। जिस राष्ट्र पर राज्य

सत्य की विजय

करने का अधिकार नहीं उन पर भी अधिकार करेगा। परन्तु अहिंसा सत्य पर आश्रित है। असत्य पर अहिंसा का प्रयोग नहीं किया जा सकता। अहिंसा हमें सिखाती है कि 'अधिकार ही बल' है। और परमाणु बम हमें सिखाता है कि 'बल ही अधिकार है। सत्य पर टिकी हुई लड़ाई में संसार में कभी हार नहीं हुई। 'सत्यमेव विजयते' सत्य की सर्वदा विजय होती है। सत्य पर की हुई विजय ही चिरस्थायी भी होती है परन्तु शक्ति पर टिकी हुई विजय चिरस्थायी नहीं होती।

ऊपर लिखे हुए कारणों से हम निसन्देह कह सकते हैं कि अहिंसा की शक्ति परमाणु बम से अधिक है। इस

उपसंहार

युद्ध से राष्ट्र के विजयी व विजेता दोनों में से किसी प्रकार का नाश नहीं होता। विजयी की विजय भौतिक ही नहीं होती बल्कि वह विजित की आत्मा तक को विजय कर लेता है। अहिंसा सत्य पर अवलम्बित है, असत्य पर नहीं। अहिंसा के मानने वाले राष्ट्र का चरित्र उज्वल व ऊंचा होता है। वह निर्बल का सहायक होता है न कि निर्बल को दबाने वाला। ऐसे राष्ट्र सर्वदा उन्नति के शिखर पर पहुँचते हैं।

०

स्त्री के अधिकार

विषय प्रवेश

जब से भारत में राजनीतिक आन्दोलन छिड़ा है, तब से साथ-साथ ही स्त्रियों ने अपने अधिकार का भी आन्दोलन छेड़ रक्खा है। परतन्त्र भारतवर्ष में पुरुष को भी पुरुषत्व के पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं थे भला स्त्रियों की कौन सुनता। स्वतन्त्र होने के साथ साथ स्त्रियों के अधिकारों की ओर भी स्वतंत्र भारत के अधिकारियों का ध्यान गया है और इसका फल है महिला बिल। यह बिल शीघ्र ही जनता के सम्मुख कानून रूप में आ जायगा।

प्राचीन भारत की ओर यदि दृष्टि डाले तो हमे पता चलता है कि स्त्रियों को पूर्ण अधिकार प्राप्त थे। साम्राज्ञी सम्राट् के साथ सिंहासन पर बैठती थी। स्त्रियां पढ़ी लिखी विदुषी होती थीं। गार्गी, मॉडवी आदि इसकी उदाहरण हैं। सभी को पुरुषों के बराबर ही अधिकार था, विवाह आदि मे स्वयवर की प्रथा थी। स्त्रियां स्वयं अपना वर चुनती थी। परन्तु जब से भारत परतन्त्र हुआ और स्त्रियों के ऊपर विदेशियों ने अत्याचार करना आरम्भ किया, तभी से उनके अधिकार छीन लिए गये। उन्हे परदा करना सिखाया गया और उन्हें चहारदीवारी के अन्दर बन्द कर दिया गया। यद्यपि ऐसा करना उस समय अनुकूल था परन्तु अब वह समय नहीं है। स्त्रियां अपने अधिकार प्राप्त करने को व्याकुल है। उन्हे उनके अधिकार प्राप्त होने चाहियें।

उन्हें क्या-क्या अधिकार चाहिए

जब से उन्हे गृहस्थी के कार्य भार संभालने के लिए घर के अन्दर रखा गया है, तब से उनकी शिक्षा बिल्कुल बन्द करदी गयी है। अभी तक बहुत से व्यक्ति जिन पर कि स्त्रियों का उत्तरदायित्व है, उनकी शिक्षा के विरोधी है। उनका कहना है कि स्त्रियां पढ़ कर चरित्रहीन होती हैं,

द्वितीय गृहस्थी का कार्य भार संभालने के लिए पढ़ना लिखना आवश्यक नहीं, यह सब तर्क अनुचित है। उन्हें पढ़ने लिखने का अधिकार मिलना चाहिये। पढ़ लिखकर ही तो वे अपनी गृहस्थी को उत्तमता से चला सकती हैं और उनका चरित्र और उत्तम होगा।

स्त्रियों को पुरुष से हीन नहीं समझना चाहिये। उनको अबला समझकर अयोग्यता की पदवी न देनी चाहिये। पिता की सम्पत्ति पर पुत्र का अधिकार होता है, पुत्री का क्यों नहीं होता। महिला बिल के अनुसार उन्हे भी पिता की संपत्ति पर अधिकार हो जायगा। सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्र में स्त्रियों को भी पुरुष के समान अधिकार प्राप्त होने चाहियें। आखिर वे भी तो उसी समाज व राज्य की अंग हैं, जिनके कि ये पुरुष। स्त्रियों को जो कुछ भी कार्य भार अब तक इन क्षेत्रों मे सौंपा गया है उनमे वे पूर्ण रूपेण सफल भी हुई है। पंडित जवाहरलाल नेहरू की बड़ी बहिन विजयलक्ष्मी पंडित संयुक्त प्रान्त की मन्त्रिणी रहीं और आज कल रूस में भारत की ओर से राजदूत है। सरोजिनी नायडू अपने अंतिम समय तक संयुक्त प्रांतकी गवर्नर के पद पर सुशोभित थी। सामाजिक कार्यों मे श्रीमती सुचिता कृपलानी तथा मृदुला साराभाई ने बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की है। इन सभी ने यह सिद्ध किया है कि वे पुरुषों से किसी कार्य मे हीन नहीं हैं। इसलिए वे पुरुष के समान हरेक अधिकार की अधिकारिणी है।

स्त्रियों ने युद्ध क्षेत्र मे पहुंचकर यह भी सिद्ध कर दिया है कि वे युद्ध में भी भाग ले सकती है। गत महायुद्ध में भारतीय स्त्रियों ने युद्ध के प्रत्येक कार्य मे भाग लिया और सिद्ध किया कि वे पुरुष से इस कार्य मे भी हीन न रहेंगी। फिर तो वे पूर्ण अधिकारों को प्राप्त कर सकती हैं।

पुरुषों को यह अधिकार प्राप्त है एक स्त्री के मर जाने पर वह दूसरा विवाह कर सकता है। फिर यदि स्त्री अपने पति के मर जाने पर दूसरा विवाह करले तो पुरुष चरित्रहीनता की दुहाई क्यो देता

है। पुरुष यदि एक स्त्री से न पटने के कारण अपना दूसरा विवाह कर सकता है तो स्त्री भी पुरुष के अत्याचारों से पीड़ित होकर तलाक की शरण क्यों न लें। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर ही स्वतन्त्र भारत की योग्य सरकार ने महिला बिल बनाया है।

उपसंहार

अब हम सबको मिलकर अपने राष्ट्र की उन्नति करनी है। राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है जब कि राष्ट्र के प्रत्येक प्राणी को समान अधिकार प्राप्त हों। इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम स्त्रियों को उनके अधिकारों के आन्दोलन में सहायता करें। उन्हें घर की चहारदीवारी का बन्दी न समझकर स्वतन्त्र भारत की समान अधिकारिणी समझें।



पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं

विषय प्रवेश

पराधीन होना वास्तव में एक अभिशाप है। पराधीनता में अपार क्लेश है। पराधीन, भले ही वह व्यक्ति है या जाति है अथवा राष्ट्र, कभी भी उन्नति नहीं कर सकता है। पराधीन व्यक्ति की आत्मा तक कुचल दी जाती हैं। वह कभी भी उन्नत मस्तक नहीं कर सकता। पराधीन व्यक्तियों का जीवन बालक, वृद्ध या अपाहिजों जैसा होता है, क्योंकि ये प्रत्येक कार्य में दूसरों के आश्रित रहते हैं। स्वतन्त्र व्यक्ति अपने कार्यों पर स्वतन्त्र और परतंत्र पराश्रित रहता है।

परतन्त्र व्यक्ति का जीवन

परतन्त्र व्यक्ति का स्वयं का कोई अस्तित्व ही नहीं होता, वह तो सर्वथा ही अपने स्वामी के इशारे पर नाचने वाला होता है। उसका जीवन कठ-पुतली के समान पशुओं से भी हीन होता है। पशु भी अपने ऊपर कभी अत्याचार नहीं

सह सकता परन्तु परतन्त्र को सदा अत्याचार सहने पड़ते हैं, वह उनका प्रतिकार नहीं कर सकता। परतन्त्र की कोई इज्जत नहीं होती। उसकी इज्जत प्रतिष्ठा व स्वाभिमान स्वामी के एक इशारे पर धूल में लोटने लगता है। बिल्कुल कठपुतली की तरह उसे इशारों पर ही नाचना पड़ता है। वह इतना पतित होता है कि बुरे से बुरा काम करने पर भी वह अपनी कोई हीनता नहीं समझता।

परतन्त्र राष्ट्र

बिलकुल यही दशा परतन्त्र राष्ट्र की होती है। परतन्त्र राष्ट्र संसार में कभी भी उन्नति नहीं कर सकता। वह प्रत्येक कार्य में अपने अधिकारी पर पर आश्रित होता है और वही परतन्त्र राष्ट्र का भाग्य विधाता होता है। परतन्त्र राष्ट्र की अपनी कहने योग्य कोई वस्तु नहीं होती। स्वयं अपने पर उसे अधिकार नहीं होता। परतन्त्र राष्ट्र के व्यक्ति अशिक्षित निर्बल व निर्धन होते हैं। क्योंकि उनके धन व बल पर विदेशियों का अधिकार होता है। परतन्त्र राष्ट्र के व्यक्ति हीनता की दृष्टि से देखे जाते हैं। जो कुछ परिश्रम से अथवा बुद्धि से, परतन्त्र राष्ट्र के निवासी करते हैं उस पर अधिकार विदेशियों का होता है। विदेशी, परतन्त्र राष्ट्र के निवासियों की बिल्कुल चिंता नहीं करते। स्वाभिमान तो परतन्त्र राष्ट्र में ढूंढने पर भी नहीं मिल सकता। उनकी आत्मा कुचल दी जाती हैं, उनकी भाषा आदि सभी पर परतन्त्रता की छाप होती है। फिर भला उन्हें सुख कहां से उपलब्ध हो। सुख से तो वे सदा दूर रहते हैं।

जब तक कि व्यक्ति में अपनत्व की भावना रहेगी अपने अधिकारों का ज्ञान रहेगा तब तक वह पराधीन नहीं बनाया जा सकता। जब उस की सभी भावनाओं को नष्ट कर दिया जाता है तभी पराधीन बनाया जाता है। भावना व ज्ञान शून्य व्यक्ति कैसे सुख का अनुभव कर सकता है? पक्षी को भी यदि पराधीन बनाकर पिंजड़े में बन्द कर दिया जाय तो उसका समस्त सुख व आनन्द नष्ट हो

जाता है, यद्यपि वह चहकता है परन्तु उसकी चहक में उतना रस और आनन्द नहीं होता जो कि स्वतन्त्र होने पर चहकनेमें मिलता है।

उपसंहार

ऊपर लिखे हुये विचारों से स्पष्ट है कि पराधीन व्यक्ति दुःख का भंडार होता है। सुख तो उसे सपने में भी नहीं मिलता, यही कारण है कि शूरवीर और साहसी व्यक्तियों को पराधीन नहीं बनाया जा सकता यदि पराधीन बना भी लिया जाय तो शीघ्र ही वे प्रयत्न कर स्वतन्त्र हो जाते है। पराधीन बन कर सुख से रहने को वह तुच्छ समझते हैं और स्वतन्त्र रह कर दुःख उठाने को वह श्रेयस्कर समझते हैं। महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, महात्मा गांधी आदि इसके उदाहरण है। इन सभी ने स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए अनेक कष्टों का सामना किया और परतन्त्रता की बेड़ियों को काट गिराया। इसी कारण किसी ने कहा है कि

अधीन होकर बुरा है जीना, है मरना अच्छा स्वतन्त्र होकर।
जो दास होकर मिले भवनमे,सुस्वादु भोजन तो तुच्छ है वह,
सदैव उपवास करके वनमे,विचरना अच्छा स्वतन्त्र होकर ॥

उत्तम विद्या लीजिये यदपि नीच पर होय

विषय प्रवेश

साधारणतया यह नियम है कि उत्तम शिक्षा सदा उत्तम तथा बड़े मनुष्यों से मिलती है और नीच तथा दुष्ट मनुष्यों की संगति से मनुष्य दुष्ट तथा नीच बन जाता है। परन्तु देखा गया है कि कभी कभी दुष्ट और नीच मनुष्योंके पास भी बड़े उत्तमोत्तम गुण पाये जाते है। कभी-कभी उनसे अच्छी शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। ये उत्तम गुण सर्वथा ग्रहणीय है। यह कहना कि अमुक नीच मनुष्य के पास यह उत्तम गुण है, इसलिए हम न सीखेंगे, अनुचित है। नीच व बुरे व्यक्ति से भी हमें शिक्षा गृहण कर लेनी चाहिए।

किसी विद्वान् का कहना है कि विष में भी अमृत होता है

उदाहरण

तभी तो वह मरणासन्न रोगी को भी जीवित कर सकता है। परन्तु यदि यह सोचा जाय कि वह विष है, औषधि के रूप में काम में नहीं लेना चाहिये, अनुचित है। कमल सर्वथा कीचड़ [में खिलता है परन्तु वह फिर भी उत्तम है। महात्मा बुद्ध को वैराग्य का ज्ञान बूढ़ा, रोगी व मुर्दे को देख कर प्राप्त हुआ था। सोना भी तो मिट्टी आदि से निकाला जाता है परन्तु सबको उसकी चाहना होती है। रावण जैसा दुष्ट व्यक्ति जिसके पापों के बोझ से पृथ्वी भी डगमगा रही थी, जब राम द्वारा मारा गया तो श्रीराम ने अपने छोटे भाई लक्ष्मणको उससे शिक्षा लेने भेजा और उसने उत्तम शिक्षायें दीं। स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन मे प्रेरणा अपनी बहन व चाची की मृत्यु से प्राप्त की। कहते हैं कि दत्तात्रेय के चौबीस गुरु थे जिनमें बिल्ली, कुत्ता, चूहा आदि सभी थे। क्योंकि उन्होंने उनसे भी शिक्षा ग्रहण की थी।

ऊपर लिखी हुई इन सब बातों से यह सिद्ध होता है कि अच्छी शिक्षा, गुण व अच्छी वस्तु किसी भी नीच से नीच व्यक्ति पर हो या बुरी से बुरी जगह पर हो, अवश्य ग्रहण कर लेनी चाहिये। जो उत्तम है सो उत्तम है ही। चाहे वह बुरे के साथ हैं अथवा अच्छे के साथ। किसी वस्तु की केवल इसलिए उपेक्षा करना कि बुरे स्थान पर हैं ठीक नहीं। विद्यार्थी के लिए कहा है कि विद्यार्थी का ध्यान बगुला के समान होना होना चाहिये, चेष्टा कौए की सी होनी चाहिये, निद्रा श्वान जैसी होनी चाहिये। यदि विद्यार्थी यह सोच कर कि यह तीनों ही गुण नीच प्राणियों के पास हैं तथा नीचता के कार्यों मे प्रयोग किये जाते है, इसलिए मे ग्रहण नहीं करता, न ग्रहण करे तो उसकी मूर्खता होगी।

मनुष्य यदि गुणग्राहक है तो वह कहीं से भी गुण प्राप्त कर

उपसंहार

सकता है वह यह नहीं सोचता कि गुण नीच के पास है अथवा उच्च के। चींटी से वह परिश्रम करना सीख सकता है, सर्दी व वर्षा में ठिठुरते बन्दर से दूरदर्शिता की शिक्षा ग्रहण कर सकता है। कोयल से मीठा बोलना सीख सकता है। यदि मनुष्य गुण ग्राहक नहीं है तो उसे हर तरह की बातें विस्मृत हो जाती हैं। वह चाहे उच्च से उच्च व्यक्ति के पास बैठे परन्तु सदा ही मूर्ख रहेगा। कहने का सारांश यह है कि मनुष्य को गुण ग्राहक होना चाहिए और गुण उत्तम शिक्षा, विद्यादि जहां भी मिले, ग्रहण करना चाहिये। इसलिए कहा गया है कि

उत्तम विद्या लीजिये यदपि नीच पर होय।
पड़ौ अपावन ठौर में कंचन तजे न कोय ॥

हिन्दू समाज की कुप्रथायें

विषय प्रवेश

भारतवर्ष एक वृहद देश है। वैसे तो इस देश में संसार के लगभग सभी जातियों के व्यक्ति रहते हैं परन्तु अधिकांश जन संख्या हिन्दू है। हिन्दुओं के प्राचीन ग्रन्थों के देखने से यह सिद्ध होता है कि यह जाति संसार में सबसे अधिक प्राचीन है। क्योंकि यह जाति भारतवर्ष जैसे लम्बे चौड़े प्रदेश में फैली हुई है और जन संख्या में भी अधिक है। इसलिये इसमें तरह-तरह की प्रथायें हैं। इन प्रथाओं में से बहुत सी अच्छी हैं और बहुत सी बुरी। वास्तव में इन प्रथाओं का चलन किसी परिस्थिति विशेष में हुआ था। परिस्थितियां सदा एक सी नहीं रहती। समयानुकूल बदलती रहती हैं परन्तु परिस्थितियां बदल जाने पर भी कुछ प्रथायें अब भी वैसी ही हैं, इस कारण अनुपयोगी हैं। कुछ प्रथाओं का स्वरूप ही बदल

गया है। यद्यपि परिस्थितियां भी वही हैं और प्रथा भी वही परन्तु प्रथा का रूप बदल जाने से वह अनुपयोगी हो गई। कुछ प्रथायें अति प्राचीन होने पर भी उत्तम हैं और उपयोगी हैं। जैसे-जैसे भारतवर्ष में शिक्षा का प्रचार बढ़ता जाता है, इन बुरी प्रथाओं का निराकरण होता जाता है। परन्तु अभी भारतवर्ष में शिक्षा की कमी है इस कारण अभी त्रुटियां भी अधिक हैं। हम इन त्रुटियों में से कुछ त्रुटियों को यहां लेंगे।

हिन्दुओं में जाति का भेद बहुत बुरी तरह फैला हुआ है। लगभग २००० जातियां व ७५ जातियां भारतवर्ष में हैं। प्राचीन काल मे जाति-पांति का प्रादुर्भाव श्रम-विभाजन के ऊपर अवलम्बित था। इससे मनुष्य अपने-अपने कार्य में पूर्ण कौशल प्राप्त कर लेते थे। दूसरे इस वर्ण-व्यवस्था ने हिंदू जाति की रक्षा भी की और लोग दूसरी जाति-परिवर्त्तन से बच गये। परन्तु धीरे-धीरे इस श्रम विभाजन के ऊपर अवलम्बित उद्देश्य को सब भूल गये और वह केवल जन्म पर आश्रित रह गई। ब्राह्मण चाहे कितना भी मूर्ख हो परन्तु वह ब्राह्मण के घर पैदा हुआ है, इसलिये पूज्य है। शूद्र भले ही कितना ही प्रतिभावान् हो परन्तु वह शूद्र है इसलिये पढ़ने लिखने का अधिकारी नहीं और अस्पृश्य है। लोग अब वर्ण को तो महत्व देने लग गये परन्तु चरित्र व व्यक्ति को नहीं। जाति-पांति का बन्धन शिक्षा के साथ-साथ कुछ ढीला होता चला जा रहा है। विवाह आदि के समय अब भी इसको महत्व दिया जाता है परन्तु अंर्तजातीय विवाह आदि कानून बन जाने पर यह भी ढीला हो जायगा।

जाति पांति

दूसरी त्रुटि जो हिन्दू समाज मे है वह स्त्रियों की पर्दा की प्रथा है। यह प्रथा विदेशियों के आक्रमण के समय या उनके शासनकाल के समय, स्त्रियों को अत्याचार से बचाने के लिये चलाई गई थी। परन्तु अब ऐसा समय न होते हुए भी यह प्रथा स्वयं स्त्रियों के ऊपर

पर्दा

अत्याचार कर रही है। स्त्रियां परदे से स्वास्थ्यहीन होती हैं! यह समझ कर कि उन्हें कोई देखता नहीं है, इस कारण मलिन वस्त्र धारण किये रहती हैं। घर की वन्दिनी बन जाने के कारण उनका ज्ञान भी संकुचित हो जाता है। यह कहना कि पर्दा की प्रथा का हटाना निर्लज्जता का द्योतक है, ठीक नहीं। पर्दा की प्रथा हटाने से उनका ज्ञान बढ़ेगा और ज्ञान के साथ साथ अनुभव व चरित्र भी बढ़ेगा।

विवाह

हिन्दू समाज में विवाह एक धार्मिक अंग है। मनुष्य जीवन में भी विवाह के ऊपर ही उसका पारिवारिक जीवन आश्रित है परन्तु इसमें भी बहुत सी त्रुटियां आ गई हैं। जैसे बाल विवाह, वृद्ध विवाह व बहु विवाह आदि। इन विवाहों से हिन्दू समाज में विधवाओं की संख्या दिन पर दिन बढ़ती चली जा रही है फिर विधवाओं पर नियन्त्रण इतना कठोर कर रखा है कि उनका जीवन ही कष्टमय कर दिया है। दूसरे विवाह में दहेज प्रथा एक ऐसी प्रथा है, जिसके कारण योग्य से योग्य तथा सुन्दर से सुन्दर लड़की निर्धन मां बाप की होने के कारण अनुरूप वर प्राप्त नहीं कर सकती। कहीं कहीं तो मां बाप योग्य वर को प्राप्त करने के लिए अपने ऊपर इतना ऋण लाद लेते हैं कि उससे वे आजन्म मुक्त नहीं होते। उनका जीवन ही बोझ हो जाता है। विवाह आदि में वर व कन्या की सम्मति नहीं ली जाती। इस कारण भी कभी-कभी पारिवारिक जीवन ही बड़ा कष्टमय व्यतीत होता है। यह सभी त्रुटियां शिक्षा प्रसार से ही नष्ट हो सकती हैं अथवा उन समाज सेवियों द्वारा जो कि इन त्रुटियों को हिन्दू समाज के मस्तिष्क में भर दें।

हिंदू समाज में अन्ध भक्ति व अन्ध विश्वास भी एक बहुत बड़ी

त्रुटि है। इस अंध भक्ति के द्वारा आज हिंदुओं में भिखमंगे साधुओं की संख्या बढ़ी हुई है। यदि इनको कुछ समय भोजन न मिले तो ये तो स्वयं ही काम मे लग जांय परंतु हिंदुओं की अंध भक्ति उनके भोजन मिलने में सहायक है। अंधविश्वास के कारण हिंदू समाज मे झाड़-फूंक, टोटका, भूतादि पर विश्वास बढ़ा हुआ है। इन विश्वासों से हर वर्ष अनेक जीवनों का नाश होता है। इन अंधविश्वासों का नाश होना भी अत्यंत आवश्यक है।

अन्ध भक्ति व अन्ध विश्वास

हिंदू समाज की इन त्रुटियों का नाश तभी हो सकता है जबकि शिक्षा का प्रसार बढ़े व शिक्षा के द्वारा लोग इन बुराइयों को समझें। यद्यपि पश्चिमी सभ्यता के सम्पर्क से कुछ बुराइयां दूर हुई हैं। फिरभी समाज सुधारकों को इस ओर अधिकसे अधिक ध्यान देना आवश्यक है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि ईश्वर हमारे हिंदू समाज से बुराईयां निकाल कर, इसको पवित्र व उज्ज्वल करदे।

उपसंहार

कलम और तलवार (बुद्धि व बल)

कलम का प्रयोजन बुद्धि से है और तलवार का प्रयोजन बल से है। कलम व तलवार इनमें से एक की श्रेष्ठता स्वीकार करने से मनुष्य अपूर्ण रह जाता है। मनुष्य मे बल व बुद्धि दोनों की ही आवश्यकता होती है। प्रथम तो एक के न होने से दूसरा किसी काम का नहीं। द्वितीय यदि किसी तरह एक ही वस्तु मनुष्य को प्राप्त हो तो वह मनुष्य संसार में किसी काम का नहीं।

विषय प्रवेश

आधुनिक समय में कुछ मनुष्यों का विश्वास है कि बुद्धि ही

आधुनिक समय

सब कार्य करती है, बल का होना अथवा न होना एकसा है। यह ठीक नहीं। एक अच्छी बुद्धि सर्वदा स्वस्थ शरीर वाले व्यक्ति के पास होती है। कितना भी अस्वस्थ शरीर हो उसमें थोड़ा या अधिक बल अवश्य होता है। यदि बल नहीं तो शरीर कैसे रह सकता है। जब शरीर नही तो बुद्धि कहां? इसलिये यह कहना कि तलवार का समय गया, अब कलम का समय है अनुचित है। कलम बनाने तक के लिये तलवार के छोटे भाई चाकू की आवश्यकता रहती है। फिर तलवार का समय कहां गया?

तलवार पर अगाध विश्वास

बहुत से मनुष्य तलवार यानी बल पर अगाध विश्वास रखते हैं। उनका विश्वास है कि जिसमे बल है वही सब कुछ कर सकता है, बुद्धि वाला मनुष्य बलवान के सम्मुख खड़ा भी नहीं हो सकता। यह अनुचित है। शारीरिक बल वाला मनुष्य जब तक बुद्धि न हो उस व्यक्ति के समान है जो अन्धा है और पैर ठीक होने पर भी चल नहीं सकता। किसी समय जब मनुष्य असभ्य था, तब बल का बोल बाला था परन्तु सभ्यता के साथ २ बल व बुद्धि दोनों ही साथ २ हो गये है और दोनों की ही आवश्यकता प्रत्येक को रहती है।

हिंसा व अहिंसा

अब तक संसार मे हिंसा द्वारा जो कि बल की प्रतीक है राष्ट्रों का निर्णय होता आया है। परन्तु भारत के राष्ट्र नायक पूज्य बापू ने अहिंसा द्वारा यह सिद्ध कर दिया। और कहा कि बल के अंधविश्वासियो! बुद्धि की भी आवश्यकता होती है। बिना हिंसा के भी विजय की जा सकती है। पूज्य गांधी जी ने बल की परिभाषा ही बदल दी है, उनके कहने के अनुसार बलवान वह है जो कि मरना जानता है न कि मारना जानता है। वास्तव में

यह परिभाषा जँचती भी है। जो अपनी मृत्युको देखकर उसका आलिंगन करने को तत्पर हो वही वास्तव में वीर है। मारने वाला तो अपने जीवित रहने का विश्वास रखता है इस कारण अधीर नहीं होता है परन्तु मरने वाला तो जीवन से जाता है फिर भी अधीर नहीं होता। परन्तु साथ ही बापू ने यह भी कहा कि राष्ट्र को उन्नत करने के लिये शरीर में बल होना भी आवश्यक है। एक स्वस्थ शरीर वाले राष्ट्र निवासियों से ही राष्ट्र की उन्नति हो सकती है।

उपसंहार

इन सभी से यह सिद्ध होता है कि बिना बल के बुद्धि किसी काम की नहीं और बिना बुद्धि के बल किसी काम का नहीं। मनुष्य को चाहिए कि शरीर को स्वस्थ रक्खे और बुद्धि को भी ठीक रक्खे। एक बलवान व बुद्धिमान व्यक्ति ही संसार में आदरणीय होता है। उस मनुष्य की सभी प्रशंसा करते हैं। कलम और तलवार दोनों का धनी ही वास्तव में सच्चा पुरुष है, इन दोनों मे से जिस वस्तु की कमी होती है, तभी पुरुष अपूर्ण व हीन हो जाता है।

—

शरणार्थी समस्या

विषय प्रवेश

भारत ने राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त की परन्तु उसका मूल्य बहुत अधिक देना पड़ा। अंग्रेजों की चाल से भारत का बंटवारा स्वीकार करना पड़ा। भारत मां के दो टुकड़े हो गए। एक हिन्दुस्तान दूसरा पाकिस्तान। पाकिस्तान में इस्लामी राज्य स्थापित हुआ, वहां पर हिन्दुओं का कत्ले-आम आरम्भ हुआ और इस तरह हजारों हिन्दुओं को मृत्यु के घाट उतार दिया। लाखों बे घरबार होकर भारत की शरण आए और शरणार्थी कहलाने लगे। मुसलमानों के ऊपर भी भारत में अत्याचार हुए, परन्तु भारत सरकार ने भारतीय

मुसलमानों की सहायता की और उन्हें उनकी समस्त वस्तुओं सहित जहां जाना चाहते थे पहुँचा दिया। जो यहां रहना चाहते थे उन्हें सुरक्षित रखने का प्रबन्ध भी उत्तम किया। अब भारत देश के सम्मुख पाकिस्तान से आई हुई शरणार्थियों की बाढ़ का उचित प्रबन्ध करने की समस्या बहुत कठिन हो रही है।

उनके घर का प्रबन्ध

प्रथम जो उनका प्रबन्ध करना है वह है कि उन्हें रहने को घर का प्रबन्ध होना चाहिए। इसके लिए जो मुसलमान यहां से घर छोड़कर चले गए हैं उनके घर इन शरणार्थियों को दे देने चाहियें। फिर इनके लिए अलग नगर बसा देने चाहियें। क्योंकि इनकी समस्या बहुत है और भारत के नगरों की दशा निवास स्थान की दृष्टि से पहले ही से खराब हैं। जहां तक हो शरणार्थियों को गांव में भेजना चाहिए क्योंकि वहां पर उत्तमता से रहने का स्थान प्राप्त हो सकता है। उन धनी व्यक्तियों को भी हाथ बंटाना चाहिए जिनके पास कि महल के महल खड़े हुए हैं परन्तु रहने वाले बहुत कम हैं। जिन व्यक्तियों के पास मकान किराया आदि देने का साधन नहीं है उनको सरकार को बिना किराये के मकान बनवा कर देने चाहियें।

जीविका का प्रबन्ध

शरणार्थियों की जीविका का प्रबन्ध अत्यावश्यक है। बहुत से जंगल भारतवर्ष में ऐसे पड़े हुए हैं जो कि कटवा कर इन शरणार्थियों के खेती बाड़ी के काम में आ सकते हैं। जो मुसलमान भारत छोड़ गए हैं उनके व्यापार, खेती बाड़ी व नौकर की जगह इन शरणार्थियों को दे देनी चाहिए। नए नगर बसाकर वहां इनकी दूकानें आदि खुल जाने से भी इनका प्रबन्ध हो जाता है। जिन शरणार्थियों के पास धन की कमी है उनको सरकार द्वारा कर्जा मिलना चाहिये। इस ऋण द्वारा वे अपना कारोबार आरम्भ

करके काम चला सकते हैं। धनी व्यक्तियों को चाहिए कि जितनी सहायता धन द्वारा कर सकें करें।

बहुत से बच्चे अनाथ हैं बहुत सी स्त्रियां विधवा हैं इन सभी का प्रबन्ध यहां के रहने वालों की सद्भावना से हो सकता है। जो व्यक्ति बिना बच्चे के हैं उन्हें ऐसे बच्चों को ग्रहण करना चाहिए। या जिनके पास एक या दो बच्चे हैं और वे अधिक बच्चों को संभाल सकते हैं तो संभाल लेना चाहिए। विधवाओं की जीविका का प्रबन्ध करना चाहिए, यदि वे विवाह करने को सहमत हों तो यहां के युवक सहृदयता के साथ ग्रहण करें। अपहृत महिलाओं को शरणार्थी खुले हृदय से ग्रहण करें, नहीं तो विधर्मियों की संख्या बढ़ जायगी और इन महिलाओं पर अत्याचार होगा।

अनाथ विधवा व अपहृत स्त्रियां

यदि इन शरणार्थियों की जीविका व रहने के स्थान का प्रबन्ध हो जाय तो ये शरणार्थी समस्या शीघ्र ही सुलझ सकती है। प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य है कि वह इन शरणार्थियों का खुली भुजाओं से स्वागत करे। उनके कष्टों को मिटाने की भरसक चेष्टा करे। ऐसा करने में ही उनकी व राष्ट्र की भलाई है। -

उपसंहार

बिजली से लाभ

आधुनिक सभ्यता के युग में यदि बिजली न होती तो एक भारी कमी रह जाती। सम्भवतः इस युग को फिर सभ्यता का युग न कहा जाता। बिजली ने मनुष्य जाति के अनेकानेक उपकार किए हैं; इस महान शक्ति के द्वारा संसार में क्या काम नहीं हो सकता।

विषय प्रवेश

वैज्ञानिकों ने इस विद्युत शक्ति द्वारा शक्तिशाली काम करके दिखा दिए हैं। इससे तरह तरह के आविष्कार करके बता दिए हैं। आज इन आविष्कारों द्वारा मनुष्य जाति का महान उपकार हो रहा है।

विजली से लाभ नगरो में

विजली से अनेकानेक लाभ है। घर में पहले कच्चे तेल के दीवे जलते थे। इन दीवों का स्थान लालटेन ने ले लिया परन्तु अब नगरों में घर २ में विजली जलती है सड़कों पर जलती है और यह विजली की रोशनी वर्षा आंधी ओले में भी जलती रहती है। विजली के द्वारा ही रेडियो, टेलीविजियन, टेलीफून आदि काम करते हैं। रेडियो से हम घर बैठे संसार भर की खबरे सुन सकते हैं। रेडियो से अशिक्षित को भी शिक्षित बनाया जा सकता है। टेलीविजन से संसार में कहीं भी बैठे हुए मनुष्य को देख सकते है। टेलीफोन से दूर बैठे व्यक्ति की बातें सुन सकते हैं। विजली से ट्राम व बस गाड़ियां चलती है जो कि सवारियों को इधर से उधर ले जाने के लिए सबसे सस्ती सवारी है और निर्धन भी इनसे लाभ उठा सकते हैं।

ग्रामों में

गांव मे तो विजली महान उपयोगी हो सकती है। अभी भारत के गांवों मे विजली पहुँची नहीं है यदि पहुँच जाय तो कुट्टी काटने की मशीन, तेल पेलने की मशीन, आटा पीसने की मशीन आदि खूब लग सकती है और मनुष्य लाभ उठा सकता है। खेत जुतवाना, बोना, काटना आदि जैसे अमरीका में विजली द्वारा होता है वैसे भारत मे भी हो सकता है।

विजली से एक मनुष्य अधिक से अधिक काम कर सकता है। विजली द्वारा कार्य इतना शीघ्र समाप्त होता है कि उतने काम को मनुष्य कदापि भी समाप्त नहीं कर सकता। मनुष्य को भले ही उसका खूब अभ्यास व अनुभव हो परन्तु विजली के सामान अच्छा कार्य

हीन कर सकता। विजली द्वारा जो कार्य होता है वह व्यवस्थित व समान रूप से एकसा होता है। संसार की उत्पादन वृद्धि में तो विजली का बड़ा महत्व है।

वैज्ञानिकों ने घर के कार्य करने के लिये भी यानि भोजन आदि बनाने के लिए भी विजली का प्रवन्ध किया है। जैसे पहले कहा जा चुका है कि अब संसार में ऐसे कार्य बहुत कम हैं जो कि विजली द्वारा न हो सकें।

वहुत से डाक्टर विजली द्वारा वहुत से रोगों का उपचार भी करते हैं। अमरीका में जज सच-झूठ का पता विजली द्वारा लगा लेता है। इस तरह से अनेकों लाभ हुए हैं। परन्तु अभी भारत ने विजली से अधिक लाभ नहीं लिया है। क्योंकि अभी तक बिजली भारत में नगरों तक ही निहित है, वह दिन दूर नहीं हैं जब बिजली प्रत्येक गांव में पहुंच जावेगी। साथ ही साथ ग्रामीणजन रहन सहन का स्तर ऊंचा कर लेंगे व उत्पादन शक्ति को बढ़ायेंगे।

उपसंहार

विजली द्वारा थोड़ी हानि भी है। इसके छूने मात्र से मृत्यु की सम्भावना रहती है। कुछ सभ्य देशों में तो फांसी देने की अपेक्षा विजली द्वारा ही मनुष्य को मृत्यु दण्ड दिया जाता है। बच्चे जो कि विजली से परिचित नहीं होते वे अधिक संख्या में हानि उठाते हैं। इस एक हानि को छोड़ कर शेष सब विजली से लाभ ही लाभ हैं। यह राष्ट्र की आर्थिक शक्ति के बढ़ाने में सहायक होती है, इस लिए प्रत्येक का कर्तव्य है कि विजली का उपयोग करके राष्ट्र के जीवन का स्तर ऊंचा करें।

आदर्श जीवन

विषय प्रवेश

आदर्श जीवन का तात्पर्य है उत्तम आचरणों द्वारा अपने जीवन का समय बिताना। ऐसे उत्तम आचरण जिनका कि और मनुष्य भी अनुकरण करें। उत्तम आचरण, उत्तम गुणों को ग्रहण करने से बनते है। संसार मे अनेकों गुण हैं और मनुष्य प्रत्येक गुण को ग्रहण नहीं कर सकता और उन्नति की भी कोई सीमित रेखा नहीं, जितनी मनुष्य चाहे उतनी उन्नति कर सकता है। यहां तक मनुष्य उन्नति करते २ भगवान के पद पर आसीन कर दिये गये परन्तु फिर भी कुछ ऐसे भी गुण हैं जो कि सर्वमान्य है और जो कि मनुष्य को उन्नति की ओर ले जाते है। इन गुणों का पालन करने से ही मनुष्य आदर्श जीवन व्यतीत कर सकता है।

स्वास्थ्य
तप
ब्रह्मचर्य जीवन

सबसे प्रथम आदर्श जीवन में स्वास्थ्य का ठीक होना माना जाता है। जिस व्यक्ति का स्वास्थ्य ठीक नहीं वह जीवन में कदापि उन्नति नहीं कर सकता। प्राचीन काल मे जीवन को चार आश्रमों में विभाजित कर रक्खा था। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। ब्रह्मचर्य जीवन का उद्देश्य ही यही था कि ब्रह्मचारी अपने स्वास्थ्य को उत्तम बनाये व भावी जीवन की तैयारी करे। प्रातःकाल जागना, नित्य थोड़ा या अधिक व्यायाम करना, नियमित व बलप्रद भोजन करना, स्वच्छ रहना व संयमसे रहना, आदि नियमो से सुन्दर स्वास्थ्य बन सकता है। स्वास्थ्य के ठीक होने का समय बचपन से ही होता है। माता पिता आदि गुरुजनों का कर्तव्य हैं कि वे बालकों को स्वास्थ्य के नियम समझावें और पालन करावें। यदि ऐसा होने लगे तो सभी का जीवन आदर्श बन जायं।

ब्रह्मचर्य आश्रम में ही प्राचीन समय में मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति भी की जाती थी। शारीरिक उन्नति के साथ २ मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति का होना अत्यन्त आवश्यक है। विना इनके तो मनुष्य पशु के समान है। विद्या का तात्पर्य पुस्तकें रटकर परीक्षा पास करने से नहीं है बल्कि विद्या का अपने जीवन में उपयोग करने से है जिससे कि जीवन आदर्शमय बन सके। विद्या से मनुष्य दूसरों के प्रति सद्व्यवहार, सद्भावना सहनशीलता, सेवा तथा आदर के भाव जान लेता है। इन्हीं सब गुणों से जीवन, आदर्श जीवन बन सकता है।

मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति

विवाह के उपरांत एक पत्नीव्रत का पालन करना चाहिए और विवाह से पहले ब्रह्मचर्य का। विवाह केवल वासनाओं को तृप्ति करने का ही साधन मात्र नहीं है बल्कि आध्यात्मिक व मानसिक उन्नति में सहयोग देने के लिए होता है। पति-पत्नि परस्पर एक दूसरे को सुख, दुःख में सहयोग दें व दोनों ही एक दूसरे के प्रति सच्चे व विश्वासी रहें।

गृहस्थ का आदर्श जीवन

आधुनिक युग में धन का भी बहुत महत्व है। यदि व्यक्ति सब प्रकार से आदर्श जीवन व्यतीत कर रहा हो और उसके पास धन न हो तो जीवन क्लेश व कष्टमय हो जाता है। अधिक नहीं तो मनुष्य इतना अवश्य कमा सके, जिससे उसका व उसके कुटुम्ब का पालन-पोषण हो सके। जिस जीवन में मांगना पड़े व अपमानित होना पड़े वह जीवन आदर्श नहीं होता।

धन

सदाचार तो आदर्शता का प्राण है। हमें छोटी छोटी बातों के लिये आदर्श जीवन में सतर्क रहना चाहिये। दूसरों से हमें सदा सत्य भाषण करना चाहिये।

सदाचार

सदाचार से तात्पर्य ही दूसरों से मधुर भाषण, जितेन्द्रिय, सत्यभाषी, आस्तिक व धैर्य आदि गुणों से है। और इन्हीं गुणों पर आदर्श जीवन की नींव है। जीवन की उन्नति ही सदाचार मे है।

उपसंहार

आदर्श जीवन बनाने के लिये मनुष्य को महापुरुषों की जीवनियों का अनुकरण करना चाहिये। ऐसे महापुरुष प्रत्येक युग में हुए और अब भी हैं। धर्म अर्थ, काम, मोक्ष सब का एकसा साधन हो सके वही जीवन आदर्श है। आदर्श जीवन से समाज में सामजस्य स्थापित होता है। जिस समाज या राष्ट्र का नैतिक पतन नहीं होता वह समाज व राष्ट्र उन्नति के शिखर पर पहुंचता है। आदर्श जीवन उन्नति का साधन है।

ग्राम्य जीवन तथा नगर जीवन

विषय प्रवेश

ग्राम कच्चे मकानों के छोटे समूह को कहते हैं, जिसके चारों ओर खेत हों, खुली आवहवा हो। शहर उस पक्के मकानों के बड़े समूह को कहते हैं जिस में हर तरह का सामान हर स्थान पर हर समय मिल सकता हो। शहर की जनसंख्या अधिक होती है व ग्राम की कम, वैसे तो गुण व दोष ईश्वर की सृष्टि में प्रत्येक वस्तु में पाये जाते हैं परंतु मनुष्य अपनी बुद्धि द्वारा विवेचना कर गुण दोषों में से दोषोंका परिहार कर गुणों को ग्रहण कर लेता है। ग्राम व नगर दोनों में अपनी अपनी कठिनाइयां, अपने अपने आनन्द और दोनों में पृथक् पृथक् विशेषता हैं।

ग्राम्य जीवन व आनन्द

ग्रामीण व्यक्तियों का स्वास्थ्य अच्छा होता है। उसका कारण है कि वे खुली व स्वच्छ वायु में, खुले मैदान सारा दिवस व्यतीत करते हैं। खूब परिश्रम करते हैं। कुओं से पानी पीते हैं जो कि

स्वास्थ्यप्रद होता है। ग्रामों में प्राकृतिक सौन्दर्य देखने योग्य होता है वह अपनी पराकाष्ठा पर होता है। इस प्रकृति की गोद में ग्राम्य-निवासी पल कर बड़े होते हैं। ग्राम्य निवासी कष्ट सहिष्णु होते हैं। आपस में एकता खूब होती है, इसका कारण यह है कि ग्रामों की जन-संख्या थोड़ी होती है वे एक दूसरे से खूब परिचित होते हैं। एक दूसरे के दुःख व सुख मे सम्मिलित होते हैं। इनका जीवन सीधा-सादा होता है, शहर की तरह वे वाह्य आडम्बरों में नहीं फंसते उनसे परे रहते हैं। इनकी सुख निद्रा में शहरों की तरह कारखानों की खटखट, मोटर की आवाज अथवा और किसी प्रकार की ध्वनि से बाधा नहीं पड़ती। इनके पास खुला मैदान होता है, जिनमें वे गायें, भैंसे पालते हैं और और शुद्ध व ताजे घी व दूध का आनन्द लेते हैं।

कठिनाइयां

ग्रामवासियों को कठिनाईयों का सामना भी करना पड़ता है। ग्रामों में सफाई की बड़ी कमी है। ग्राम के भीतर या कहीं आस पास घूरे बने रहते हैं जिन पर कूड़ा फेंक दिया जाता है। घरों से गन्दा पानी निकालने का उचित प्रबन्ध नहीं होता। इसका मुख्य कारण यह है कि ग्राम निवासी अशिक्षित होते हैं। आजकल भारतीय ग्राम अशिक्षा, अविद्या व अन्ध-विश्वासों के केन्द्र हैं। शिक्षा का तो कोई समुचित प्रबन्ध नहीं है, सिवाय खेती के जीविकोपार्जन का और कोई साधन नहीं है। इस कारण वे अधिकतर निधन होते हैं। उनकी उन्नति भी अधिक नहीं होती। शहरों की तरह पुस्तकालय अथवा वाचनालय वहां पर कोई भी नहीं होता। वैज्ञानिकों के नवीन आविष्कार रेडियो, बिजली आदि का भी इनके यहां अभाव है। सबसे बड़ी कमी जो कि ग्रामों में है वह है कि यहां पर कोई अस्पताल या दवाखाना नहीं होता है। थोड़ी थोड़ी बीमारी के लिए शहर भागना पड़ता है। डाक्टर यहां नहीं मिलते। यहां पर शहर की तरह प्रत्येक वस्तु नहीं

मिल सकती, हर एक आवश्यकता के लिए इनको शहर जाना पड़ता है।

नगर शिक्षा के केन्द्र होते हैं। प्राथमिक शिक्षा से, लेकर उच्च शिक्षा तक नगरों में प्राप्त की जा सकती है। शिक्षा से नगर निवासियों में विचार शक्ति बढ़ी चढ़ी होती है। जितनी भी योजनायें बनती हैं वह सब नगरों से निकलती हैं। यहां पर जीविकोपार्जन के अनेक साधन होत हैं। यहां के निवासी इस कारण धनवान् होते हैं। यहां पर प्रत्येक वस्तु हर समय मिल सकती है। थके मांदे यात्रियों के लिए भोजन, निवास स्थान, विश्राम गृह, आदि सब मिलते हैं। यहां पर अस्पताल, दवाखाने आदि कई होते है। बहुत से डाक्टर होते हैं, हर तरह की बीमारी के इलाज का साधन होता है। डाकखाना, पुलिस आदि का प्रबन्ध हर शहर में होता है। बिजली, रेडियो आदि के साधन होते है। वकील, बैरिस्टर, अदालतें आदि शहरों में ही होते हैं। इस तरह से नगर का जीवन अति सुखमय होता है परन्तु इस जीवन में भी कुछ कठिनाइयां होती हैं।

नागरिक जीवन का आनन्द

प्रकृति के सौंदर्य का अनुभव तो यह लोग कर ही नहीं सकते। तंग गलियों में रहते हैं, जहां भगवान भास्कर की किरणें भी नहीं पहुंच सकती। छोटे छोटे मकानों में भेड़ बकरियों की तरह से भरे रहते हैं। स्वच्छ वायु तो इन्हें कभी भी नहीं मिलती। पानी भी नल का पीना होता है जो कि स्वास्थ्यप्रद नहीं होता। इन सब कारणों से ये स्वास्थ्य सुख से वंचित रहते हैं। सभी व्यक्ति यहां इतने अधिक व्यस्त रहते हैं कि एक दूसरे से सहानुभूति, संवेदना दिखाने का अवसर ही नहीं मिलता। यहां पर प्रत्येक वस्तु मंहगी मिलती है, इस कारण निर्धन पुरुष का निर्वाह कठिन हो जाता है। चरित्र बिगड़ने के साधन भी शहरों में अनेकानेक विद्यमान रहते हैं।

कठिनाइयां

ग्राम जीवन तथा नगर जीवन दोनों ही गुण और दोषों से परिपूर्ण हैं। दोनों में ही दोषों को सुधारने की आवश्यकता है। ग्राम में शिक्षा का प्रचार होना चाहिए। हमारी स्वतन्त्र सरकार इस ओर पैर बढ़ा रही है। शहर निवासी जिन उत्तम साधनों का उपभोग करते हैं, उन साधनों का प्रचार ग्रामवासियों के लिए करें। स्वयं भी प्रकृति का आनन्द प्राप्त करें। ग्रामवासियों की सी सरलता सीखें। एक दूसरे का सहयोग प्राप्त करने से ही एक दूसरे का सुधार कर सकेंगे।

उपसंहार

आधुनिक युद्धों की भयानकता

'युद्ध' संसार के इतिहास में सम्भवतः उतना ही प्राचीन शब्द है जितना कि 'मानव'। युद्ध मानवता के नाम पर एक कलङ्क है। सृष्टि की रचना के निमित्त मनु को युद्ध करना पड़ा। भारत के सुप्रसिद्ध सम्राट अशोक को कलिङ्ग के युद्ध मे रक्तपात करना पड़ा, जो उसके उज्ज्वल नाम पर आज भी सदा के लिए अङ्कित है। पर उन युद्धों तथा आधुनिक युद्धों मे जमीन आसमान का अन्तर है। वह युग भारत का उज्ज्वल युग था। 'धर्म' का हर क्षेत्र मे प्रवेश था। 'धर्म' एक ऐसी भावना थी जिस पर किसी बात का उचित अथवा अनुचित होना निर्धारित होता था। 'सुप्तावस्था में पड़े योद्धा को न मारना' यह उनका धर्म वा सिद्धान्त था। इसी को कार्यान्वित रूप मे लाने के लिए उस समय सूर्यास्त होने पर युद्ध की अग्नि-वर्षा करने वाले सूर्य का भी अस्त हो जाना एक निश्चित तथा अटल सिद्धान्त समझा जाता था।

समाज परिवर्तन शील है। मनुष्य-जो कुछ उसके पास होता है चाहे वह अच्छा हो अथवा हानिकारक उस पर संतुष्ट नहीं रह

सकता। वह नवीनता का पुजारी है। विज्ञान ने तीव्र गति से उन्नति की। विज्ञान-वृद्धि के साथ ही साथ मानव सिद्धान्त भी बदले। मनुष्य स्वसत्ता की स्थापना के लिए मानवता की अपेक्षा करने लगा। आज वह संसार का विजेता बनना जैसे चाहता है। वह विजेता बनने की इच्छा को साथ लेकर परमाणु-शक्ति जैसे संहारक अस्त्रों का प्रयोग करने में भी संकोच नहीं करता। इसी प्रबल इच्छा ने संसार में आधुनिक युद्धों में वह भयानकता ला खड़ी की कि जिसके स्वरूप से सुप्तावस्था में पड़े व्यक्ति भी निश्चिन्त नहीं रह सकते।

आधुनिक युद्धों में इस भयानक आतंक के आगमन का सबसे बड़ा कारण 'वैज्ञानिक उन्नति' प्रमाणित हुई है। वैज्ञानिकों ने आज उन शस्त्रों का आविष्कार कर दिया जिनसे एक ही बार लखों को संख्या में भोले भाले सभ्य पुरुषों को अकाल में ही कालदेव के मुंह में पहुँचाया जा सकता है। वायुयान, बम बरसाने वाले जहाज, टैंकस तथा परमाणु जैसे विध्वंसकारी अस्त्रों की आविष्कृत होना ही आज के युद्ध में सफलता प्राप्ति का साधन है। इन अस्त्रों ने संसार की उन्नति में जो हानि पहुँचाई वह भी अवर्णनीय हैं। आंख की एक ही झपक में लाखों की संख्या में मनुष्यों की अकाल मृत्यु, पवित्र पूजा स्थानों का पतन, अत्यन्त सुन्दर नगरों का भस्म होना तथा सभ्यता को पीछे खदेड़ देना यह सब आधुनिक युद्धों में बच्चों से भी सुगम खेल हो गए हैं। युद्ध में बड़े बड़े विद्वान, साधु पुरुष तथा मानवता के अवतार भी बच नहीं पाते। युद्धों के फल स्वरूप ही स्त्रियें विधवाओं के रूप में तथा नन्हे नन्हे बच्चे अनाथों के रूप में विवश हो या तो एक की निरीक्षणता में आ खड़े होते हैं अथवा गलियों मुहल्लों में दुःखी जीवन व्यतीत करते हुए, राष्ट्र की समस्या बन जाते हैं। युद्ध से ही स्वार्थ प्रवृत्ति, अत्याचार तथा मानसिक कठोरता को प्रोत्साहन मिलता है। युद्ध के फल मीठे होने के स्थान पर खट्टे तथा कड़वे होते हैं। विजेता को प्रायः शक्ति

तथा प्रसन्नता प्राप्ति के स्थान पर विधवाओं के दुःखों, 'पिता जी पिता जी' पुकारते हुए अनाथ बच्चों की तड़पन तथा आंसुओं का सामना करना पड़ता है। वास्तव में युद्ध का अर्थ ही मानवता को त्यागपत्र देना है।

युद्ध की भयानकता अनुभव करने के लिए हमें दूसरी बड़ी लड़ाई की ओर दृष्टिपात करना पड़ता है। जिसमें लाखों की संख्या में गृह दाह का होना, स्थान स्थान पर अग्नि देवता का प्रकोप तथा वायुयानों को गिरा देने वाली तोपों से आकाश का ध्वनित होना प्रति दिवस का कार्य था। देश की आर्थिक, राजनैतिक, औद्योगिक तथा सामाजिक व प्रत्येक क्षेत्र के विकास की उन्नति में बाधा डाली गई। बड़े-बड़े हवाई अड्डे जिनके लिए राष्ट्रों ने करोड़ों रुपये खर्च किए पाताल में प्रविष्ट करा दिये गये। चलती गाड़ियों पर बम-वर्षा की गई। रेलवे स्टेशनों पर मरे हुए पुरुषों की भीड़ देखी गई। सोए हुए पुरुषों पर, नन्हीं-नन्हीं सूरतों पर, प्रेमालाप करते हुए पति पत्नियों पर बम-वर्षा की गई। टैंकों की पारस्परिक टक्करों से एक दूसरे को क्षति पहुँचाई गई, फ्रांस के युद्ध में लगभग २ लाख टैंक बरबाद हुए, कोयटे के भूकम्प की भांति बम-वर्षा से अगणित घर मिट्टी में मिल गए। अगणित संख्या में पुरुष, पृथ्वी का ही भोग बन गए। जिनका चिन्ह मात्र भी देखने में न आया। प्रभु भक्तों को प्रभु के दर्शन भी न होने पाये उनसे पहिले ही मन्दिरों को मिट्टी में मिला दिया। यू-बोटस (U-Botes) तथा तारपीडों द्वारा समुद्री जहाजों का विध्वंस किया गया, कभी-कभी तो अस्वस्थ शान्तिरक्षकों को ले जाते हुए वायुयानों अथवा जहाजों पर भी निर्दयता पूर्वक बम-वर्षा की गई।

आजकल के युद्ध सभ्यता को क्षति पहुँचाने वाले हैं। इनसे सामूहिक रूप में मानवता का संहार होता है। रेलवे जङ्कशनों हवाई जहाजों के अड्डों, सैनिक शफाखानों तथा अस्त्रालयों को बमों की

सहायता से नष्ट किया जाता है। वास्तव में आधुनिक युद्ध को यदि वैज्ञानिकों का युद्ध कह दिया जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। आज के युद्ध विज्ञान पर निर्भर है। जो देश विज्ञान में अधिकतर उन्नतिशील है, उसी की विजय निश्चित है। आज अमेरिका सबका विजेता है, कारण कि उसके पास परमाणु-शक्ति (Atam Bamb) है। तथा संसार उससे भयभीत है। भविष्य में यदि किसी और देश ने इससे बड़ी शक्ति आविष्कार करली तो वह विजेता होगा। आधुनिक युद्ध में शारीरिक शक्ति की इतनी आवश्यकता नहीं जितनी वैज्ञानिक बुद्धि की। परमाणु-शक्ति का आविष्कारक एक लंगड़ा भी हो सकता है और संसार का विजेता हो सकता है पर हृष्ट पुष्ट भीमकाया योद्धा जिसमें वैज्ञानिक बुद्धि का विकास नहीं है, संसार पर अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता।

आज के युग में युद्ध एक ही समय पर हर जगह, हर देश में तथा हर प्रकार का मैदानी, हवाई तथा सामुद्रिक युद्ध के रूप में लड़ा जाता है। आज के युग में यदि कोई मनुष्य चाहे कि वह सेना में भरती न होकर बच सकेगा तो वह कुमार्ग गामी गिना जायगा। आधुनिक युद्ध का कोई निश्चित क्षेत्र नहीं। जहां भी चाहें लड़ा जा सकता है। अमेरिका का वायुयान रूस में सुगमता पूर्वक बम वर्षा कर सकता है। आज युद्ध का क्षेत्र केवल पानीपत ही नहीं देश के भाग्य विधाताओं के निवास स्थान तथा राजधानियां भी बनाई जा सकती हैं।



संयुक्त राष्ट्र संघ

मनुष्य की स्वभाविक प्रवृति है कि वह द्वन्द करता है और उसके पश्चात् स्वाद चखने पर ही उसके इलाज की बातें सोचता है। सब देशों के नेता युद्ध को बुरा समझते हैं पर उनसे इसके बिना

रहा भी नहीं जाता। संसार के सब देश युद्ध के दुष्परिणामों को पहले ही देख चुके थे पर तो भी वे दूसरे युद्ध से दूर न रह सके। पहिले महायुद्ध के पश्चात् आगे के लिए युद्धों को रोकने के लिए लीग आफ नेशन्स बनाई गई थी। इसका उद्देश्य था, भविष्य में युद्ध की सम्भावना को रोके रखना, सब देशों की पारस्परिक समस्याओं को शान्ति पूर्वक सुलझा कर उनमें विद्रोह फैलने से रोकना। इतना होने पर भी जो परिणाम होना चाहिए था वह न हुआ। आशाओं पर निराशाओं के बादल घिरने लगे। पारस्परिक विश्वास न रहा। फलस्वरूप फिर १६३६ में महायुद्ध आरम्भ हुआ। बड़ी बरबादी के पश्चात् १६४६ में यह दूसरा महायुद्ध जर्मनी की पराजय के साथ समाप्त हुआ। युद्ध की समाप्ति पर संसार के बड़े बड़े नेताओं ने शान्ति का मूल्य जाना, उन्हें युद्ध की भयानकता का आभास हुआ। नेताओं ने मानवता का मूल्य पहचानना आरम्भ किया।

इस महायुद्ध के पश्चात सानफ्रान्सिस्को में एक सम्मेलन हुआ। जिसमें बड़े बड़े देशों के प्रतिनिधियों से लेकर छोटे छोटे देशों का प्रतिनिधित्व प्राप्त किया गया। वहां सानफ्रान्सिस्को चार्टर के नाम से मानव-अधिकारों की पत्रिका सी बनाई गई। जिसका उद्देश्य था सर्वदा के लिए मानव जाति से सन्देह, भय, अविश्वास आदि को दूर करना। इसने लालच तथा आक्रमणकारी अभिलाषाओं की कड़ी आलोचना की। आक्रमणकारी देशों की निन्दा करना इसका कर्तव्य हुआ। इस सम्मेलन में सब सम्मति से स्वीकृत हुआ कि संसार में शान्ति रखने के लिये किसी भी देश की आर्थिक राजनैतिक सांस्कृतिक अथवा धार्मिक स्थिति पर गम्भीरता पूर्वक ध्यान देना होगा। यदि किसी देश में ऐसी स्थिति हो जाय जिससे विश्व शान्ति के स्वप्न टूटते दिखाई देने लगें, तो उसका कोई न कोई इलाज करना पड़ेगा। ऐसी स्थिति को देख कर चाहे वह आर्थिक हो चाहे

राजनैतिक विश्व चुप नहीं बैठ सकता। उसे अधिकार होगा कि स्थिति बिगड़ने पर किसी भी देश के शासन में हस्तक्षेप कर सके। अन्तर्राष्ट्रीय महत्वशाली बातों को सुधारने का अधिकार भी उसी को होगा। सानफ्रान्सिस्को के चार्टर का उद्देश्य विश्व में भाईचारा की स्थापना, मित्रता की स्थापना करना, स्थायी शान्ति रखना, शान्ति युक्त युक्तियों से सब झगड़ों को निपटाना। सबको समानाधिकार तथा सबके उत्थान के लिए एक जैसा वातावरण बनाना, निर्भयता का प्रचार तथा अपने अपने विचार प्रकट करने के लिए स्वतन्त्रता प्रदान करना, धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता का प्रयोग करना और सबसे ऊपर युद्धों का रोकना था। इस प्रकार सानफ्रांन्सिस्को के चार्टर ने महायुद्ध से पीड़ित देशों को आशावादी बनाने में बड़ा कार्य किया। किसी एक राष्ट्र का सर्वाधिपत्य के स्थान पर विश्वसंघ बनाने की आशाओं का विश्व में संचार किया। यह चार्टर विश्व के पचास राष्ट्रों को मान्य हुआ। पचास राष्ट्रों के प्रतिनिधि इन संघ के सदस्य बने। इस चार्टर के सिद्धान्तों को मानने वाले इन पचास राष्ट्रों की संस्था का नाम करण संस्कार 'संयुक्त राष्ट्र संघ' के नाम से हुआ, जो आज तक अपना काम सफलता पूर्वक कर रही हैं।

'संयुक्त राष्ट्र संघ' असामान्य संस्था है। विश्व में शान्ति स्थापनार्थ इसके पूर्व भी कई संस्थायें बनी उदाहरणात: 'होली लीग (Holy Loage), कनसरट आफ योरुप (The Concert of Europe) तथा महायुद्ध नं० १ के पश्चात बनने वाली लीग आफ नेशन्स (Leage of Nations) पर ये सब अपने उद्देश्य में असफल रहीं। संयुक्त राष्ट्र संघ अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का आदर्श रूप है। इसने सारे संसार के राष्ट्रों को एक कुटुम्ब के सदस्य के रूप में खड़ा कर दिया है। इसके अधीन कई और शाखायें काम कर रही हैं। उदाहरणात: 'जनरल असेम्बली' 'अन्तर्राष्ट्रीय कोर्ट आफ जस्टिस, सैक्योरिटी कौंसिल (सुरक्षा समिति), सेक्रेटेरिएट, और ट्रस्टीशिप

कौन्सिल। अन्तर राष्ट्रीय महत्व पूर्ण समस्याओं पर निर्णय देना जनरल असेम्बली का काम है। अन्तरराष्ट्रीय झगड़ों पर अन्तिम निर्णय देना 'अन्तर राष्ट्रीय कोर्ट आफ जस्टिस' के हाथ में है। सैक्योरिटी कौन्सिल से विश्व मे शान्ति स्थापित करने की आशा की जाती है। शान्ति भङ्ग न होने देना इस सुरक्षा समिति के अधिकार मे आता है। सेक्रिटेरियेट इस की कार्यवाही को नियमित रूप में चलाने वाला कार्यालय है। अन्तिम संस्था ट्रस्टीशिप कौन्सिल है जिस का काम है उपनिवेशों तथा दूसरों पर निर्भर रहने वाले पृथ्वी भागों पर की बेहतरी की ओर ध्यान रखना। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' इस समय वह संस्था है जिस पर सारे विश्व की आँखें लगी हुई हैं क्योंकि इस संस्था की सफलता तथा असफलता पर ही विश्व की शान्ति निर्भर है।

इस संस्था के जन्म ने 'एक राष्ट्र' बनने की सम्भावना को जीवन दिया है। यदि यह संस्था सफल रही तो सम्भव है कि किसी दिन एक राष्ट्र का स्वप्न भी पूरा हो जाय, जिस में एक ही शासन हो एक ही सेना तथा एक ही विधान हो। दो अथवा दो से अधिक देश ही न रहें। सब अपने को एक देश के वासी समझने लगें।

आशा है कि जिस भांति अब तक इस संस्था ने बड़े बड़े राष्ट्रों को अपने अधिकार में रखा है, किसी ने दूसरे राष्ट्र पर अत्याचार करने से रोका है जिस प्रकार प्रकृति सौन्दर्य के निधि भारत के मुकुट काश्मीर की समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया है, यदि इन्हीं विचारों तथा भावनाओं के साथ-साथ कार्य करती रही तो सम्भव है कि विश्व में युद्ध का शब्द ही लुप्त हो जाय। सारा संसार संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर आशावादी आंखें लगाये बैठा है। सर्व शक्तिमान से प्रार्थना है कि वह सभी देश के नेताओं को अहिंसात्मक भावों से परिपूर्ण करें। शक्ति पर विश्वास रखना सब नेता छोड़े तथा मानवता से प्रेम करना आरम्भ करें।

जन तन्त्र वाद

जनतन्त्रवाद का प्रजा की उस सरकार से अभिप्राय है जो प्रजा के हित के लिये प्रजा द्वारा चलाई जाती है। जनतन्त्रवाद को हम आदर्श शासन कह सकते है। क्योंकि इस प्रकार का शासन किसी विशेष श्रेणी के लोगों के लिये न होकर सामान्य जनता के लिये होता है। यह आम जनता का प्रतिनिधित्व करता है। जन तन्त्र वादी शासन प्रजा की इच्छाओं के अनुसार कार्य करता है। राज्य प्रजा की स्वीकृति पर निर्भर होता है, सत्तापर नहीं। जनत त्रवाद प्रजा की इच्छाओं के ज्ञान-प्राप्ति का साधन है। जनतन्त्रवादी शासन को जनता की स्वीकृति की प्राप्ति अत्यावश्यक होती है। जनतन्त्रवादी शासन प्रायः स्थिर, शक्ति शाली तथा प्रजा के हितैषी प्रमाणित होते है। उन में आकस्मिक परिवर्तन नहीं होते। वह जनतन्त्र व प्रजा के मूल अधिकारों का रक्षक है, प्रजा की स्वतंत्रता तथा समानता जनतंत्र वाद के मूल सिद्धांत हैं। जनतंत्रवाद आम स्वीकृति पर खड़ा होता है। यह आम स्वीकृति ही शासन को स्थायित्व प्रदान करने में आवश्यक वस्तु है। जनतंत्रवाद स्वीकृति पर निर्भर होता है न कि सैनिक बल पर। इसे आज्ञा की अपेक्षा अनुसरण करने की आवश्यकता अधिक होती है। इसका विश्वास हिंसा पर नहीं होता अपितु सहमति प्राप्त करने पर होता है।

जनतंत्र वादी शासन के लिये निर्वाचन, भिन्न २ सिद्धान्तों के लिये बनी हुई सभाओं, प्रकाशनालयों (Press) की स्वतन्त्रता, मत-प्रकाशन की स्वतन्त्रता अत्यावश्यक सिद्धांत हैं। शासन को व्यक्तिगत प्रतिभा पर विश्वास रखना पड़ता है। राज्य के निर्माण अथवा पतन में नागरिकों का महत्व शाली भाग होता है। नागरिकों को भी पैशाचिक जीवन के अभ्यस्त होना पाप कर्म समझा जाता है। नागरिकों को राज के निर्माण में तीव्र लगन से काम

करना होता है। उन से देश के हितैषी होने की स्वाभाविक आशा की जाती है! प्रजा ही शासन का निर्माण करती है और सब महत्व शाली समस्याएं, उन्हीं की स्वीकृति द्वारा विजय प्राप्ति की जाती है। राज्य को जनता की इच्छाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। जनता की इच्छाओं के प्रतिकूल चलना, शासन के लिये संहारक होता है।

जनतन्त्र वादी शासन प्रणाली में विधान सभाओं की स्थापना एक आवश्यक सिद्धांत है। भिन्न भिन्न विषयों पर समितियां बनाई जाती है। विधान परिषदों के सदस्यों का निर्वाचन होता है। जनता के वोटों द्वारा सदस्यों का निर्वाचन होता है। फिर सभाओं में बड़े बड़े विषयों पर प्रजा द्वारा निर्वाचित उन सदस्यों की स्वीकृति लेनी पड़ती है। शासन का प्रधान भी स्वेच्छानुसार देश के राजनैतिक क्षेत्र में एक पग आगे नहीं बढ़ा सकता।। मन्त्रि-मण्डल पर पर सभाओं के प्रति उत्तरदायित्व होता हैं। दूसरे शब्दों में राज्य कार्य वास्तव में मन्त्री-मण्डल पर निर्भर न हो कर जनता के हाथों में राज्य सभाओं द्वारा होना है। जब कभी मन्त्री मण्डल विधान सभाओं के सदस्यों का विश्वास खो बैठते हैं तो उन्हें त्याग पत्र देना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार शासन अधिकारियों में परिवर्तन शान्ति पूर्वक न कि सत्ता के बल पर लाया जा सकता हैं। शासन जब भी जनता के भावों के प्रतिकूल चलता है, जनता उसे अपने निर्वाचित सदस्यों द्वारा आद्योपान्त परिवर्तित कर सकती है। निर्वाचन का भूत मन्त्री मण्डलों को सर्वदा भयभीत किये रहता है। मन्त्रीगण को जनता की इच्छाओं का ध्यान रखना बड़ा आवश्यक होता है। यदि ऐसा न करें तो आगामी निर्वाचन में पराजित होने की सम्भावना रहती है।

विधानानुसार शासन, मत-प्रकाशन की स्वतन्त्रता, समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता आदि जनतन्त्र वाद के स्तम्भ रूप है। विधान

प्रजा के प्रत्येक जनको समानता का अधिकार देता है। जनतन्त्र वादी को प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति को निष्पक्ष दृष्टि से देखना होता है। विधान के क्षेत्र में कोई धनी होने के परिणाम स्वरूप बड़ा तथा निर्धनी होने के परिणाम स्वरूप छोटा नहीं कहा जा सकता। कार्यालयों में आवश्यकताओं की पूर्ति करने में धनी अथवा निर्धनी देखने की आवश्यकता नहीं पड़ती। आवश्यक होता कि अमुक पुरुष शिक्षित तथा बुद्धि शाली है अथवा निरा मिट्टी का माधो। जनतन्त्र वाद पर विश्वास रखने वाले देशों में प्रजा का कोई भी व्यक्ति निस्संकोच तथा निर्भयता से अपना मत प्रकट कर सकता है। कोई भी व्यक्ति शासकों की आलोचना, कारागार का मुंह देखे बिना कर सकता है। स्वार्थी नेताओं अथवा उच्चाधिकारियों के गोपनीय निन्दित कामों को संसार के सम्मुख खोल कर वर्णित कर सकता है। प्रकाशनालयों को यथेच्छा कुछ भी लिखने में पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। समाचार पत्रों द्वारा ही प्रजा के विचारों को उच्चाधिकारियों के कानों तक पहुंचाया जाता है। विचार, भाषण तथा लेखन क्षेत्र में स्वछन्दता का होना जनतन्त्रवाद में आवश्यक बात है। पर इन सब का यह अर्थ नहीं होना चाहिये कि शासन किसी को दण्ड नहीं दे सकता इन सब सिद्धान्तों के कार्यान्वित करने में देश का हित होना आवश्यक है। देश हितैषी के मुख से निकली हुई आलोचना चाहे वह मन्त्रियों के विरोध में ही क्यों न हो ग्राह्य है पर देशद्रोहियों को तो दण्ड देना शासन का परम धर्म है। यदि कोई ऐसे भाषण दें अथवा ऐसे लेख लिखे कि देश की स्थिति बिगड़ने का भय हो जाय तो उसे तो रोकना ही पड़ता है। विचारों तथा कार्यक्षेत्र की स्वतन्त्रता का अर्थ यह तो नहीं हो सकता कि प्रजा का व्यक्ति किसी अन्य देश को बुलावा देकर मातृभूमि की स्वतन्त्रता को विनाश के कुमार्ग पर ले जाय।

जनतन्त्रवाद की कड़ी आलोचना भी की जाती है। लोगों का

कहना है कि जनतन्त्रवाद में जो निर्वाचन होते हैं वे नाम मात्र के लिये ही होते हैं, वास्तव में उनसे कोई लाभ नहीं पहुँचता। जनता की बुद्धि इतनी उन्नत नहीं होती कि वे यह समझ सके कि कौन राष्ट्र का अधिक हितैषी तथा अनुभवी है। राजनीति बड़े-बड़े नेताओं की बुद्धि को चकरा देती है तो सीधे सादे अशिक्षित ग्रामीण लोगों से राजनीति में किसी योग्यव्यक्ति को निर्वाचित करने की आशा करना एक कठिन समस्या है। आलोचकों के मतानुसार तो इस प्रणाली से हानि ही होती है। निर्वाचन के समय लाखों नहीं करोड़ों रुपयों का व्यय करना पड़ता है।

एकतंत्र वाद

सृष्टि के आरम्भ काल में मनुष्य भी दूसरे प्राणियों की भांति एक निरीह जीव था। शनैः शनैः उसने अपनी बुद्धि के द्वारा अपने समस्त कष्टों पर विजय पाई और अपने लाभार्थ नई नई वस्तुओं की खोज की। जंगली पशुओं और सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि से बचाव के लिये उसने मकान बनाये और एक समूह में रहना सीखा। जब उन लोगों की संख्या बढ़ी तो उन्होंने अपने लिये कोई नियमपूर्ण व्यवस्था की आवश्यकता का अनुभव किया। इन्होंने अपने अपने समूह के श्रेष्ठतम व्यक्ति को सरदार चुना और अपने समूह (जो कि अब उनका समाज हो गया था) के लिये कुछ नियम बनाये। परन्तु यह व्यवस्था भी अधिक समय तक न रह सकी और इसका स्थान राजतंत्र ने ले लिया।

मानव सभ्यता के विकास में पितृराज से लेकर अब तक शासन-पद्धति ने अनेक रूप बदले हैं। एक प्रकार से हमारा इतिहास शासन पद्धतियों का प्रयोग भवन रहा है। इन पद्धतियों में राजतंत्र, लोकतंत्र व एकतंत्र मुख्य हैं। एकतंत्र का दूसरा नाम तानाशाही भी है, जो

कि आजकल विशेष रूप से प्रचलित है। वास्तव में एकतंत्र का किसी भी दूसरे तंत्र के साथ सहयोग हो सकता है। क्योंकि लोकतन्त्र या राजतन्त्र कोई भी शासन सत्ता एक व्यक्ति को कार्य करने का पूर्ण अधिकार सौंप सकती है। एकतन्त्र में तानाशाह अपना अधिकार तो प्रायः लोकमत से प्राप्त करता है, परन्तु अपना कार्य करने में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र रहता है।

वास्तव में एक तंत्र की उत्पत्ति का मूल कारण है लोकतंत्र शासन पद्धति का दुरुपयोग, क्योंकि लोकतंत्र शासन में प्रत्येक व्यक्ति अपने को शासक समझने लगता है। जनता अधिकारियों पर अनुचित दबाव डालती है। योग्यता के अपेक्षा धन का मूल्य बढ़ जाता है। विचार-विनिमय का शासन सम्बन्धित कार्यों में प्रमुख स्थान है परन्तु रसोइयों का बाहुल्य शोरबे को खराब कर देता है। यह बात प्रायः तो नहीं किन्तु कभी-कभी लोक शासन में अवश्य चरितार्थ हो जाया करती है। और व्यवस्थापक सभासद बुद्धि कौशल और वाक् पटुता का प्रदर्शन करने की धुन में वृथा समय नष्ट करते है। वास्तव में तो लोकतंत्र और दूसरे तंत्रों में भी शासन-सूत्र एक ही व्यक्ति के हाथ में आ जाता है, क्योंकि शक्ति और प्रतिभा का चमत्कार निष्फल नहीं होता। लोकतंत्र की इन बातों के कारण ही संसार में एकतंत्र या तानाशाही का जन्म हुआ है।

जनता में लोक शासन का मान है और आधुनिक समय में संसार भर की जनता का ध्यान लोकतंत्रों की स्थापना की ओर लगा हुआ है। और सौभाग्य वश अभी तक अधिकतर लोक तंत्रों को सफलता ही मिली है। परन्तु हमारे कुछ वर्ष पहिले का इतिहास हमें बतलाता है कि तानाशाही की सफलता देखकर लोगों का झुकाव उसकी ओर हो जाता है। आपद्-धर्म के रूप में अर्थात् युद्ध आदि की विशेष परिस्थितियों में तो इसकी उपयोगिता सभी स्वीकार करते हैं। तानाशाह का मुख्य ध्येय राष्ट्र के वैभव को बढ़ाना होता है। वह

नैतिक बल की अपेक्षा भौतिक बल को ही महत्व देता है। अपनी शक्ति दृढ़ करने के लिये नई नई वैज्ञानिक चीजों की खोज करवाता है। और राज्य में शान्ति की स्थापना के लिये नियम इत्यादि विषयों के बारे में भी वह व्यवस्थापिका सभा या किसी दूसरी सभा के ऊपर निर्भर नहीं रहता।

यद्यपि एकतंत्र में ऐसे गुण अवश्य हैं जो राष्ट्र-निर्माण में सहायक होते हैं। किन्तु इसमें भी दोष हैं। एकतंत्र अथवा एकाधिकार संकट के समय तो भगवान के वरदान के समान होता है परन्तु वही साधारण-परिस्थिति में ऋषियों के अभिशाप का रूपधारण कर लेता है। 'परम स्वतन्त्र शिर पर नहिं कोई' की परिस्थिति में सिर फिर जाय तो कोई आश्चर्य नहीं। तानाशाह एक बार शक्ति प्राप्त करके ऐसे नियम और बन्धन लगा देता है कि जनता उससे अधिकार लेने में असमर्थ हो जाती है। जनता को तानाशाह की हर एक बात बिना कान-पूँछ हिलाये बुरी हो अथवा भली, स्वीकार करनी पड़ती है। कोई इनके कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता या कर नहीं सकता क्योंकि श्री तुलसीदास जी ने भी कहा है कि 'समरथ को नहिं दोष गुसाईं' तानाशाह भी अपने राष्ट्र का सर्वाधिकारी ही होता है। यद्यपि राजतंत्र की भांति तानाशाही वंशानुगत नहीं होती और योग्य पिता की अयोग्य संतान के कलंक से बची रहती है।

तानाशाही कई प्रकार की होती है। प्राचीन रोम में भी एकाधिकारी तानाशाह नियुक्त होते थे। बहुत से तानाशाह लोकमत से शासन-सूत्र ग्रहण करते हैं, और बहुत से अपने आतंक के कारण लोक-मत को हाथ में ले लेते हैं। तानाशाही राज्य एक प्रकार से राजतंत्र ही होता है। उसमें नौकर शाही की सी हृदय-हीनता भी नहीं होती, और तानाशाह अवसर पर लोक-प्रिय राजा की भांति नियमों के जाल से ऊपर भी उठ सकता है। तानाशाह प्रायः कीचड़ के कमल की भांति दीन-हीन परिस्थिति में उत्पन्न होकर अपने अदम्य उत्साह,

परम कष्ट सहिष्णुता और लोहे की दृढ़ता के द्वारा ऊंचा उठकर 'वीर भोग्या वसुंधरा, की कहावत को चरितार्थ करते हैं। लोकमत भी उनका छायानुगामी हो जाता है। वर्तमान युग में अर्थात् बीसवीं सताब्दी के प्रसिद्ध तानाशाह हर हिटलर, मुसोलिनी और कमाल पाशा थे और श्री स्टालिन अब भी विद्यमान हैं। परन्तु ये सब एक से नहीं थे। सबको ही शैशव अवस्था दीन-हीन परिस्थितियों के अन्दर समाप्त हुई।

व्यवहार की दृष्टि से तानाशाही अधिक लोक-प्रिय है। राष्ट्र की उन्नति के लिये तानाशाही प्रणाली श्रेष्ठ सिद्ध हुई है। क्योंकि समस्त राष्ट्र की शक्ति तानाशाह के साथ रहती है और न ही लोक तंत्र की भांति यहां दो मुल्लाओं में मुर्गी हराम की कहावत चरितार्थ होती है। एकतंत्र चाहे तो राम राज्य स्थापित कर सकता है, किंतु राज्य और अधिकार का त्याग करने वाले और लोकमत को प्रतिष्ठा देने वाले राम सदृश महापुरुष देश के भाग्य से उत्पन्न होते हैं। न्याय और नीति की दृष्टि से जनतंत्र शासन सर्वश्रेष्ठ कहा जा सकता है। इसमें व्यक्ति और जनता का मान रहता है। कोई भी व्यक्ति मत और वर्ण के कारण अधिकार च्युत नहीं किया जाता है। तात्पर्य यह है कि राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार दिये जाते हैं। और हमारे लिये जनतंत्र ही शासन-प्रणाली में गर्व करने की एक वस्तु है क्योंकि यह प्रणाली मानव-जाति के इतिहास (और विशेषकर आर्य जाति के इतिहास) की सबसे प्राचीन प्रणाली है।

- ०

साम्यवाद और समाजवाद

मनुष्य विकसित जीव कहा जाता है। उसकी प्रकृति ही जिज्ञासा युक्त है। उसने आदि काल से लेकर अब तक अपनी बुद्धि के द्वारा आश्चर्यजनक उन्नति की है। मनुष्य को अपने जीवन में अनेक कष्टों

का सामना करना पड़ता है और वह अपनी तीव्र बुद्धि से उन कष्टों पर नियंत्रण पाने के लिए कोई न कोई उपाय खोज लेता है। जहां उसने विज्ञान के आश्चर्यजनक आविष्कार किए, वहां समाज में उत्पन्न कुरीतियों को दूर करने के लिए अनेक सुधार किए। आज-कल के प्रचलित साम्यवाद, एकसत्तावाद, समाजवाद, गांधीवाद, और अन्तर्जातीयवाद इत्यादि इन्हीं सुधारों के नाम है।

आज से कोई छासठ साल पहिले साम्यवाद के जन्मदाता श्रीयुत कार्ल मार्क्स का जन्म हुआ। और इन्होंने साम्यवाद के सिद्धान्तों को जन्म दिया, जो कि आज वर्तमान युग का प्रबलतम विचार है। कार्ल मार्क्स ने अपनी विद्वतापूर्ण युक्तियों के द्वारा प्रमाणित करके बता दिया था कि पैदावार का अधिकतर भाग पूंजीपतियों के पास चला जाता है और न्यूनतम भाग वास्तविक अधिकारी श्रम जीवियों को मिलता है। उनका मुख्य सिद्धान्त था कि पूंजीपति भी अपनी योग्यता और श्रम से अधिक भाग न लें। उत्पन्न की हुई वस्तु का वास्तविक अधिकारी उत्पन्न कर्त्ता ही है।

समाजवाद भी साम्यवाद का ही एक अंग है, दोनों में कुछ भेद के अतिरिक्त पूर्ण एकय है। इन दोनों विचार धाराओं के मानने वाले चाहते हैं कि सत्ता मजदूरों और किसानों के हाथ में हो। किसान अपनी भूमि का स्वयं स्वामी हो। भूखे नङ्गों को रोटी कपड़ा मिले। पर इन दोनों के उद्देश्यों में सबसे अधिक अन्तर इतना ही है कि साम्यवादी वैयक्तिक सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं मानते, परन्तु समाजवादी जिनका कि आजकल बहुत समर्थन किया जा रहा है, छोटी-छोटी वैयक्तिक सम्पत्ति यथापूर्व रखना चाहते हैं। एक महान् अन्तर और भी है। समाजवादी सर्वदा ही वैधानिक कार्यवाही द्वारा समाज में परिवर्तन लाना चाहते हैं परन्तु साम्यवादी सर्वदा ही हिंसा व शक्तिद्वारा साम्यवाद का प्रचार करते हैं।

साम्यवाद का सिद्धान्त है कि कृषक अन्न उत्पन्न करे परन्तु उस पर राष्ट्र का अधिकार हो। मजदूर कल कारखानों में वस्त्रादि वस्तुओं की उत्पत्ति करें यह भी राष्ट्र की ही सम्पति हो, इसी भाँति मकान इत्यादि का निर्माण व्यक्तिगत श्रम के द्वारा हो। परन्तु उस पर भी राष्ट्र का प्रभुत्व हो। इन सब वस्तुओं से राष्ट्र को लोगों की सब आवश्यकताओं को पूर्ण करना होगा। सबको आवश्यकता के अनुसार यह राष्ट्र ही काम या वस्तुयें देने के लिए उत्तरदायित्व होगा।

परन्तु व्यवहार की दृष्टि से यह सिद्धान्त अक्रियात्मक है और रहा है। यह एक प्रकार से बगैर जीने के मकान की छत पर पहुंचने के बराबर है। इस सिद्धान्त और आजकल की आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों के मध्य अत्याधिक अन्तर है और यही कारण है कि बड़े-बड़े राष्ट्रों मे ऐसा होना सम्भव नहीं है। इस अन्तर को कम करने के लिए जो मार्ग है वह समाजवादी विचार-धारा का मार्ग है। यदि पहले समाजवाद की लोक-प्रियता बढ़ जाये और संसार इसी विचार धारा का अनुगामी हो जाये तो साम्यवाद का उपर्युक्त सिद्धान्त भी सफलता पूर्वक क्रियात्मक रूप में आ सकता है।

समाजवादी दल का मुख्य ध्येय है कि संसार या एक राष्ट्र के धन का समान वितरण, जो प्रत्येक निर्धन और धनवान को उसकी योग्यता और श्रम के अनुसार हो। वेतन या मजदूरी के अन्तरों को घटाकर समान स्तर पर लाया जाय। छोटे-छोटे घरेलू धन्धोंको जातीय अधिकार मे रखा जाय। जाति ही उनका प्रबन्ध करे और जाति ही उनका लाभ भी अपने जाति कोष में रखे। जैसे रेल आदि बड़े व्यापारिक कार्य सरकार अपने हाथ में रखती है और उसके लाभ पर सरकार का अधिकार होता है, उसी प्रकार, कपड़ा, लोहा खाँड, चमड़े आदि के बड़े-बड़े कारखानों पर सरकार अपना प्रभुत्व

रक्खे। बड़े-बड़े भूमिपतियों से भूमिका लेकर सरकार उनका प्रबन्ध स्वयं करे और काश्तकार ही भूमि के वास्तविक स्वामी हों।

साम्यवाद और समाजवाद में कुछ सिद्धान्तिक मतभेद होने पर भी दोनों का लक्ष्य प्रायः एक ही है। दोनों ही मानवजाति के लिए विश्वबन्धुत्व को मानते है। दोनों का उद्देश्य मानव जाति को नैतिक, आर्थिक और धार्मिक दृष्टि से उन्नत बनाना है। उनका कहना है कि संसार में निर्धनों की संख्या सबसे अधिक है और उनके कल्याण में ही संसार का सच्चा कल्याण है। राष्ट्र व्यवसायों को अपने हाथ में रखकर आर्थिक अशान्ति को,जो कि पूंजीपति की स्पर्धा के कारण उत्पन्न होती हैं, कम कर सकता है। समाजवाद के अनुसार जातीय हितों की रक्षा होती है और आर्थिक अवस्था उन्नत होती है। समाजवाद या साम्यवाद ही संसार मे निर्धनता को दूर करके प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने का अवसर देते हैं।

भारतवर्ष मे प्राचीन काल से ही आध्यात्मिकता का बोलबाला रहा है। प्राचीन ऋषि लोग धन को आध्यात्मिक मार्ग में बाधा समझते थे। धन सम्पन्न लोग निर्धनों के चरण छूते थे। भारतवर्ष को ऐसे ही आध्यात्मिक समाजवाद या साम्यवाद की आवश्यकता है, जिससे जनता मे धर्म-परायणता का विकास हो, देश में सर्वत्र स्थायी-शान्ति का राज्य हो, जिससे देश की आर्थिक और राजनैतिक उन्नति का प्रबलतम विकास हो। जो साम्यवाद अथवा समाजवाद शांत क्रान्ति द्वारा राष्ट्र की राजनैतिक अथवा सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन करना चाहता है, उसी साम्यवाद अथवा समाजवाद की भी आवश्यकता है। हिंसा या शक्ति के प्रयोग द्वारा फैलने वाला कोई भी वाद हो, वह देश के लिए सर्वदा ही अहित कर सिद्ध हुए हैं।

--- ॐ ---

साम्राज्य वाद

जब कोई एक राष्ट्र पर उसके जनमत की अपेक्षा करके बल पूर्वक अधिकार करले और शासक वर्ग ही उस देश का सर्वेसर्वा हो, इस भांति जो राष्ट्र उस राजा या शासक के अधीन होंगे, वे उसका साम्राज्य कहलायेंगे।

दूसरी शासन पद्धतियों की भांति सम्राज्यवाद की प्रणाली भी बहुत प्राचीन है। महाराजा अशोक का साम्राज्य इतिहास प्रसिद्ध है। परन्तु उस समय के साम्राज्यवाद और इस समय के साम्राज्यवाद में एक भारी अन्तर भी है। उन दिनों अधिकांश जातिगत राज्य थे और हर एक जाति के अपने अपने अलग राज्य थे। एक ही देश में कई राज्य बने हुए थे, उन दिनों यदि उस देश का या उसके पड़ोसी देश का राजा अपनी शक्ति से दूसरे एक या अनेक उन छोटे छोटे जातीय राज्यों को अपने आधिन कर लेता था तो वह भी उसका साम्राज्य कहलाता था। जैसे कि अकबर, हर्ष आदि के साम्राज्य रह चुके हैं।

परन्तु आजकल का साम्राज्यवाद वैसा नहीं है। आज कल जो साम्राज्य स्थापित किये गये हैं, वह हजारों मील दूर की एक विशेष रंग की जाति ने अपने पड़ोसियों की सहायता से दूसरे देशों के घरेलू विषयोंमें हस्तक्षेप करके और फूट डाल करके उन देशोंकी जनता को धोखा देकर के उसपर अपना अधिकार जमा लिया। ये शासक लोग केवल अपने स्वार्थ के अतिरिक्त उस अधिकृत देश की उन्नति इत्यादि की उपेक्षा करते रहते हैं वहां पहिले जमाने के शासक लोग उन अधिकृत देश या राज्य को भी अपनी ही मातृ भूमि समझते थे और उसकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझते थे। आधीन राज्य और अपने राज्य में कोई भेद नहीं रखते थे।

आधुनिक साम्राज्यवाद में लाभ केवल शासक वर्ग को ही होता है। वर्त्तमान समय में दुनिया के आवागमन के साधन अति उत्तम और सुविधाजनक हैं, और संसार भर के सब देशों का आपसी व्यापारिक सम्बन्ध इतना बढ़ गया है कि हर एक देश दूसरे देशों को माल भेजते हैं। शासक राष्ट्र इस प्रकार से शासित देश का व्यापार अपने लिये सुरक्षित रखता है। और उस देश की उपज तथा दूसरी वस्तुओं से भी कर इत्यादि द्वारा लाभ उठाता है।

शासक वर्ग तथा सम्राट् अपने साम्राज्य से लड़ाई और अशान्ति के दिनों में भी पर्याप्त लाभ उठाता है। युद्ध का बहुत सा आवश्यक सामान और जन धन की बहुत सी सहायता उसे अपने साम्राज्य के राष्ट्रों से प्राप्त होती है और युद्ध लड़ने के साधनों का विस्तृत क्षेत्र भी। सम्राट अपने देश या जाति के मनुष्यों को दूसरे देशों में उच्च पदों पर नियुक्त कर देता है, जिस से उस जाति और देश की वैभव की उन्नति होती है।

सम्राज्यवाद से लाभों की अपेक्षा संसार को हानि ही अधिक उठानी पड़ती है। स्वतन्त्रता जो कि हर एक मानव का जन्म सिद्ध अधिकार है, एक सम्पूर्ण देश के मनुष्यों को उससे वंचित होना पड़ता है। दूसरे शासित जाति या देश के मनुष्यों का आत्मसम्मान लोप हो जाता है। वे अपने आप को तुच्छ, निर्बल और अपने पूर्वजों को मूर्ख समझने लगते हैं। दूसरे देशों मे भी इनका अनादर ही होता है। समाज के अन्दर भ्रष्टाचार बढ़ जाता है, लोगों में स्वार्थ की भावना प्रबल हो जाती है। राष्ट्रीयता का सर्वथा लोप होजाता है। देश अज्ञान और कंगाली का घर बन जाता है। लोगों में निराशा की भावनाएं फैल जाती हैं। और लोग तुलसी दासजी के 'कोउ नृप होय हमें का हानि। चेरी छांडि न होइव रानी' का मंत्र जपने लगते हैं। इन लोगों को हर समय दूसरों का मुंह ताकना पड़ता है। और इस प्रकार एक सम्पूर्ण देश पतन के गढ़े में गिर जाता है।

विधान परिषद सर्वदा ही दो सिद्धांतों पर बनती है। प्रथम तो इच्छा शक्ति राज्य की जड़ नहीं हो व द्वितीय साधारण जनता की सद्भावनाओं से राज्य की नींव पड़े। विधान परिषद का अन्वेषण प्रथम फ्रांस की क्रान्ति से हुआ था जबकि फ्रांस की एक सत्तात्मक शासन प्रणाली को तोड़ देने के लिये क्रान्तिकारियों के नेताओं ने विधान परिषद का नारा लगाया था। तदुपरान्त यह सर्वदा जनतंत्र शासन प्रणाली में जनता द्वारा विधान बनाने के उपयोग में आती रही है।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त कांग्रेस सरकार ने भी इसी प्रणाली का उपयोग किया। भारतवर्ष की शासन प्रणाली जनतन्त्र शासन प्रणाली है। भारतीय प्रतिनिधियों द्वारा राज्य-संचालन के लिये विधान परिषद में विधान निर्माण किया जारहा है। हम देखते हैं विधान के ऊपर इस परिषद में अनेक तरह वादविवाद होता है। अनेक प्रकार से विधान में काट छांट की जाती है अनेक सुधार भी विधान में रक्खे जाते हैं और इस प्रकार विधान के केवल उसी भाग को विधान में सम्मलित किया जाता है जो कि सर्वमान्य होता है। ऐसा विधान सर्वमान्य तो होता ही है साथ ही जनतंत्र शासन प्रणाली को सार्थक भी करता है व हमारी स्वतन्त्रता का द्योतक भी है। तात्पर्य है कि हमें स्मरण रखना है कि अब हम परतंत्र नहीं स्वतन्त्र हैं और अपने भाग्य के आप निर्माता हैं।

विधान परिषद के द्वारा भारत की अनेक समस्यायें भी हल हो चुकी हैं। भारत की हिन्दू मुस्लिम समस्या स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरांत एक उग्र रूप धारण कर चुकी थी। इस समस्या का हल विधान परिषद द्वारा विधान बनाये जाने से भी बहुत कुछ हुआ। हम देखते हैं कि हमारी विधान परिषद के सदस्य जहां हिन्दू हैं वहां मुसलमान भी हैं और जो विधान बना वह भी दोनों को मान्य हुआ।

जब राज्य संचालन दोनों को ही मान्य हुआ तो झगड़ा भी शान्त हो गया है।

दूसरी समस्या रियासतों की थी। इस समस्या का हल भी बहुत कुछ विधान परिषद द्वारा हुआ। क्योंकि विधान परिषद में रियासतों के प्रतिनिधि भी बैठते हैं व प्रस्तावित विधान के उस भाग को जिससे कि रियासतों का सम्बन्ध होता है, उनका मत भी लिया जाता है। तात्पर्य है कि जब वे स्वयं अपने विषय में विचार कर सकते हैं अपना विधान बना सकते हैं, तो उनकी समस्या का बहुत कुछ हल उन्हें मिल जाता है। इस प्रकार और भी समस्यायें इसके द्वारा हल हो जाती है।

स्वतन्त्र राष्ट्र में विधान परिषद को सफल बनाने के लिए यह अति आवश्यक है कि समस्त जनता का विश्वास उसे मिलता रहे। द्वितीय जो प्रतिनिधि विधान परिषद में जावे वे केवल अपने दल का जिसके द्वारा के चुने गये हैं, ध्यान न रक्खें अपितु समस्त राष्ट्र का ध्यान रक्खें। जो प्रतिनिधि विधान निर्माण करने में सहयोग देते हैं, उन्हे संकीर्णता से दूर रहना चाहिये। अन्यथा उनकी संकीर्णता समूचे राष्ट्र को हानिप्रद हो सकती है।

उपर्युक्त रूप मे यदि हम भारतीय विधान परिषद को देखें तो हम देखने के साथ कह सकते है कि हमारी स्वतन्त्र भारत के राज्य विधान को बनाने वाली विधान परिषद को आज समस्त भारतीय जनता का विश्वास प्राप्त है क्योंकि सभी प्रतिनिधि जोकि इस परिषद के लिये चुने गये थे, वे विधान परिषद मे विधान निर्माण के लिये उपस्थित है व विधान निर्माण मे सम्पूर्ण सहयोग दे रहे हैं।

द्वितीय हमारी भारतीय विधान परिषद में धर्म विचार आदि की संकीर्णता भी नहीं है। विधान परिषद के सभापति डा० राजेन्द्र प्रसाद देशरत्न, स्वतन्त्र विचारों के एक अनुभवी, सुयोग्य रत्न, विद्वान व्यक्ति है। इन जैसे सुयोग्य व्यक्ति की अध्यक्षता में

निसन्देह एक ऐसा विधान तैयार होने की आशा है जो कि भारत के प्रत्येक नागरिक को सन्तोष प्रदान करेगा। प्रस्तावित विधान का निर्माण डा० भीमराव अम्बेदकर कानून मंत्री की अध्यक्षता में हुआ है, जिनकी योग्यता का सिक्का आज भारतीय जनता के हृदय पर जमा हुआ है। हम जानते हैं कि विधान को पं० जवाहरलाल नेहरू व सरदार पटेल जैसे देशभक्तों की संरक्षकता प्राप्त है। फिर विधान निर्माण में कोई कमी आ सकती है ऐसा सोचना ही व्यर्थ है। प्रत्येक भारतीय को यह पूर्ण आशा है कि, जो विधान, स्वतन्त्र भारत की विधान परिषद द्वारा बनेगा वह एक श्रेष्ठ विधान होगा।

प्रेस और उसके लाभ

प्रेस अत्यन्त शक्तिशाली तथा प्रभावशाली यन्त्र है। यह जनता के विचारों का निर्माता है। जनता को कुमार्ग से सन्मार्ग पर लाना प्रेस का ही काम है। लोगों के गलत विचारों को ठीक करना इसी के हाथ में है। पाठकोंकी सांसारिक समाचारों द्वारा शिक्षित करना, प्रेस के हाथ में होता है। देश में सदाचारों का फैलाना तथा सामाजिक सुधार करना जनता की प्रवृत्ति को सन्मार्ग की ओर प्रवर्तित करना प्रेस के कार्य क्षेत्र में आते हैं। शिक्षित जनता का तो वह प्राण है पढ़े लिखे व्यक्ति के लिये एक दिन के लिये भी समाचार पत्र का अध्ययन किये विना रहना अत्यन्त कठिन समस्या है। पठित व्यक्तियों के लिये तो यह अधिक भूख है। जिस प्रकार वे खाद्य पदार्थों के बिना नहीं रह सकते, वैसे ही पठित जन समाचार पत्रों के पढ़े विना दिन के कार्यक्रम में पदार्पण नहीं कर सकते। प्रेस अपने इस आकर्षण के कारण सामाजिक जीवन का एक विशेष अंग बन चुका है।

प्रेस से सबसे अधिक लाभ जो कि एक छोटा सा बच्चा भी जानता है, वह है समाचारों का एक कोने से दूसरे कोने तक फैलाना।

प्रकाशनालय (Press) में उनके अपने विशेष प्रतिनिधि होते हैं। जो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भेजे जाते हैं। वे अपने अपने क्षेत्र में होने वाले समाचारों का विवरण प्रकाशनालय के सम्पादक के पास भेजते है। इस प्रकार देहली में बैठे पुरुष समाचार पत्रों द्वारा आंग्ल देश के समाचारों का ज्ञान सहज में प्राप्त कर लेते है। प्रेस, टेलीग्राफो तथा वायरलेस के प्रयोग द्वारा संसार के दूरवर्ती देश की सूचना भी घंटों में प्राप्त कर लेते हैं। जो बात रातके समय अमेरिका में होती है, वह प्रातः हमारे पास समाचार पत्रों द्वारा पहुंच जाती है। इस प्रकार हम यहां बैठे-बैठे अमेरिका के जीवन से परिचित हो जाते हैं। जहां भी कोई महत्वपूर्ण घटना हो, प्रेस अपने प्रतिनिधि भेजकर उसका शुद्धज्ञान प्राप्त करते हैं और उसे फिर समाचार पत्रों द्वारा जनता में फैलाते हैं। इनके प्रतिनिधि, देश के भाग्य के निर्माता विधान सभाओं तथा लोक सभाओं में भेजे जाते हैं और वहां का कार्यक्रम जनता के सम्मुख रखते हैं। जनता को देश की राजनैतिक आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्रेस द्वारा ही प्राप्त होता है।

प्रभावशाली नेताओं के प्रमुख लेख जनता के मत-निर्माण में सुन्दरता व सरलता से पहुंचाते हैं। जनता की हानिकारक धारणाओं को परिवर्तित कर उन्हें सन्मार्ग पर लाना प्रेस में प्रकाशित प्रमुख नेताओं के लेखों का काम है। देश की भयानक स्थिति में जनता के ज्ञान के पांव उखड़ने लगते हैं। जनता यह विचारने के योग्य नहीं रहती कि कौन सी बात ठीक है। किस विचार से लाभ होगा और कौन सी धारणाएं देश के लिये विनाशकारी होंगी, ऐसे समय पर नेतागण समाचार पत्रों द्वारा अपने विचारों को जनता के सामने रखते है, जिसे पढ़कर जनताकी बुद्धि फिर स्थिर होती है। उदाहरणतः अभी अभी पाकिस्तान के बनने पर १५ अगस्त १९४७ के पश्चात् जो पाकिस्तान में यवनों ने विधर्मियों का रक्तपात किया, उसको देखकर तथा सुनकर भारतवर्ष के मनुष्यों में भी इन झगड़ों के विषैल कीड़े ने

प्रवेश किया। उन्होंने भी यवनों का रक्तपात करना आरम्भ किया किसी की बुद्धि स्थिर न रह सकी। ऐसे समय पर नेताओं का ही काम था कि उन्होंने जनता के जोश को थामा और देश की बिगड़ती हुई स्थिति संभाली। समाचार पत्रों के सम्पादक विधान से परिचित होने के कारण तथा सारे देशों के विधान तथा इतिहास से परिचित होने के कारण महानुभवी होते हैं। वे जानते हैं कि अमुक विधान से तथा अमुक कार्य से क्या परिणाम होंगे। उनकी सम्मति जनता को ठीक मार्ग पर लाती है। वे लोग जनता को भावी दुष्परिणामों से सूचित रखते हैं। व्यापार क्षेत्र में भी प्रेस का बड़ा महत्व होता है। समाचारों द्वारा हमें सोने चांदी तथा अन्य व्यापार से सम्बन्धित वस्तुओं के देश के कोने-कोने के भाव ज्ञात होते हैं। देश की आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त होता है। व्यापारी समाचारों में दिये हुए भावों को ध्यान में रखते हुए बाजो करते हैं। व्यापारिक वस्तुओं का क्रय विक्रय होता है। भावों में उन्नति तथा अवनति प्रेस वालों को टेलीग्राफी की सहायता से ज्ञात रहती है। व्यापार सम्बन्धी विज्ञापन समाचार पत्रों में प्रकाशित होने से व्यापारियों तथा क्रय करने वालों में सम्बन्ध स्थापित होता है।

डाक्टर लोग तथा अन्य व्यापारी अपने लिये प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिये समाचार पत्रों को साधन बनाते हैं। उनका व्यापार ही आकर्षक विज्ञापनों द्वारा चलता है। नई आविष्कृत औषधियों तथा वैज्ञानिक आविष्कारों की जानकारी जनता को समाचार पत्रों द्वारा कराई जाती है।

प्रसिद्ध समाचार पत्रों में साहित्यिक अथवा सामाजिक विषयों पर प्रतिभाशाली लेख भी आते हैं। उदाहरणतः 'नव भारत', 'विश्वमित्र' 'भारत' तथा 'हिन्दुस्तान' आदि समाचार पत्रों के रविवार की प्रतिलिपियों में सुप्रसिद्ध कवियों की जीवन-झांकियां, सामाजिक नेताओं के व्याख्यान और अन्य साहित्य सम्बन्धी लेख बड़े आकर्षक तथा

मनोरंजक होते हैं। उनसे पाठक को साहित्यक ज्ञान की बहुत वृद्धि होती है। बड़े-बड़े अभिभाषक (Pleaders) समाचार पत्रों में से अंकों को काट कर रख लेते हैं। जो उनके कार्य क्षेत्र में बड़े लाभप्रद प्रमाणित होते हैं।

आजकल चित्रपट जनता मे बहुत प्रचलित हो गये हैं। नगरों मे रहने वाले लगभग सारे नर-नारी चित्रपटों में मोहित हो चुके हैं। रविवार तो उनका व्यतीत ही चित्रपट देखने में होता है। ऐसे पुरुषों तथा स्त्रियों के लिये भी समाचार पत्र बहुत उपयुक्त बैठते हैं। दो आने के समाचार पत्र में आपको नगर में चल रहे सब चित्रपटों के नाम अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों के नाम सहित मिल जायेंगे। घर बैठे-बैठे आप चित्रपट देखने के लिए चुनाव कर सकते हैं। आपको सारे नगर में भ्रमण करके अपना समय व्यर्थ में व्यतीत करने की आवश्यकता नहीं।

बेकार व्यक्ति समाचार पत्रों के 'आवश्यकता' शीर्षक वाले स्तंभ को देखकर कार्यालयों में काम ढूंढते हैं। इस प्रकार उनके लिये प्रेस जीवन प्रदान करता है।

प्रेस की उपयोगिता जैसे बहुत बड़ी है, उसी प्रकार उस पर उत्तरदायित्व भी बहुत अधिक होता है। सर्वप्रथम तो इसे बहुत सचेत तथा निष्कपट होने की आवश्यकता होती है। प्रेस जितना निष्पक्ष तथा सत्यता के निकट होगा उतना ही उसका अधिक प्रचार होता है। आज के प्रेस, शोक से कहना पड़ता है, कि इस सिद्धांत पर नहीं चलते। आज प्रेस सत्यता का प्रचार करने के लिये नहीं अपितु पक्ष को शक्तिशाली बनाने के लिये खोले जाते है। भारतवर्ष में इस समय एक भी प्रेस ऐसा देखने मे नहीं मिलता जो सत्य के प्रचारार्थ हो। कोई कांग्रेस को तो दूसरा हिन्दू महा सभा को तीसरा मुस्लिम लीग के पक्ष को शक्तिशाली बनाने के प्रयत्न में लगा रहता है। यही नहीं यह पथ भ्रष्ट होकर धार्मिक आधार पर भी पहुँच चुका है।

एक प्रेस हिन्दू धर्म की रक्षा के लिये है तो दूसरा उसके विरोधी के स्वरूप में मुसलमानों के दृष्टिकोण को फैलाने के निमित्त। एक ही घटना का दो दृष्टिकोण से प्रकाशन होता है, कलकत्ता के रक्तपात में हिंदू प्रेस ने अपने को निरापराधी ठहराने का प्रयत्न किया और मुस्लिम प्रेस डान (Dawn) ने मुसलमानों को उत्तरदायित्व से छुटकारा दिलवाने का प्रयत्न किया। जिसका फल हुआ सत्यता का लोप। आज के प्रेस सत्य के प्रचारार्थ नहीं अपितु अपने पक्ष का प्रोपेगण्डा करने के निमित्त होते हैं।

×

प्रचार-प्रोपेगण्डा

प्रोपेगण्डा या प्रचार एक वह प्रणाली है जिसके द्वारा जनता की राय बदली जाती है। आधुनिक युग में प्रोपेगण्डा का बड़ा महत्व है। प्रत्येक सरकार चाहे वह जनतंत्रवाद की सरकार हो चाहे एक तंत्रवाद की सभी को प्रोपेगण्डा की आवश्यकता है। कोई भी दल हो चाहे वह दल सत्य पथ पर ही क्यों न चल रहा हो, उसे भी प्रोपेगण्डा की, आवश्यकता है। इस तरह आधुनिक युग में प्रोपेगण्डा एक महत्त्व-पूर्ण स्थान लिए हुए हैं।

प्रोपेगण्डा का आरम्भ पहले ईसाई मत के प्रचार के लिए जार्ज पन्द्रहवां ने १६२२ में रोम में चलाया। जनता को ईसाई मत के झूठे सच्चे लाभ बताकर, ईसाई मत का प्रचार किया। उसी समय से प्रोपेगण्डा के महत्व को स्वीकार कर लिया गया था। आज जितनी भी संसार में विज्ञापन बाजी हो रही है, वह सब प्रोपेगण्डा ही तो है। दवाईयों का विज्ञापन, व्यापारिक विज्ञापन आदि सभी प्रोपेगण्डा में है।

इस आधुनिक युग में राज्य संचालन का कार्य भी प्रोपेगण्डा के बिना चल ही नहीं सकता। जब तक जनता की राय राज्य के साथ

न हो, तब तक राज्य की नींव मजबूत नहीं होती। जनता की राय को साथ लेने के लिये यह अति आवश्यक है कि उन्हें राज्य के प्रति किसी न किसी प्रकार से विश्वासी बनाया जाय। उन्हें विश्वासी बनाने के लिए जो उपाय प्रयोग मे लाए जायेंगे, वही तो प्रोपेगण्डा है।

आज सभी राष्ट्रों में अपने को शक्तिशाली व ईमानदार दिखाने के लिए भी प्रोपेगण्डा किया जाता है। आज अमरीका अपने एटम बम को हव्वा बनाकर संसार के सामने रक्खा हुआ है और रूस तथा अमेरिका के झगड़े मे, अमेरिका स्वयं को ईमानदार व रूस को बेईमान घोषित कर रहा है। काश्मीर के झगड़े मे भी भारत व पाकिस्तान दोनों ही एक दूसरे को बेईमान प्रमाणित कर रहे है। भारत व पाकिस्तान दोनों ही एक दूसरे के विरुद्ध प्रोपेगण्डा कर रहे हैं।

युद्ध के दिनो मे तो प्रोपेगण्डा एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता है। द्वितीय महायुद्ध जर्मनी का प्रोपेगण्डा मंत्री डा० गोबेल्स ने जर्मनी के समस्त प्रोपेगण्डा के साधनों को प्रयोग में लाकर अर्थात् सिनेमा, प्रेस, रेडियो आदि के द्वारा नाजीवाद की छाप जर्मनी के हृदय पर बैठा दी और इसी कारण युद्ध के समय सभी नाजीवाद की सहायता के लिये तैयार थे। युद्धकाल में तो डा० गोबेल्स ने इतना विशाल प्रोपेगण्डा किया कि जर्मनी का बच्चा २ धोखे मे पड़ गया व समस्त संसार के व्यक्ति भी सत्य और असत्य मे अन्तर न कर सके।

अंग्रेजो ने भी युद्ध मे अपनी कूटनीति द्वारा प्रोपेगण्डा फैलाया। प्रेसों के द्वारा, रेडियो के द्वारा और जो कुछ भी साधन थे उन सभी द्वारा यह सिद्ध करने की चेष्टा की वे शक्तिशाली है। समस्त युद्ध मे कई स्थानों पर हारे परन्तु उन्होंने अपनी हार कभी भी स्वीकार न की व सदा ही अपनी विजय के हाल बतला कर शत्रुओं के दिल दहलाते रहे तथा जनता की राय अपने साथ करते रहे। इसका फल यह हुआ कि जनता के सहयोग से वे युद्ध में विजयी हुये।

प्रोपेगण्डा के कई तरीके हैं प्रेस, रेडियो, व्याख्यान, पुस्तकें आदि। जिनमें प्रेस व रेडियो दो प्रमुख हैं।

कहा जाता है कि रेडियो यदि किसी राष्ट्र की आवाज है तो प्रेस उस राष्ट्र की कलम है। यह प्रेस, एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा कोई भी राष्ट्र जनता के विचारों को बदल देता है। प्रेस प्रोपेगण्डा के लिए इन साधनों को प्रयोग मे लाता है—जैसे इश्तहार समाचार पत्र, पुस्तके व अन्य छपी हुई वस्तुयें। समाचार पत्र कभी-कभी तो इतने अन्याय पूर्वक प्रोपेगण्डा फैलाते हैं कि सत्य कहीं भी दिखाई नहीं देता है। सम्पादकीय टिप्पणियां, नेताओं के वक्तव्य व उनके ऊपर सम्पादक की आलोचना, ऐसे होते है जिनके द्वारा सत्य व असत्य मे अन्तर करना कठिन हो जाता है। मनुष्य तोप, तलवार, बम आदि जितने भी अस्त्र शस्त्र हैं, उनके विरुद्ध युद्ध कर सकता है परन्तु प्रेस से युद्ध करना कठिन ही नहीं वस्तुतः असम्भव है। अभी रूस ने अमेरिका व इङ्गलैंड के विरुद्ध अपनी प्रेस द्वारा इतना भारी प्रोपेगण्डा किया कि समस्त सत्य हालत को ढक दिया और सारा ही दोष अमेरिका व इङ्गलैंड पर डाल दिया।

रेडियो आधुनिक युग में प्रोपेगण्डा का मुख्य साधन बना हुआ है। आधुनिक युद्ध में डा० गोवेल्स ने इसी साधन द्वारा ब्रिटिश राज्य पर जहर उगला था। राष्ट्र की जनता के कानों में लगातार रेडियो द्वारा इस प्रकार खबरे दी जाती हैं कि जनता को विश्वास करना ही पड़ता है। यह साधन केवल अपने राष्ट्र मे ही प्रोपेगण्डा फैलाने का साधन नहीं है अपितु यह तो विश्व में ही प्रोपेगण्डा करने का उपयुक्त साधन है क्योंकि रेडियो समस्त विश्व मे है। रेडियो के द्वारा जो प्रोपेगण्डा किया जाता है वह बहुत असर करने वाला होता है क्योंकि उस में प्रोपेगण्डा के संगीत, हास्यप्रद कहानियां, वक्तव्य, व्याख्यान आदि सभी कुछ प्रयोग में लाए जाते हैं। जब लगातार एक ही बात को जनता के कानों मे कई प्रकार से डाला जायगा तो

सन्देह नहीं कि उसका विश्वास जनता पर हो ही जाता है।

आज हमारी सरकार ग्राम सुधार के लिये प्रोपेगण्डा कर रही है, या 'अन्न उपजाओ' का प्रचार कर रही है। इन दोनों प्रोपेगण्डा में इश्तहार, समाचार पत्र, कारटून्स, चित्र, रेडियो, 'मेजिक लैन्टर्न' उनके साधन प्रयोग में ला रही हैं। ग्रामीण जनता के हृदय पर इस प्रकार से यह असर डाला जा रहा है कि जो कुछ ग्राम सुधार किया किया जा रहा है, वह उत्तम है व प्रत्येक को उसमें सहयोग देना चाहिये।

राष्ट्र को चाहिये कि एक दल केवल अपनी शक्ति को स्थिर रखने के लिए झूठे प्रोपेगण्डा को न फैलावे अनन्था कभी २ अर्थ का महान् अनर्थ हो जाता है। सभी प्रकार के झूठे प्रोपेगण्डा को तो हर प्रकार से रोक देना चाहिये। जनता को कभी भी धोखे में न डालना चाहिये। सत्य विचारों का जो राष्ट्र दिग्दर्शन कराता है वही राष्ट्र उन्नति के शिखर पर चढ़ सकता है अन्य राष्ट्र नहीं। इस कारण प्रोपेगण्डा में भी सत्य का सहारा लेकर ही आगे बढ़ना चाहिये।

विज्ञापनबाजी

विज्ञापन आधुनिक व्यापार की आत्मा है। बिना विज्ञापन व्यापार में सफलता बहुत कम होती है। आज देखा जाता है कि व्यापारी समुदाय बहुत सा धन केवल विज्ञापन में ही खर्च करता है। यह भी देखा जाता है कि विज्ञापन के द्वारा व्यापार में सफलता भी मिलती है, इससे यह प्रमाणित होता है कि व्यापार में सफलता की कुंजी ही विज्ञापन है।

जब व्यापारी अपनी वस्तु की प्रसिद्धि के लिये समाचार पत्रों द्वारा, इश्तहारों द्वारा, बड़े २ साइन बोर्डों द्वारा या और किसी साधन के द्वारा जनता का ध्यान आकर्षित करता है तो वह विज्ञापन बाजी कहलाती है। यह इसलिये की जाती है ताकि जनता का ध्यान

रहे कि अमुक वस्तु, अमुक स्थान पर नियत धन व्यय करने पर अमुक गुण से युक्त प्राप्त हो सकती है। जनता को भी जब इस वस्तु की आवश्यकता आकर पड़ती है तो शीघ्र उसे विज्ञापन का ध्यान आ जाता है और वहाँ जाकर उस वस्तु को खरीद लेती है। इस तरह विज्ञापन बाजी से व्यापारी व जनता दोनों को ही लाभ होता है।

विज्ञापन देने का का भी एक ढंग होता है। विज्ञापन देने वाला सदा ही जनता के रुख का ध्यान रखता है व जनता के मस्तिष्क को पढ़ लेता है। जिस प्रकार भी जनता का ध्यान अधिक से अधिक आकर्षित कर सके, उसी प्रकार का विज्ञापन वह देता है। कभी आपने देखा होगा कि बीड़ी बेचने वाले हाथ में हारमोनियम लेकर गाना गाते हुए दिखाई देते हैं। यह भी विज्ञापन ही है। जनता गाने के शौक में गाने वालों के पास खड़ी हो जाती है इस तरह से बीड़ी को प्रसिद्धि मिल जाती है। कभी-कभी देखने में आता है कि विज्ञापन देने वाला एक कहानी घड़ लेता है और कहानी के द्वारा अपनी वस्तु को प्रसिद्ध करता है। कभी-कभी सुन्दर चित्रों द्वारा जनता का ध्यान आकर्षित करता है। कभी यह देखने में भी आता है कि हमारी भूलों को स्मरण करा कर हमारा ध्यान आकर्षित कर लेता है। जैसे कि कम खर्च करो और फिर अपनी वस्तु के विषय में बतलाता है कि अमुक वस्तु के द्वारा आपका कितना खर्च बच सकता है और इस प्रकार हम को बाध्य कर देता है और चाहता है कि हम अमुक वस्तु को खरीदें।

विज्ञापन वास्तव में एक कला है। प्रत्येक ही व्यक्ति इस कला में निपुण नहीं हो सकता। विज्ञापन एक अच्छी व गुण युक्त वस्तु का नहीं होता अपितु एक अच्छे मस्तिष्क का होता है। व्यापार में सफलता भी इसी कला द्वारा प्राप्त हो सकती है। यह देखा होगा कि जहां सब्जी बेचने वाले चार छः व्यक्ति हैं, वहां पर वह चिल्ला २

कर सब्जी बेचते हैं। यह भी विज्ञापन है वह जनता को चिल्ली कर बताते हैं कि उनकी सब्जी में और सब्जी वालों से अधिक गुण है, वह सस्ती है इस कारण जनता उसे खरीदे। यही तो कला है। किसी प्रकार भी समाचार पत्रों द्वारा, इश्तहारों द्वारा अथवा किसी भी साधन से यदि कोई व्यक्ति जनता को वाध्य कर सकता है, तो वही इस कला का सच्चा कलाकार है।

विज्ञापनबाजी से जहां व्यापारी को लाभ होता है जनता को भी लाभ होता है। जनता को जिस प्रकार की वस्तु की आवश्यकता होती है उसे विज्ञापन द्वारा पढ़कर उसी स्थान से मंगा लेती है। जनता को भटकना नहीं पड़ता। बहुत सी वस्तुएं ऐसी होती है, जो साधारणतया बाजार में नहीं मिल सकती, ऐसी वस्तुओं के लिए तो विज्ञापन अति आवश्यक होता है ताकि जनता को उन वस्तुओं के मिलने का स्थान मालूम हो जाय। जनता बहुत सी बातों से अनभिज्ञ होती हैं जैसे नेशनल सेविंग सार्टीफिकेट खरीदने से जनता और सरकार दोनों को लाभ है परन्तु जनता इससे अनभिज्ञ है। सरकार विज्ञापन द्वारा जनता का ध्यान उसके लाभ के प्रति आकर्षित करती है। विवाह आदि में कन्या के लिये वर ढूढ़ने में भी जनता को कठिनाई होती है, जनता वर के लिये विज्ञापन देकर उससे लाभ उठा सकती है। इस प्रकार विज्ञापनबाजी से व्यापारी तथा जनता दोनों को ही लाभ होता है।

विज्ञापनबाजी से जहां लाभ है वहां हानि भी है। विज्ञापन से जनता को धोखे में डाल दिया जाता है और विज्ञापन के द्वारा ऐसी वस्तु जिनसे जनता को हानि होती है, खरीदने के लिए बाध्य किया जाता है। सरकार को चाहिये कि ऐसी विज्ञापनबाजी जो कि जनता को धोखे में डालती है रोक दे। विज्ञापनबाजी में सत्य का ध्यान रखना चाहिये। दूसरे जनता को विज्ञापन से आकर्षित होकर बेकार में पैसा नहीं बहाना चाहिये, जिन वस्तुओं की वास्तव में आवश्यकता

हो उन वस्तुओं को खरीदना चाहिये। विज्ञापन दाताओं को भी ध्यान रखना चाहिये कि वे इस कला का दुरुपयोग न करें अपितु सदुपयोग करें।

—

सिनेमा (चलचित्र)

विज्ञान की चमत्कारपूर्ण खोजों ने आज विश्व को आश्चर्य में डाल दिया है। सिनेमा भी विज्ञान की एक अद्भुत खोज है। आज संसार में ऐसे बहुत कम व्यक्ति होंगे जिन्होंने सिनेमा न देखा होगा। भारतवर्ष मे भी जो व्यक्ति नगर निवासी हैं, वे सभी सिनेमा को ही एक मुख्य मनोरंजन का साधन मानते हैं। भारतवर्ष में चलचित्रों के बनाने मे आज करोड़ों रुपया व्यय किया जाता है और जनता सिनेमा देखने में करोड़ों ही नित्य व्यय करती है। सिनेमा आज हमारे जीवन का एक अंग बन गया है।

सन् १८६६ में प्रथम चलचित्र न्यूयार्क में बनाया गया था। सिनेमा की प्रथम विटास्कोप मशीन डी. सी. थोमस अरमट नामक व्यक्ति ने बनाई थी। १६०३ में डेविड ग्रीफिथ ने नई प्रणालियों द्वारा चित्र बनाये व चित्रपटों पर दिग्दर्शन किया। सन् १६०६ में प्रथमबार न्यूयार्क की एक कम्पनी चलचित्रों को बनाने लगी। १६०६ से १६२६ तक चलचित्र बनते रहे, लेकिन उन चलचित्रों में आवाज नहीं होती थी। सन् १६२६ में वारनर ब्रादर्स ने "डौनजौन" नामक प्रथम चलचित्र बनाया जिसमे चित्र बोलते भी थे। इस प्रकार अब चलचित्र इस प्रकार बनते हैं कि उन चित्रों को देखकर हम नहीं कह सकते कि ये केवल चित्र मात्र है। वे यद्यपि हम जैसे जीवित प्राणियों के चित्र मात्र हैं, परन्तु चित्रपट पर एक जीवित प्राणी की तरह से प्रत्येक कार्य करते हैं।

भारतवर्ष में पहले पहल एक 'न्यूज रील' समाचार बनाने वाला चलचित्र सन् १६०४ में बना था। फिर घूमने वाली चलचित्रों का प्रदर्शन मैनक जी सेठन ने किया। 'हरिश्चन्द्र' प्रथम फिल्म था जो भारतवर्ष में बना। वह सन् १६१३ में बना था तथा इसका निर्माता डी. जी. भल्ले थे। १६१७ में एक कम्पनी जे. ऐफ. मदन एण्ड कम्पनी चली। उसने प्रथम फिल्म 'नल दमयन्ती' निकाला। प्रथम बोलने वाला चलचित्र सन् १६३१ में बना और और उसको एम. ईरानी ने बनाया। तदुपरान्त सिनेमा उद्योग ने अति शीघ्रता से भारतवर्ष में फैलना आरम्भ किया। आज भारतवर्ष में अनेक कम्पनी हैं, जिनमें चल चित्रों का निर्माण होता है, जिनमें मिनर्वा मोवीटोन, न्यू थियेटर्स लिमिटेड, कृष्णा मोवीटोन, पंचोली पिक्चर्स, बोम्बे टाकीज, प्रभात फिल्म कम्पनी, फिल्मिस्तान आदि प्रमुख हैं।

भारतवर्ष में अभी फिल्म उद्योग मे प्रगति हो सकती है, यदि निम्नलिखित कमियों को दूर कर दिया जाय।

प्रथम तो चलचित्र उद्योग किसी केन्द्रीय व्यवस्था में आ जाना चाहिये। जैसे अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी आदि में कारपोरेशन होते हैं और एक कारपोरेशन के नीचे एक देश का समस्त चलचित्रों का उद्योग होता है। यह केन्द्रीय व्यवस्था डायरेक्टरों के बोर्ड के संरक्षण में कार्य करे। प्रगतिशील देशों में ऐसा ही हो रहा है। इस प्रकार यह उद्योग देश में उन्नति प्राप्त कर सकता है।

द्वितीय योग्य सूत्रधारों की व कैमरा पर कार्य करने वाले व्यक्तियों की कमी है। कहानीकार भी अपनी कहानी, कथा वस्तु के समान नहीं बना पाता। अभिनेता भी कला के प्रदर्शन में कमी कर जाते हैं। इन सबको इस उद्योग में ज्ञान प्राप्त करने के लिए विदेशों में भेजना चाहिये, ताकि वहां जाकर वे सुचारू रूप से ज्ञान व अनुभव प्राप्त करें तथा अपने देश के उद्योग को उन्नति दें।

तृतीय इस फिल्म उद्योग के उद्योग पतियों को केवल पैसे के लिये चलचित्र बनाना छोड़ देना चाहिए। उद्योग पतियों को सोच लेना है, चाहे पैसा कम मिले परन्तु चित्र में अवश्य कला का का समावेश करना है। इस तरह चलचित्र उच्च कोटि के निकलेंगे।

चलचित्रों से अनेक लाभ हैं। प्रथम तो हम देखते हैं कि हम संसारिक कार्यों में इतने लीन रहते हैं कि हमको मनोरंजन करने की भी आवश्यकता रहती है। मनोरंजन की आवश्यकता पूर्ति का सुगम साधन चलचित्र घर हैं। चलचित्रों के द्वारा दिन भर के कार्यों से थका मनुष्य आराम प्राप्त कर लेता है। कुछ समय के लिए समस्त संसारिक चिन्ताओं को भूल जाता है। हंसी व गानों से वह अपने नीरस जीवन में रस प्रदान करता है।

चलचित्र शिक्षा के साधन भी हैं। अपढ़ व्यक्ति भी इन चलचित्रों के द्वारा भूगोल, इतिहास आदि के विषय में जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। एक किताब के पढ़ने से विद्यार्थी, उतनी अच्छी तरह से नहीं समझ सकता जितनी अच्छी तरह चलचित्रों के द्वारा अनुभव प्राप्त कर लेता है। समाचार देने वाले चलचित्रों द्वारा जनता विश्व के समाचारों को जान लेती है। कई स्थानों में विदेश में चलचित्रों द्वारा स्कूलों में भी शिक्षा दी जाती है। बच्चे शीघ्रता से उस विषय को समझ लेते हैं।

चलचित्रों द्वारा सामाजिक धार्मिक सुधार भी होता है। चण्डी दास, महात्मा, अछूत कन्या आदि चलचित्रों के द्वारा समाज में फैली हुई कुरीतियां दूर हुईं। जन्मभूमि चलचित्र ने ग्रामीण उन्नति का ध्यान आकर्षित कराया। इस प्रकार समाज की, धर्म की, राजनीति की अनेक कुरीतियां इस सिनेमा से दूर हो जाती हैं।

जहां चलचित्रों से अनेक लाभ हैं वहां अनेक हानियां भी हैं। जैसे यह कुछ खर्चीला मनोरंजन है। जो व्यक्ति साधारणतया अधिक

सिनेमा देखा करते हैं वे बहुत रुपया खर्च कर देते हैं। द्वितीय कुछ चलचित्र केवल समय नष्ट करते हैं। उनसे न कोई शिक्षा मिलती है न कोई अनुभव प्राप्त होता है। यहां तक कि चलचित्रों को देखते २ आंखें बहुत खराब हो जाती हैं। इस तरह से चलचित्र केवल धन ही नष्ट नहीं करता अपितु स्वास्थ्य को भी नष्ट कर देता है।

चलचित्रों की कहानियां व कथावस्तु कुछ ऐसी होती हैं जिनसे चरित्र भ्रष्ट होता है। अधिकतर आजकल के चलचित्रों में स्त्री पुरुष का प्रेम दिखाया जाता है और इसका प्रभाव विद्यार्थियों व बच्चों पर बहुत पड़ता है। विद्यार्थी उसी प्रकार लड़कियों से प्यार के साधन ढूंढा करता है जैसा कि वह चलचित्र में देखकर आया है। इस प्रकार चलचित्र चरित्र भ्रष्ट करने का प्रमुख साधन हो ा है।

चलचित्रों ने फैशन की ओर भी जनता को अग्रसर किया है। विशेषतया: कर स्त्री समाज चलचित्रों में दिखाये गये फैशन से अधिक प्रभावित होती हैं। उदाहरण स्वरूप यदि अभिनेत्री सुलोचना ने एक विशेष प्रकार के कर्ण फूल पहन रक्खे थे तो वह भी इसी प्रकार का बन जायेंगी। इस तरह यह मनुष्य को धन से पृथक करता है हाथ कुछ नही आता।

उपर्युक्त कथन से यद्यपि यह प्रमाणित है कि सिनेमा से लाभ व हानियां दोनों हैं। परन्तु लाभ अधिक व हानि कम है। यह मनोरंजन का साधन है व साथ ही शिक्षा का साधन भी है। इसके द्वारा ग्रामीण उन्नति भी की जा सकती है। फिर भी चलचित्रों में अभी उन्नति की आशा है। ऐसे चलचित्र जिनसे चरित्र भ्रष्ट होता है और किसी प्रकार की बुराई फैलाती है, नहीं बनने चाहिये।

अध्ययन का आनन्द

अध्ययन मे स्वाभाविक आनन्द की प्राप्ति होती है। हम जो कुछ पढ़ते हैं उससे हमें किसी न किसी प्रकार का आनन्द मिलता है। वास्तव में हम पढ़ते ही आनन्द के लिये हैं। कोई विषय यदि पाठक की रुचि के अनुसार हो तभी वह पढ़ता है। कई बार हम देखते हैं कि पाठक किसी विषय को पढ़ते-पढ़ते बीच में ही छोड़ देते हैं, उसका अभिप्राय ही यही होता है कि आगे उन्हें आनन्द नहीं मिलता। आनन्द प्राप्ति की आशा के टूट जाने से वह लेख उनकी रुच्यानुकूल नहीं रहता। मनुष्य जो कुछ करता है सुख प्राप्ति के लिये करता है। जीवन का उद्देश्य ही सुख प्राप्ति है। सुख प्राप्ति भी दो प्रकार की होती है आध्यात्मिक सुख तथा मानसिक सुख। आनन्द तथा सुख का अटूट सम्बन्ध है। इस प्रकार आनन्द भी इन्हीं दो प्रकार का होता है। अध्ययन से दोनों प्रकार के आनन्द की प्राप्ति होती है। अध्यात्मिक साहित्य को पढ़कर पाठक वृहद् आन्तरिक आनन्द का भोगी बनता है। और नाटक उपन्यास, कहानी तथा अन्य लेख पढ़ कर उसे आध्यात्मिक आनन्द के साथ साथ ऐन्द्रिक आनन्द भी प्राप्त होता है।

अध्ययन थकी आत्माओं का भोजन है। यह समय व्यतीत करने की सर्वश्रेष्ठ विधि है। मनुष्य पर बेकारी के समय कई प्रकार के कुविचारों के कारागृह में फंस जाता है। अकर्मण्यता कुविचारों का घर है। जब कोई मनुष्य बिना किसी काम के बैठता है तो उसके मन मे अनेक प्रकार के बुरे विचार उठते हैं, जो उसे कुमार्ग गामी बनाने में सहायक प्रभावित होते हैं। अध्ययन इस प्रकार बेकारी के समय को सदुपयोग में लाने की बहुत अच्छी विधि है। इससे दो लाभ होते हैं समय की सदुपयोगिता तथा ज्ञान की प्राप्ति।

समय का सदुपयोग—यदि हमारे पास अवकाश है और हम बेकार बैठे रहते हैं तो मस्तिष्क में अनेक तरह के व्यर्थ के विचार

आवेंगे। मनुष्य सर्वदा ही गत की ओर शीघ्रता से प्रमाण करता है व उन्नति की ओर जाने से उसे परिश्रम करना पड़ता है। अवकाश के समय बेकार रहने से उसे गर्त की ओर जाने का अधिक अवसर मिल जाता है। यदि उस अवकाश के समय को अध्ययन में बिताया जाय तो गर्त की ओर जाने की अपेक्षा उन्नति की ओर अग्रसर होते हैं, साथ ही आनन्द का अनुभव करते है।

ज्ञान की प्राप्ति अध्ययन से समय का सदुपयोग तो होता ही है साथ ही ज्ञान की प्राप्ति भी होती है। हम जो कुछ अध्ययन करते हैं उससे कुछ न कुछ तो शिक्षा भी मिलती ही है व कुछ न कुछ अनुभव भी प्राप्त होता हैं। इस प्रकार ज्ञानकी वृद्धि अवश्य होती हैं। इसलिये जहां अध्ययन आनन्द का हेतु है वहां ज्ञान का हेतु भी हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार के अध्ययन से आनन्द की प्राप्ति हो सकती है। अध्ययन में आनन्द, अध्ययन करने वाले की रुचि पर अवलम्बित होता है। बहुत से व्यक्ति उपन्यास, कहानियां, नाटक, ड्रामा आदि पढ़ने मे आनन्द का अनुभव करते हैं व बहुत से दर्शन शास्त्र, अर्थ शास्त्र, आदि गम्भीर साहित्य पढ़ने में आनन्द का अनुभव करते है। यह नित्य ही देखने मे आता है कुछ व्यक्ति उपन्यास आदि पढ़ने में इतने तल्लीन हो जाते हैं कि उन्हें अपने भोजन की भी सुधि नहीं रहती है व इसके विपरीत कुछ व्यक्तियों को यदि उपन्यास पढ़ने को दे दिया जाय तो उन्हे नींद आने लगती है। इससे यही प्रमाणित होता है कि अध्ययन मे आनन्द की प्राप्ति अधिकतर अध्ययन करने वाले की रुचि पर अवलम्बित है।

यद्यपि जैसा ऊपर लिखा जा चुका है कि रुचि अनुसार साहित्य पढ़ने मे आनन्द की प्राप्ति होती है परन्तु ऐसा साहित्य जो कि मनुष्य के चरित्र व सदाचार को भ्रष्ट करदे, पढ़ने योग्य नहीं। ऐसा देखा जाता है कि बहुत से मनुष्य कामोदीपक पुस्तके अथवा चरित्र-हीन व्यक्तियों के जीवन चरित्र पढ़ा करते है। यदि उन्हें पढ़ने से

रोका जाय तो वे कह देते है 'अजी मन बहलाव के लिये पढ़ते है।' परन्तु वे नहीं जानते कि क्षणभर का यह आनन्द उनके समस्त जीवन के आनन्द को छीन लेगा। इसलिये ऐसा रुचि अनुसार अध्ययन जिससे आनन्द तो मिलता हो परन्तु साथ ही चरित्र भ्रष्ट होने का सन्देह हो सर्वथा त्याग देना चाहिये।

विद्यार्थी अधिकतर जासूसी उपन्यास व साहसपूर्ण कहानियों में विशेष रुचि रखते है व उनके पढ़ने से आनन्द प्राप्त करते है। विद्यार्थियों को इस प्रकार की रुचि मे परिवर्तन करने की चेष्टा करनी चाहिये। ये जासूसी उपन्यास व कहानियां अधिकतर समय व्यर्थ में नष्ट करने वाली होती है। विद्यार्थी आनन्द तो प्राप्त अवश्य करता है परन्तु उनसे ज्ञान प्राप्त नहीं करता, इसलिये विद्यार्थियों को चाहिये कि ऐसे साहित्य मे जिससे ज्ञान भी बढ़े व आनन्द की भी प्राप्ति हो, अपनी रुचि बढ़ावें।

दैनिक सप्ताहिक एवम् मासिक समाचार पत्र, साहित्यक उपन्यास भावमय पद्य पुस्तक आदि ऐसी पुस्तकें होनी चाहिये, जिनसे मनोरंजन भी हो व साथ मे शिक्षा भी मिले तथा ज्ञानकी वृद्धि भी हो। अध्ययन में कोरी मनोरंजन की ही दृष्टि रखना उत्तम नहीं। जासूसी उपन्यास अश्लील पुस्तकें आदि ऐसी पुस्तकें हैं जो कि मनोरंजन तो कर सकती हैं परन्तु साथ ही व्यक्ति को पतनोन्मुख भी करती हैं। इसलिये ऐसी पुस्तकों से सर्वदा बचते रहना चाहिये।

व्यायाम व स्वास्थ रक्षा

प्राचीन कहावत है कि 'प्रथम सुख निरोगी काया। दूजा सुख होय घर में माया' इसके अनुसार सबसे अर्थात धन आदि से भी बढकर मानव के लिये स्वास्थ्य है। क्योंकि संस्कृत मे भी कहा गया है कि 'शरीर माद्यम् खलु धर्म साधनम्' इसका अर्थ है कि धर्म

अर्थात् कर्त्तव्यों का पालन करने के लिये सबसे प्रथम या प्रमुख साधन शरीर है। जो मनुष्य स्वस्थ होगा उसको अपना हर कार्य करने में मन लगेगा। और उसके स्वास्थ्य की भांति ही उसका मस्तिष्क भी उत्तम होगा। एक अस्वस्थ मनुष्य स्वयं तो कुछ कार्य कर ही नहीं सकता परन्तु वह दूसरों को भी अपनी सेवा में रखकर उनके कार्यों मे हानि पहुँचाता है। जो लोग व्यायाम नहीं करते, अधिकांश वही रोगी होते हैं। अपने शरीर को स्वस्थ रखने के लिये व्यायाम की परम आवश्यकता है।

व्यायाम भी कई प्रकार के होते हैं और उनके लिये पृथक आयु और इच्छा होती है। जैसा व्यायाम होगा वैसा ही शरीर पर प्रभाव पड़ेगा। चूंकि हमारा देश आदि काल से ही प्रत्येक विषय के लिये संसार का अगुवा रहा है, इसी लिये स्वास्थ्य संबन्धी अपने प्राचीन ज्ञान के कारण हमारे यहां बहुत सी व्यायाम पद्धतियां हैं जैसे दौड़ना कबड्डी खेलना, कुश्ती लड़ना मुगदर घुमाना आदि अनेक व्यायामों के अतिरिक्त बच्चों और वृद्धों के लिये प्रातः उठकर ताजी हवा का सेवन ही संजीवनी का गुण देता है।

प्राचीन काल में हमारे देश के अन्दर अधिकांश रोगों का निदान व्यायामों द्वारा ही किया जाता था। इसी प्रसंग का एक छोटा सा उदाहरण है कि एक बार एक राजा जो कि अभिमानी था और सवारी के बगैर एक पद भी चलना अपनी प्रतिष्ठा के विपरीत समझता था बीमार पड़ा। अनेक वैद्य, डाक्टर और हकीमों ने चिकित्सा की परन्तु सब उसके रोग का निदान करने में असफल रहे। एक बार कोई दूर का वैद्य उधर आ निकला, लोग उसे राजा के पास ले गये। वह देखते ही राजा के रोग को ताड़ गया और उसने एक युक्ति सोची। उसने जंगल में एक भवन बनवाया जहाँ कि बिल्कुल सुनसान था और पहले उस भवन के धरातल को आग जला कर गर्म करवा दिया। फिर राजा को बुला के उसमें धोके से

बन्द कर दिया। राजा के नौकरों को बताया कि दो घंटे बाद खोलना। धरातल के गर्म होने के कारण राजा के पैर जलने लगे। और राजा प्रायः दो घंटे तक उछल कूद मचाता रहा।

वैद्य की आज्ञा के अनुसार जब राजा के नौकर दो घंटे बाद उसे खोलने के लिये पहुँचे और उसको खोला तो राजा को अति क्रोधित पाया। राजा ने वैद्य की खोज की परन्तु वह तो वहां से पहले ही चला जा चुका था। राजा को निराश होना पड़ा। थोड़ी देर बाद राजा को अपना शरीर हल्का और स्वस्थ प्रतीत हुआ। राजा तुरन्त ही व्यायाम की उपयोगिता समझ गया और उसी दिन से उसने व्यायाम करना शुरू कर दिया और कुछ दिनों में ही भला चंगा हो गया।

व्यायाम रोगी मनुष्यों के लिये ही नहीं अपितु स्वस्थ और भले चंगे मनुष्यों के लिये भी उनके स्वास्थ्य और शक्ति बढ़ाने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। व्यायाम करने से मनुष्य की शारीरिक उन्नति होती है, मानसिक बल बढ़ता है। व्यायाम राष्ट्र की उन्नति में भी सहायक सिद्ध होता है।

मनुष्य तन भी दूसरी संसारिक वस्तुओं की भांति ही है। यदि हम किसी वस्तु का प्रयोग करने में या किसी यंत्र से कार्य करने में उसकी देख भाल की उपेक्षा करेंगे तो वह वस्तु शीघ्र ही नष्ट हो जायेगी। इसी प्रकार की दशा कुछ हमारे शरीर की है।

जो लोग अपने शरीर की देख भाल या व्यायाम की अपेक्षा करते हैं वे अधिक दिन जीवित रहते हैं और हमेशा स्वस्थ रहकर इस लोक में सुख भोग कर अपने स्वस्थ मन की भक्ति द्वारा परलोक का सुख भी प्राप्त करते हैं।

व्यायाम कई प्रकार के होते हैं, फुटबाल खेलने से मनुष्य को गेंद के साथ दौड़ना पड़ता है, कबड्डी में भी अथक परिश्रम करना पड़ता है। इस तरह देशी या विदेशी किसी प्रकार का व्यायाम करने

से मनुष्य का पसीना आने से शरीर का दूषित मल बाहर निकल जाता है और मनुष्य के शरीर मे नव स्फूर्ति का संचार होता है। फेफड़ों पर शनैः शनै दबाव पड़ने से वह साफ और शुद्ध हो जाते है। मनुष्य की प्रत्येक हड्डी और जोडों को शक्ति मिलती है। आखों की ज्योति में वृद्धि होती है। मन प्रसन्न बना रहता है जिस से प्रत्येक कार्य करने में मन लग जाता है और वह कार्य भी उत्तमता से पूरा हो जाता है।

व्यायाम के द्वारा ही बहुत से मनुष्य अपनी शक्ति को बढ़ाकर संसार में यश और धन को प्राप्त करते हैं। हमारे यहां श्रीराममूर्ति दो दो मोटरों को एक साथ रोक लेते थे। वह सब शक्ति व्यायाम द्वारा ही तो उनको प्राप्त हुई और उनकी शक्ति को देखकर जग उनके यश गाता रहा। अपने शक्ति के द्वारा उनको यश ही नहीं अपितु पर्याप्त धन भी मिला। इनके अतिरिक्त और भी कितने ही व्यायाम के सच्चे उपासक हो गए। और इस संसार में वास्तविक प्रसन्नता का जीवन व्यतीत कर गए।

प्राचीन भारतवर्ष मे ग्राम-ग्राम और शहर के प्रत्येक गली कूचे में व्यायाम शालाएं होती थीं। अन्य आवश्यक कार्यों के दिन भर के कार्य क्रम में व्यायाम का स्थान भी था। उस समय जितना मनुष्य की जिन्दगी के लिये भोजन करना आवश्यक था, व्यायाम करना भी वैसा ही समझा जाता था। उन दिनों भारतवासियों की शारीरिक दशा बहुत उन्नत थी। वे लोग दीर्घायु होकर शक्ति पूर्वक इस लोक का सुख भोगकर अन्त मे परलोक का भी आनद प्राप्त करते थे। परंतु भारत की स्वतंत्रता के साथ ही उसके स्वास्थ्य प्रवीणता का भी लोप हो गया और हमारे देश की औसत आयु केवल २३ वर्ष रह गई। परन्तु प्रसन्नता का विषय है कि अब हमारी राष्ट्रीय सरकार इस प्राचीन व्यायाम पद्धति की पुनः स्थापना कर रही है। और नई नई व्यायाम शालाओं को धन आदि की सहायता देकर उत्साहित कर रही है।

नागरिकों के अधिकार तथा कर्त्तव्य

हमारा देश स्वतन्त्र हो चुका है, हमें स्वतन्त्र होकर अन्य राष्ट्रों की भाँति अपने राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर पहुँचाना है। अतः नागरिक कर्त्तव्य तथा अधिकारों को समझना हमारा परम कर्त्तव्य है। जब हम अपने अधिकार तथा कर्त्तव्यों को समझेंगे, तभी हमारा देश या राष्ट्र उन्नत हो सकता है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह अकेला नहीं रहता। सर्व प्रथम तो उसका जी ही नहीं लगेगा, यदि वह रह भी जावे तो उस को खाने-पीने की सामग्री की आवश्यकता है, रहने के लिए मकान की आवश्यकता है. कष्ट या दुःख के समय सहायता के लिए साथी चाहिए। इस प्रकार की आवश्यकताओं को एक प्राणी पूर्ण नहीं कर सकता। यदि वह जीवित रह सकता तो वह केवल समाज में ही रह सकता है। समाज ही उसके दुःख, सुख, आपत्ति किसी भी प्रकार की आवश्यकता पड़ने पर सहायता करता है। कठिन से कठिन कार्य भी सुगमता से हल हो सकते हैं।

जिन के समाज के व राष्ट्र के प्रति कुछ कर्त्तव्य तथा अधिकार होते-होते हैं उन सभी लोगों को हम नागरिक कहते हैं। नागरिक शब्द का अर्थ केवल नगर म ही रहने वालों से नहीं है, अपितु सारे देश के निवासियों से है। जो उस देश के प्रति प्रेम तथा भक्ति भाव रखता है, वही नागरिक कहलाता है। जो किसी दूसरे देश के प्रति प्रेम तथा भक्ति भाव रखता है तो उसे नागरिक के अधिकार प्राप्त नहीं हो सकते।

नागरिकता प्राप्त भी की जा सकती है। जब कोई विदेशी किसी देश में अधिक समय से निवास कर रहा हो और अपने देश की नागरिकता को त्यागने की अभिलाषा रखता हो, नये देश की नागरिकता प्राप्त करना चाहता हो तो उसका राष्ट्र अपने नियम के अनु-

सार नागरिकता के अधिकार दे सकता है। इस मे धर्म, जाति या वर्णों का कोई भेद भाव नहीं रखा जाता। उस को भी वे विशेष अधिकार दिये जाते हैं, जो वहां के नागरिक को होते हैं।

जो मनुष्य जिस देश का नागरिक है, उसके उस देश के प्रति कुछ अधिकार तथा कर्त्तव्य अवश्य होते हैं। विशेष कर जनतन्त्र राष्ट्र के नागरिकों को अपने अधिकार तथा कर्त्तव्यों को भली भांति समझना परम आवश्यक समझा जाता है, क्योंकि शासन का सारा उत्तरदायित्व जनता पर ही होता है। जो एक नागरिक के राष्ट्र के प्रति अधिकार होते हैं वह निम्नलिखित हैं।

(१) रक्षा—प्रत्येक नागरिक राष्ट्र से अपनी तथा सम्पत्ति की रक्षा चाहता है। जिस के लिए राष्ट्र, सेना-पुलिस आदि का संगठन करता है। इसी कारण राष्ट्र का जन्म हुआ है।

(२) धर्म—प्रत्येक नागरिक का अधिकार है कि वह अपने धर्म पर इच्छानुसार आचरण करे, राष्ट्र कोई हस्तक्षेप नहीं करेगा परन्तु यह भी नहीं कि किसी दूसरे धर्म के मानने वाले को ठेस पहुँचावे ! जिस प्रकार उस को अपना धर्म प्रिय है, उसी प्रकार दूसरों को भी होता है। ऐसा करने से राष्ट्र उसे रोक सकता है।

(३) विचार स्वतन्त्रता प्रत्येक नागरिक का अधिकार है कि वह अपने विचारों को लिख कर तथा बोल कर कह सकता है, राष्ट्र से मांग कर सकता है। परन्तु यह नहीं कि जो जी मे आवे लिखे तथा बोले। अपमान जनक भाषण देने तथा देश में विद्रोह फैलाने वाले व्यक्ति को राष्ट्र दण्ड दे सकता है।

(४) निवास स्वतन्त्रता प्रत्येक नागरिक को अधिकार है कि देश के किसी भाग में रह सकता है। विदेश में भी जा सकता है। वहां भी वह अपने राष्ट्र से अपने हितों की रक्षा की अपेक्षा करे।

(५) व्यवसाय प्रत्येक नागरिक को अधिकार है कि वह जिस भी व्यवसाय को करना चाहे कर सकता है। इस के लिए नागरिक

ऋण दे सकता है या ले सकता है। इस के प्रति न्याय करना राष्ट्र का कर्त्तव्य है।

(६) पद अधिकार—प्रत्येक नागरिक को उसकी योग्यता के अनुसार पद मिलना चाहिए इस में धनी, निर्धन, जाति, वर्ण का कोई भेद नहीं होना चाहिए। योग्यता ही कसौटी हो।

(७) शिक्षा का अधिकार—प्रत्येक नागरिक राष्ट्र को अपनी शिक्षा का प्रबन्ध करने के लिए बाधित कर सकता है। प्रारम्भिक शिक्षा का देना राष्ट्र का कर्त्तव्य है। इस अधिकार की ओर राष्ट्र द्वारा अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

अधिकारों के साथ-साथ हमारे कुछ न कुछ कर्त्तव्य भी राष्ट्र के प्रति हैं। यदि हम किसी से कोई वस्तु लेते हैं तो उस के बदले हम को कुछ न कुछ अवश्य देना पड़ेगा। वैसे भी हमारे कुछ कर्त्तव्य हैं। वह निम्न लिखित हैं।

(१) स्वदेश भक्ति—प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है, वह अपने राष्ट्र की तन, मन, धन से रक्षा करे। सेना मे ही भर्ती ही होना देश सेवा नहीं होती, बल्कि देश मे अन्य आन्तरिक अशान्ति के समय शान्ति की व्यवस्था करें!

(२) कानूनों का पालन करना—प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह राष्ट्र के बनाए हुए कानूनों का पालन करे। कानून की अवज्ञा करने पर देश मे विद्रोह फैल जाता है, यद्यपि कानूनों के बनाने में अशुद्धियां हो सकती हैं, फिर भी उस का भंग करना असभ्यता का परिचय देना होता है।

(३) पद स्वीकृति—रा अपने नागरिकों को आवश्यकता पड़ने पर किसी भी पद के लिए नियुक्त कर सकता है। वैतनिक या अवैतनिक इसको सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए।

(४) मत प्रदान—निर्वाचन के समय प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह योग्य व्यक्ति को वोट दे। यदि वह रुपये के लालच तथा पक्षपात करके वोट देता है तो वह देश द्रोही कहलाता है।

(५) कर प्रदान—शासन को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है तो राष्ट्र नागरिकों से करके रूप में धन को वसूल करता है। इसके देने में किसी भी नागरिक को आना कानी नहीं करनी चाहिए।

(६) शिक्षा ग्रहण करना—प्रत्येक नागरिक को चाहिए की वह अपने बाल बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबन्ध स्वयं करे, पाठशाला चंदा इत्यादि लेकर खोले। यदि पढ़ा हुआ है तो औरों को शिक्षा दे। यह राष्ट्रीयता का प्रमुख कर्त्तव्य है।

(७) निर्वाह—प्रत्येक नागरिक को चाहिए, वह किसी न किसी कार्य में लग जावे। राष्ट्र पर बोझ बन के न रहे। वही अच्छा नागरिक है जो दूसरों को भी पालता है। अपना पेट तो कुत्ता भी भर लेता है।

अतः प्रत्येक नागरिक को चाहिए कि वे अपने कर्त्तव्य तथा अधिकारों को भली भांति समझ कर राष्ट्र, जाति, धर्म के गौरव को बढ़ावे। क्योंकि जब तक व्यक्ति अपने काय को कर्त्तव्य समझ कर और अधिकार समझ कर नहीं करता, तब तक कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकती।

हमारे भारतवर्ष में बहुत संख्या में ऐसे लोग हैं, जो अशिक्षित हैं। अशिक्षित होने के कारण वे यह नहीं समझते कि राष्ट्र के प्रति हमारे क्या कर्त्तव्य हैं और क्या अधिकार है। यदि यह शिक्षित होंगे तो इन बातों को अवश्य समझेंगे, और अपना बुरा भला समझ सकेंगे।

हमारे देश की अधिक जनता ग्रामों में रहती है। उनमें से लगभग ६५ प्रतिशत अशिक्षित हैं। उनके शिक्षित करने के लिए हमारी जन-तन्त्र सरकार को चाहिए, कि वे प्रत्येक ग्राम में स्कूल खोले, ताकि वे शिक्षित हो कर अपने भविष्य को बना सकें। अपने कर्त्तव्य तथा अधिकार का अनुभव करें। एक दूसरे से सहानुभूति रखें। यही कारण है कि जनतन्त्र सरकार होते हुए भी लोग अपने कर्त्तव्य तथा अधिकार का अनुभव नहीं करते। सरकार को अनेकों प्रकार की समस्याएं सुलझानी पड़ती है।

राष्ट्र एक यन्त्रके समान है, मनुष्य समुदाय पुर्जेकी भांति है। हम अपनी योग्यता अनुसार राष्ट्र की सेवा करते रहते हैं। राष्ट्र के प्रति सब का समान अधिकार होता है यदि यन्त्र के पुर्जे में कोई त्रुटि न होगी तो यन्त्र द्वारा हम अपनी आवश्यकता के अनुसार कार्य कर सकते हैं। यदि हमें अन्य राष्ट्रों की भांति अग्रगामी बनना है तो प्रथम राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति मे सुधार करना है। तभी देश उन्नत हो सकता है।

हमारी जनतन्त्र सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित होना चाहिये कि वह राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा दे। इसी के द्वारा निर्धनता भी दूर हो सकती है। जब हम अपनी अच्छाई-बुराई, कर्त्तव्य तथा अधिकार सोच सकेंगे तभी अमेरिका, रूस आदि बड़े राष्ट्र की भांति उन्नति कर सकते हैं।

काश्मीर की समस्या

काश्मीर हमारे भारतवर्ष के उत्तर मे, हिमालय से नीचे है। इसकी सीमा रूस, चीन, नेपाल, पाकिस्तान, हिन्दुस्तान इन सब देशों से मिलती है। इसके चारों ओर पहाड़ है, यहां के, प्राकृतिक दृश्य बहुत ही सुन्दर हैं। इस कारण हम इसको भारत का स्वर्गीय टुकड़ा कह सकते हैं।

हमारे भारतवर्ष में विदेशी हकूमत ने फूट के जो बीज बोये, उनके जाने तक यह पेड़ बन चुके थे। विशेष कर रियासतों के राजाओं पर अधिक प्रभाव पड़ चुका था। अंग्रेजी हकूमत का ख्याल था, कि भारतवर्ष को सारे देश में एक जनतन्त्र राज्य स्थापित करने में बड़ी कठिनाई होगी। देश में संघर्ष होगा, हमारा राज्य फिर स्थापित होगा।

परन्तु हमारे बुद्धिमान नेताओं ने विशेष कर उपमन्त्री सरदार पटेल ने अपनी कूटनीति का प्रयोग किया। बिना संघर्ष, बिना किसी

कठिनाई से राजाओं को भारत के जन-तन्त्र राज्य में मिला दिया। राजाओं ने हर्ष से स्वीकार किया। एक दो ऐसे राजा भी थे जो कि पाकिस्तान की ओर झुके हुये थे। परन्तु बाद में उनको किसी न किसी ढंग से मिला दिया। यह हमारा और हमारे देश का सौभाग्य था।

परन्तु काश्मीर के महाराजा ने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया था। वह न तो पाकिस्तान से मिलना चाहता था, न हिन्दुस्तान से, वह स्वयं स्वतन्त्र राज्य करना चाहता था। किन्तु पाकिस्तान के गवर्नर जनरल मिस्टर जिन्ना चाहते थे कि काश्मीर को पाकिस्तान में मिला दिया जाय, क्योंकि वहां की जनता अधिकतर मुसलमान है।

अब पाकिस्तान सरकार ने काश्मीर को अपने अधीन करने के लिए गुप्त कार्य करना आरम्भ किया। उन्होंने पठानों को रुपये का लालच देकर और यह कह कर कि काश्मीर ऐसा स्थान है कि जहां पर किसी भी वस्तु की कमी नहीं है। इसको हम स्वर्ग समझते हैं। यदि यह हिन्दुस्तान में गया तो तुम्हारे लिए बहुत हानि होगी। यह कह कर उन्होंने पठानों को खूब भड़काया। पठानों ने काश्मीर में तरह-तरह के उपद्रव लूटमार करनी आरम्भ कर दी।

वास्तव में काश्मीर का युद्ध एक महायुद्ध था। परन्तु देखने में छोटा था। यह साम्यवाद और साम्राज्यवाद का युद्ध था। स्पष्ट शब्दों में अमेरिका और रूस का युद्ध था। यहां का गिलगिट का दर्रा एक महत्व का स्थान है। इस दर्रे द्वारा दूसरे देशों के साथ सम्बंध रहता है। साम्राज्यवादी जानते थे कि यदि यह हिंदुस्तान के अधीन रहा तो साम्यवाद इस मार्ग द्वारा भारतवर्ष में शीघ्रता से फैल सकता है। क्योंकि हिंदुस्तान समाजवाद की ओर झुक रहा है। साम्यवाद और यह मिलता जुलता है। अमेरिका चाहता था कि यदि यह पाकिस्तान में मिल जावे तो रूस को आगे बढ़ने से रोका जा सकता है। क्योंकि पाकिस्तान हमारे हाथ का खिलौना है। जिधर फेरना चाहे उधर

पलट सकते हैं। इन्होंने पाकिस्तान को हर प्रकार की सहायता देने का उत्साह दिया। इसी कारण से काश्मीर में युद्ध आरम्भ हुआ।

जब काश्मीर में पठानों के उपद्रव बढ़ रहे थे। वे काश्मीर में लूटमार और वहां की हिंदू जनता को दुःख दे रहे थे, स्त्रियों की बुरी दशा कर रहे थे तब राजा की आंखे खुली। पठानों ने सारे इलाकों में अपना अधिकार कर लिया। श्रीनगर केवल बीस मील दूर रह गया था, तब उसकी आंखे अच्छी तरह खुलीं। फिर उसने शेख अब्दुल्ला को जो एक साल से वहां जेल में थे, और आजकल वहां के प्रधान मंत्री हैं, रिहा किया और भारत सरकार के पास रक्षा के लिए सहायता मांगने को भेजा।

हमारी सरकार तो जैसे इस प्रतीक्षा में पहले से ही बैठी थी। शेख अब्दुल्ला वायुयान द्वारा दिल्ली पहुंचा, और भारत सरकार से रक्षा के लिए मांग की। भारत के प्रधान मन्त्री तथा उपप्रधान मन्त्री ने उससे कहा कि तुम एकबार फिर काश्मीर लौट जाओ और राजा के हस्ताक्षर करवा यह लिखवा कर लाओ कि हम भारत के साथ मिल चुके हैं उसके हम अंग हैं। शेख अब्दुल्ला उसी समय वापिस लौटा। अब श्रीनगर केवल १० मील दूर रह गया था। वह वहां जाकर शीघ्र ही राजा के हस्ताक्षर करवा कर फिर ४ बजे सुबह दिल्ली पहुंच गया।

इधर दिल्ली के हवाई अड्डे पर रक्षा विभाग के मन्त्री सरदार बलदेवसिंह और भारत के उपप्रधान मन्त्री सरदार पटेल, वायसराय की आज्ञा लेकर, कुछ सेना के अधिकारियों सहित जो काश्मीर जानेको थे, सारीरात जगते रहे। ठीक चार बजे सुबह शेख अब्दुल्ला वायुयान द्वारा यहां पहुंचा, पहुँचते ही कागज पर हस्ताक्षर देखकर ठीक चार बजकर पांच मिनट पर उन सात देश भक्तों सपूतों का वायुयान रवाना हुआ, जो यह कहकर गए थे कि हम अब काश्मीर भूमि के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर करने जा रहे हैं। उनको यह निश्चय था कि वहां हम बच नहीं सकते।

इनका वायुयान दो घण्टे में श्रीनगर पहुंचा। अब श्रीनगर केवल तीन मील दूर रह गया था। उन सातों वीरों ने हवाई अड्डे को सुरक्षित रखने के लिए चारों ओर तोपें गाढ़ दीं और ६००० (हजार) पठानों का, दो घन्टे तक उनके छक्के छुड़ाए। इतने में भारत की और भी सेना उतर रही थी। उन्हों ने हवाई अड्डे को सुरक्षित रखकर अपने प्राण खो दिए। यहां खूब युद्ध होता रहा, दुश्मनों की सेना पीछे भागती गई। फिर तो काफी इलाके दुश्मनों से छीन कर अपना अधिकार जमाया।

इस मामले को सुलझाने के लिए भारत के प्रधान मन्त्री ने संयुक्त राष्ट्रसंघ में भेजा। इस मामले को लेकर विजय लक्ष्मी पंडित भेजी गई। परन्तु वहा जाकर पाकिस्तान का विदेश मन्त्री जफरुल्ला ने झूठ बोला कि काश्मीर मे हमारा कोई हाथ नहीं हैं। वहां तो केवल हिन्द की फौजें लड़ रही है। वही वहां की मुसलमान जनता को दुःखी कर रही हैं। भारत सरकार को सिर झुकाना पड़ा।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसकी जाँच के लिए कमीशन भेजा। जब कमीशन काश्मीर पहुंचा और वहां की जांच करना आरम्भ किया तब पं० जवाहरलाल ने पाकिस्तान की सब पालिसी खोलकर रख दी। इसके प्रमाण दिए कि पाकिस्तान की सेना यहां लड़ रही है, तब तो जफरुल्ला को मुंह की खानी पड़ी जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने झूठ बोल कर आया था।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने दोनों दलों को युद्ध बन्द करने और अपनी अपनी सेना हटाने को कहा। अब वहां का युद्ध तो बन्द हो गया। किन्तु भारत सरकार ने और सेना को हटाने के लिए मना कर दिया। अब संयुक्त राष्ट्र संघ ने यह निर्णय किया कि वहां की जनता की राय ली जावे, जनता जिधर जावेगी वैसा ही होगा अब जन-मत लेकर फिर काश्मीर के भाग्य का निर्णय होगा।

भारत की चुनाव प्रणाली

स्वतन्त्रता के संग्राम में हमारे देश में कितनी ही नई भावनायें उत्पन्न हुई। उनमे से सबसे अधिक लोक प्रिय जनतन्त्र शासन प्रणाली की भावना है। लोगों के दिल में इसके द्वारा सर्व समानता का विचार शक्तिशाली हुआ और उस विचार को क्रियान्वित करने के हेतु लोगों ने शासन को भी लोकमत के अनुसार चालू रखने का प्रयत्न किया और उसी के फल स्वरूप कुछ व्यक्ति जो कुछ विशेष योग्यता रखते थे, चुनाव मे खड़े होने लगे और जिसके अधिक मत होते थे, वही व्यक्ति चुना हुआ घोषित कर दिया जाता था। इस प्रकार पहले पहल हमारे देश मे वर्तमान चुनाव प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ।

परन्तु जब से हमारा देश स्वतन्त्र हुआ है तो अधिकतर देशवासियों की इच्छा भारत को लोक तंत्र बनाने की है और उसके अच्छे या बुरे होने का फल हमारे चुनाव पर निर्भर है। इस कारण यदि हमे अपने देश को उन्नतिशील बनाना है तो हमें अपनी चुनाव प्रणाली को अवश्य अत्यन्त श्रेष्ठ बनाना पड़ेगा। जब हमारे देश की चुनाव प्रणाली श्रेष्ठ होगी तो हम उस श्रेष्ठतम व्यक्ति ही अपने प्रतिनिधि चुन सकेंगे। और क्योंकि राज्य का समस्त भार हमारे प्रतिनिधियों के कंधों पर होगा, इस कारण हमारे प्रतिनिधि भी उस भार को वहन करने वाले ही होंगे। इसीलिये अपनी स्वतन्त्रता का शान्तिमय उपयोग करने के हेतु हमें चुनाव प्रणाली को श्रेष्ठतम बनाना होगा।

आजकल जो हमारे देश मे चुनाव प्रणाली है, उसके मत दाताओं तथा चुनाव लड़ने वालों के सम्बन्ध में नियम भी पूर्ण रूप से जन तंत्रीय नहीं हैं। उसके द्वारा बहुत से व्यक्ति जान बूझ कर मत दाताओं की सूची में नहीं लिय जाते। पहले तो हमारे चुनाव में और

भी कितनी ही अड़चनें थीं, जिनको हमारी वर्तमान राष्ट्रीय सरकार ने दूर कर दिया है परन्तु कितनी ही दूसरी बुराइयां अभी शेष हैं जिनको दूर करना परम आवश्यक है। यद्यपि वे बुराइयां कठिन अवश्य हैं परन्तु असम्भव नहीं हैं। अभी तक जितने भी साधारण चुनाव लड़े गये हैं, उन में व्यक्ति की योग्यता की अपेक्षा पार्टी का जिस से कि उस व्यक्ति का सम्बन्ध है अधिक ध्यान रखा जाता है। जिससे बहुत से योग्य व्यक्ति शासन कार्य में अपने प्रतिद्वन्दियों की अपेक्षा चतुर होते हुये भी असफल हो जाते हैं।

दूसरी बुराई जो वर्त्तमान चुनाव प्रणाली के अन्दर विद्यमान है और जिसको दूर किये बिना हमारे चुनाव करने का उद्देश्य सफल नहीं हो पाता, वह है सरकारी कर्मचारियों का अनुचित प्रभाव, जो कि वह लोग सरकार का पक्षपात करके जनता पर डालते हैं। और कहीं-कहीं तो लोगों को उनकी इच्छा के विरुद्ध मत देने के लिये विवश करते हैं। पिछले डिस्ट्रिक्ट बोर्डों के चुनाव में तो सरकारी कर्मचारियों ने अपनी धांधली बाजी से न तो विपक्षियों को चुनाव सम्बन्धी प्रचार करने दिये, यहां तक कि कहीं कहीं पर तो विपक्षियों का नाम भी ज्ञात नहीं होने दिया और न ही जनता को सही मत देने दिया।

परन्तु इसका यह अर्थ भी ठीक नहीं है कि जनता के सही मत संग्रह न होने का कारण सरकारी कर्मचारी और शक्तिवान पार्टी हैं अपितु उस में मत दाताओं की भी अज्ञानता बहुत अधिक है। लोग अपने मत का मूल्य नहीं समझ सके हैं। भोले भाले काश्तकार लोग जिन्हें सदा अपने कार्यों से ही फुरसत नहीं मिलती, वे चुनाव के सम्बन्ध में क्या सोच सकते हैं। अगर कोई इन से कहेगा भी कि उनको अपने वोट योग्यतम व्यक्ति को देने चाहियें तो उनका उत्तर यह होगा कि हमें तो किसी न किसी को वोट देने ही हैं, इस कारण जो

व्यक्ति अधिक धनवान तथा शक्तिवान होता है उसी को वहां अधिक वोट दिये जाते हैं।

भारतीयों की भक्ति तथा श्रद्धा भावना भी उनके सही चुनाव करने में बाधक सिद्ध हुई हैं। जो व्यक्ति या पार्टी एक बार जनता की भक्ति और श्रद्धा की पात्र बन जाती है, वह फिर चाहे अपने उद्देश्यों से गिर जाये, चाहे अपने गुणों से शून्य क्यों न हो जाये, उसके प्रति जनता की श्रद्धा बनी रहती है। बहुधा चुनावों के परिणामों में देखा गया है कि गरीब तथा साधारण वर्ग के व्यक्ति की सदा उपेक्षा होती रहती है। यद्यपि मतदाता अधिकतर साधारण श्रेणी के व्यक्ति ही होते हैं।

वर्त्तमान चुनावों में गरीबों के सच्चे प्रतिनिधि कैसे सफल हों, यह वर्त्तमान समय में एक समस्या है, क्योंकि बहुधा ऐसा देखा जाता है कि जो लोग गरीबों के प्रतिनिधि होने की घोषणा करते हैं वह स्वयं भी उच्च कहे जाने वाले धनवान वर्ग से सम्बन्ध रखते हैं। और भेष बदल कर गरीबों के शत्रु ही उनके सच्चे प्रतिनिधि बनजाते हैं। बहुधा पूंजीपति ही मजदूरों के नेता होते हैं और जमींदार किसानों के नेता बनते हैं। वर्त्तमान चुनावों में कई न्यूनतायें हैं जो विशेष खटकने वाली हैं। प्रथम तो सरकार ही अपनी पक्षपात पूर्ण नीतिके द्वारा, अपने प्रतिद्वन्दियों के प्रचार कार्य में रोड़ा अटकाती है दूसरे लोग ईर्ष्यावश अपने प्रतिद्वन्दियों के विरुद्ध बहुत सी अनर्गल बातें करते हैं। जिनसे कि चुनाव के उद्देश्यों का कोई सम्बन्ध नहीं। दूसरे चुनावों के उद्देश्य अधिकतर अस्पष्ट या अदालती भाषा में प्रचारित किये जाते हैं या कम से कम बहुत से स्थानों पर एक दो असम्भव और कठिन उद्देश्यों को भी अपनी लोक प्रियता बढ़ाने के हेतु प्रयोग किया जाता है। कहीं कहीं मतों को मोल भी लिया जाता है और व्यक्तिगत योग्यता से धन की योग्यता बाज़ी मार लेती है।

वर्त्तमान समय में मत दाताओं पर किसी प्रकार भी दबाव न डाला जाना चाहिये। जहां तक हो सके सरकारी कर्मचारियों को भी

तटस्थ रहना चाहिये। मत दाताओं को मत दान करने से पहले भले का अवश्य ध्यान करना चाहिये। चुनाव प्रचार के कार्य को उत्तम प्रकार से चलाना चाहिये। जिससे कि प्रतिद्वन्दियों के द्वेष को अधिक प्रोत्साहन न मिले। लोगों के मतदान की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिये। लोगों का चुनावों में रुपया न खर्च करना चाहिये और मतदान सचाई तथा पूर्ण ईमानदारी से होना चाहिये

चुनाव के समय जनता को शान्ति प्रिय होना चाहिये तथा सरकार को भी शान्ति बनाये रखने के प्रयत्न को सफल बनाना चाहिये और प्रत्येक मतदाता का कर्त्तव्य होना चाहिये कि वह अपने मत का सही और उचित प्रयोग करे।

विज्ञान

यद्यपि विज्ञान की अधिक उन्नति उन्नीसवीं शताब्दी में ही हुई है तथापि इसका यह अर्थ नहीं है कि उससे पहले विज्ञान में मनुष्य ने कोई उन्नति न की हो। मनुष्य स्वभाव से ही नवीनता का प्रेमी रहा है, उसने अपने स्वभाव के अनुकूल ही अपने जीवन में नवीनता को स्थान दिया है। आदि-काल में जब मनुष्य दूसरे जीवों की भांति वनों में पेड़ों पर रहता था तथा कन्द मूल का भोग लगाता था तब भी वह अपनी बुद्धि को नवीनता की खोज मे लगाता रहा। जब उसने जाना कि रात को जमीन पर सोने से दूसरे हिंसक जन्तु उसे खा जायेंगे तो उसने पेड़ों पर रहना आरम्भ कर दिया। उसने जंगल में बासों के द्वारा आग लगते देखकर और दूसरे हिंसक जीवों को उससे डरते देखकर उस अग्नि को अपना रक्षक समझ लिया तथा उसे आग जैसी आवश्यक वस्तु का ज्ञान हो गया और इसी प्रकार आदि से लेकर आजतक मनुष्य आवश्यकता के अनुकूल विज्ञान मे प्रगति करता रहा।

वैज्ञानिक उन्नति के अनुसार मानव के आजतक के इतिहास को कई भागों में बांटा जा सकता है (क) पाषाणयुग तथा पहिले की मानव की विज्ञान प्रगति (ख) धातुकाल और वैज्ञानिक उन्नति (ग) बारूद का प्रयोग और मानव जाति के इतिहास पर प्रभाव और (घ) आधुनिक युग में विज्ञान तथा विज्ञान का भविष्य क्या होगा।

आवश्यकता आविष्कार की जननी है। लोग बहुधा इसी बात पर विश्वास करते हैं और शतप्रतिशत होता भी ऐसा ही है। जब मनुष्य को अपने शत्रु हिंसक पशुओं का सामना करना पड़ा तथा अपने भोजन के लिए शिकार करना पड़ा तो उसने अपने आपको विपत्तियों की अपेक्षा अधिक शक्तिहीन पाया। उसने अपने बुद्धि-बल द्वारा नुकीले पत्थरों का तथा पेड़ों की डालियों को काटकर लाठियों का प्रयोग किया परन्तु उससे उसके उद्देश्य की सिद्धि न हो सकी और शनैः शनैः उसने लोह ताम्र आदि कठोर धातुओं का पता लगाया और अपने प्रमुख अस्त्र के रूप मे तीर कमान का आविष्कार किया और बाद में कटार और तलवारों की भी अधिक महत्ता रही। इसका यह अर्थ कदापि नहीं हो सकता कि मनुष्य ने युद्ध और शिकार के लिए ही विज्ञान मे उन्नति की परन्तु उसने अपने जीवन की दूसरी आवश्यक वस्तुओं का भी पता लगाया। पहिले मनुष्य जंगलों मे नंगे रहा करते थे। धीरे-धीरे उन्होंने पेड़ों की छाल तथा पत्तों का प्रयोग वस्त्रों के लिए किया और बाद मे रुई के वस्त्रों का आविष्कार किया। तथा दवाइयां और स्वास्थ्य सम्बन्धी भी आविष्कार किया गया। अभिप्राय यह है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति हुई।

मनुष्य को अपने आने-जाने के साधनों के विकास की आवश्यकता हुई। उसने गाड़ी रथ इत्यादि प्राचीन वाहनों का आविष्कार किया। उसको रास्ता बनाने के लिये और पहाड़ तोड़ने के लिए पुलों और बारूद जैसी वस्तुओं को खोजना पड़ा। बारूद के आविष्कार

ने मानव जाति के इतिहास में आश्चर्य जनक उलट फेर की। पहिले लोग तीर तलवार की लड़ाई लड़ते थे परन्तु बाद में बारूद की गोलियों से युद्ध होने लगे और उनके प्रयोग करने के लिए तीर के स्थान पर बन्दूके तथा तोपें पहुँची। लोगों का युद्ध-विधान ही बदल गया और आजकल तो स्थिति कुछ और ही हो गई है और परमाणु-बम जैसे भयानक अस्त्रों का प्रयोग होने लगा है।

आजकल विज्ञान अपनी चरमसीमा पर पहुँच गया है तथापि उसमें अभी अनेक क्षेत्रों में उन्नति तथा आविष्कारों की आवश्यकता है। यद्यपि युद्ध सामग्री सम्बन्धी वैज्ञानिक उन्नति पर्याप्त हो चुकी है तथापि जीवन के दूसरे क्षेत्र अभी भी कुछ पिछड़े हुये हैं, शासन विज्ञान की ओर आज का जगत अग्रसर हो रहा है परन्तु जगत की प्रमुख शक्तियां अब भी युद्ध विज्ञान की उन्नति के लिए लालायित है। हमारे पिछले पचास वर्षों का इतिहास युद्ध और क्रान्तिकारी घटनाओं का लेखा बना हुआ है और इन वर्षों में शायद ही कभी सम्पूर्ण जगत में शान्ति रही हो। इसी कारण चिकित्सा विज्ञान, कृषि-विज्ञान तथा खनिज विज्ञान आदि विषयों पर युद्ध विज्ञान की भांति ध्यान नहीं दिया गया है और उनका आविष्कार-क्षेत्र अभी यथेष्ठ उन्नतिशील नहीं है।

चिकित्सा-विज्ञान में संसार की उन्नति अभीतक रामायण तथा महाभारत युग से भी पिछड़ी हुई है। उन दिनों स्वास्थ्य और चिकित्सा के अत्यधिक वैज्ञानिक प्रगति कर चुका था उन दिनों का इतिहास भी इस बात का साक्षी है कि उस समय में राजा महाराजा तक चिकित्सक कार्य को बड़े गौरवका विषय समझते थे। उस समय मनुष्य की चिकित्सा के लिए ही डाक्टर न थे अपितु पशु पक्षियों की भी उचित जानकारी उन दिनों के डाक्टरों को होती थी। परन्तु आधुनिक युग में शल्य-चिकित्सा ऊपर ही अधिक ध्यान दिया जाता है और इसी कारण आज-कल अनेक ऐसे रोग विद्यमान हैं, जिनका

निवारण अभीतक हमारे चिकित्सा-विज्ञान के आचार्य नहीं कर सके। परन्तु इसमें भी युद्ध काल ही अधिक बाधक सिद्ध हुआ है।

संसार की आबादी दिन प्रति दिन बढ़ती रहती है और मनुष्य के लिये वायु और जल के पश्चात् अन्न की आवश्यकता है, इस कारण बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण के हेतु संसार को अन्न की पैदावार की उन्नति करना भी परम आवश्यक है। बहुत सी बेकार बंजर भूमि को अन्न के योग्य बनाने के लिये विज्ञान यंत्रों की आवश्यकता है और वैज्ञानिक खादों की भी खोज होना आवश्यक है परन्तु इस क्षेत्र में यद्यपि कुछ उन्नति अवश्य हुई है परन्तु आज आजकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वह पर्याप्त नहीं है।

संसार की आबादी दिन प्रति दिन बढती रहती है और मनुष्य के लिये वायु और जल के पश्चात अन्न की आवश्यकता है इस कारण बढ़ती हुई जन-संख्या के भरण-पोषण के हेतु संसार को अन्न की पैदावार की उन्नति करना भी परम आवश्यक है। बहुत सी बेकार बंजर भूमि को अन्न के योग्य बनाने के लिये वैज्ञानिक यंत्रों की आवश्यकता है और वैज्ञानिक खादों की भी खोज होना आवश्यक है परन्तु इस क्षेत्र में यद्यपि कुछ उन्नति अवश्य हुई है परन्तु आज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए वह पर्याप्त नहीं है।

हमारी भूमि हमको अन्न ही नहीं अपितु बहुत सी अन्य बहुमूल्य वस्तुएं भी प्रदान करती है, इसके गर्भ में सैकड़ों मनुष्य-जीवन-के लिये उपयोगी वस्तुएं छिपी हुई हैं, जिनमें से कुछ का पता लगाया जा चुका है परन्तु उनके निकालने तथा खोजने के साधनों तथा प्रवृत्तियोंकी न्यूनताके कारण उनका पूर्ण विकास नहीं हो सका। पिछले

युद्धों में कितने ही खनिज तथा तेल निकालने के कारखाने नष्ट कर दिए गए। इसी कारण हम अभीतक खनिजों की खोज में पिछड़े हुए हैं।

यों तो किसी भी श्रेष्ठतम वस्तु का उपयोग भला बुरा दोनों प्रकार से किया जा सकता है। इसी प्रकार जहां विज्ञान इस भूतल को स्वर्ग बना सकता है, वहां उसका दुरुपयोग करने से वह संसार का नाश भी कर सकता है और उसे नर्क से भी भयानक बना सकता है। आजकल मनुष्य ने विज्ञान रूपी अमृत को विष से भी भयानक बना दिया है, उसने जहां मोटरों का प्रयोग, अपने आराम का ध्यान रखकर अथवा अपने समय की बचत करने के हेतु किया है, वहां वह उसमे सैनिक भरकर अथवा सैनिक सामग्री भेजकर मानव के विनाश के लिये भी उसका प्रयोग करता है। यद्यपि विज्ञान से संसार सुख और शान्ति का भंडार बन सकता है तथापि मानव ने अपने लोभ ईर्ष्या तथा अहंकार वश उसका प्रयोग अपने ही विनाश के लिये अधिक किया है।

विज्ञान से संसार की कितनी ही अद्भुत और आश्चर्यजनक उन्नति हुई हैं। जहां पहले एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने में वर्षों व्यतीत हो जाते थे, वहां आज कुछ ही घंटों में आराम से पहुँच सकते है। पुराने समय में एक स्थान पर यदि अकाल पड़ जाता था तो दूसरी जगह से अन्न मंगाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होता था, लाखों मनुष्य भूखों मर जाते थे। आज सारे संसार के साधन इतने सुलभ और गतिवान है कि समस्त संसार एक कुटुम्ब बन गया है। रेल वायुयान जैसी हमारी जीवन उपयोगी वस्तुयें ही हमारे वर्तमान के वैज्ञानिकों की हमारे लिए अद्भुत देन हैं।

यों तो हमारी वर्तमान सभ्यता का जन्मदाता ही विज्ञान है तो भी आज उसने हमारे जीवन को उन्नत बना दिया है। विज्ञान के

द्वारा ही संसार ने प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति को और विज्ञान की कृपा से आज संसार के मानव के मन की संकीर्णता जो कि बहुत पुरानी गांठ की भांति मानव के मन में बंधी हुई है, दूर हो रही है। आधुनिक दो सौ वर्षों में संसार ने विज्ञान में जितनी उन्नति की है पहले शायद ही कभी की गई हो। आज हमारे यातायात साधनों, उद्योगिक साधनों, कृषि, सामाजिक व्यवहारों, धर्म, सभ्यता तथा इतिहास पर विज्ञान का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और विज्ञान के द्वारा मानव के ज्ञान की अपार वृद्धि हुई है।

पहले कितनी ही जमीन घास की अधिकतावश अथवा खराब होने से कृषि के अयोग्य ही रहती थी। परन्तु अब मशीनों के द्वारा उसको उपजाऊ बनाने के हेतु खोदा जाता है और कृषि-सम्बन्धी नये-नये प्रयोग विज्ञान द्वारा किए जा रहे हैं। नये-नये खादों का प्रयोग किया जा रहा है और पैदावार बढ़ाने के हेतु वैज्ञानिक नये-अनुसन्धान कर रहे हैं।

विज्ञान के द्वारा मनुष्य के ज्ञान में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है, पहले एक देश के मनुष्यों को अपने देश के प्रसिद्ध स्थानों का देखना तो दूर रहा पता भी नहीं होता था परन्तु आजकल विज्ञान के यंत्रों के द्वारा हम चन्द दिनों में सारे विश्व का दौरा कर सकते हैं, रेडियो के द्वारा सारे विश्व की घटनाओं को घर बैठे सुन सकते हैं अपने दूसरे सम्बन्धियों से जो कि किसी निकटवर्ती अथवा देश के किसी कोने में स्थित शहर में रहता हो टेलीफोन द्वारा घर पर बैठे बात-चीत कर सकते हैं। बिजली के यंत्रों द्वारा भी हमारे जीवन में कितने ही आराम मिलते हैं, गर्मी के मौसम में बिजली के पंखों से हवा लेते हैं। बिजली से हम लोग खाना पकाते हैं। रोशनी करते हैं, तथा कितने ही छोटे-बड़े कारखाने चलाये जाते हैं।

विज्ञान से हमारे भौगोलिक ज्ञान में भी अपार वृद्धि हुई है। आज हमारे वैज्ञानिक पृथ्वी का चन्द्रलोक और दूसरे ग्रहों से

सम्बन्ध स्थापित करना चाहते है। खुर्दबीन और दूरबीन यंत्रों की सहायता से भी कितनी ही और खोजे की जा रही है और इन यंत्रों से हम सूक्ष्म से सूक्ष्म कीटाणुओं को भी देख सकते है। आज के हमारे विज्ञान के द्वारा मानव का ज्ञान स्वास्थ्य सम्बन्धी खोजों में तथा खनिज-पदार्थों की खोजों मे वहुत बढ़ गया है।

जहां विज्ञान ने मनुष्य के ज्ञान मे अपार वृद्धि की है, वहां उसने मनुष्य की धार्मिक भावनाओं को भी शुद्ध किया है। लोगों में बढ़ते हुए अन्ध विश्वास को तोड़कर ईश्वर में सच्ची निष्ठा स्थापित की है। विज्ञान के द्वारा हमारे इतिहास का भी विकास हुआ है और विज्ञान की खोजों के कारण उसकी धारा ने कई स्थानों पर पलटा खाया है। यदि विज्ञान की नई २ खोजे न होती तो आज हमारा इतिहास भी अन्य ही प्रकार का होता।

विज्ञान को विद्वान पुरुष जीवन का आवश्यक अंग मानते हैं, उनका कहना है कि मनुष्य मे हमेशा से वैज्ञानिक प्रवृत्ति रही है यहां तक कि तुलसीदास जी तथा कबीर जैसे पुराने लोगों ने भी जो कि साहित्य के आचार्य हैं, विज्ञान के अनुरूप ही अपनी कई कवितायें लिखी है, इससे यही सिद्ध होता है कि विज्ञान मानव के जीवन से परम आवश्यक है।

×

सेवा-धर्म

मनुष्य के मन में अच्छे और बुरे सब प्रकार के विकार पैदा हैं, उसके मन में कभी अत्यन्त क्रोध होता है तो कभी दया की भी सीमा नहीं रहती। इन्हीं विचारों मे से कोई एक मनुष्य के जीवन में प्रबलरूप धारण कर लेता है और मनुष्य अपने भावों के अनुसार ही कार्य करने लगता है। इन भावों मे सेवा-भाव को सबसे श्रेष्ठ कहा गया है। यहां तक कि उसे अनेक व्यक्ति परमात्मा से मिलने

का साधन मानते है। सेवा-धर्म का साधारण अर्थ है किसी की निःस्वार्थ भाव से सेवा करना। तथा दूसरों को प्रसन्न रखकर स्वयं प्रसन्न रहना। सेवा-धर्म के लिए साधारण जीवन यापन, घृणा, अहंकार, अभिमान, क्रोध तथा प्रतिशोध की भावनाओं का त्याग करना इत्यादि बातों की परम आवश्यकता है। सेवक जितना विनय शील, हंसमुख तथा प्रसन्न चित्त होगा, सेवा करवाने वाले पर उसका उतना ही अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

सेवा के भी कई प्रकार होते हैं। सेवक स्वामी की वेतन लेकर सेवा करता है। यद्यपि इसमे स्वार्थ का भाव अधिक होता है तथापि यदि सेवक तथा स्वामी अपनी मर्यादा का पूर्ण ध्यान रखें तो इसमें भी सेवा धर्म के समान सन्तुष्टि ही होती है। सेवक अपने वेतन आदि का ख्याल न करके अपने स्वामी की सेवा करे तो वह भी किसे दूसरे अन्य प्रकार के सेवक से कम आदरणीय नहीं होता। स्वामी भी यदि अज्ञानतावश उसकी सेवा का मूल्य न समझ सकेगा तो भी उसे अपनी सेवा का फल अवश्य मिलेगा।

प्राचीन भारत में यदि कोई मूल्यवान और चरित्र को बलवान बनाने वाली वस्तु समझी जाती थी तो वह सेवा-धर्म ही था। उन दिनों धन की अपेक्षा गुणों को अधिक आदर मिलता था और सेवा धर्म मनुष्य के सारे गुणों का राजा समझा जाता था, इसी कारण उस समय शिक्षा की यदि कोई शुपल थी तो वह सेवाव्रत के रूप में ही थी। उन दिनों राजा हो या रंक सबके अन्दर सेवा भाव को उत्साहित करना आवश्यक समझा जाता था। उन दिनों गुरुओं की सेवा तथा आशीर्वाद ही विद्यार्थी के लिये प्रमाण-पत्र का कार्य करता था। गुरुजनों की सेवा करना प्रत्येक मनुष्य अपना कर्त्तव्य समझता था और 'करे सेवा पावे मेवा' पर लोगोंका पूर्ण विश्वास था।

माता-पिता की सेवा करना हमारे अतीत के इतिहास का स्वर्ण पृष्ठ है। राम ने पिता की आज्ञा से वन में कष्ट सहे और पितृभक्त

श्रवण कुमार को आज भारत का बच्चा-बच्चा जानता है, उसने अपने मां बापों की सेवा में अनेक कष्ट सहने पर भी किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होने दी और मां बाप की सेवा में ही उसने अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये।

लक्ष्मण जो संसार के भ्रातृ सेवकों में सबसे अग्रणी रहे हैं। उन्होंने भाई की सेवा के लिये राज को ठोकर मार कर वन के कष्ट झेलने पसन्द किये। चौदह साल तक अनेक कष्टों को सहकर भी कभी भी भाई की सेवा से विमुख नहीं हुये।

संसार में प्रियजनों तथा कुटुम्बियों के सेवक तो मिलने आसान है परन्तु दीन दुखियों और रोगियों की सेवा करने वाले विरले ही होते हैं उसके लिये बड़े बलिदान की आवश्यकता होती है। घृणित से घृणित व्यक्ति की सेवा करनी पड़ती है। दूसरों के कटु शब्द भी सहने पड़ते हैं, अपना खाना पीना यहाँ तक कितने ही आवश्यक कार्यों को छोड़कर रोगियों की सेवा करनी होती है।

मनुष्य के जीवन में सेवा की परम आवश्यकता है। दूसरे की निःस्वार्थ सेवा करने से मनुष्य की आत्मा को संतुष्टि होती है। सेवा धर्म से भूतल भी एक बार स्वर्ग बन जाता है। कितने ही साधन हीन व्यक्तियों की सेवा करने से उनकी आत्मा का आशीर्वाद मिलता है। सेवक पर परमात्मा भी प्रसन्न रहता है। उसका इस लोक के बाद परलोक भी सुखमय हो जाता है। सेवा की महिमा बड़ी अपरम्पार है और इसके तत्व को समझ कर उसे अपने जीवन में लाने वाले विरले ही व्यक्ति होते हैं। सेवा की प्रवृत्ति भी एक प्रकार की ईश्वरीय देन है। सेवा के भाव यों तो प्रत्येक व्यक्ति में न्युनाधिक पाये जाते हैं परन्तु फिर भी कुछ पुरुषों की विशेष प्रवृति होती है। कोई देश सेवा को अपना परम कर्त्तव्य समझता तो कोई धर्म की सेवा को ही श्रेष्ठ मानता है।

वर्त्तमान युगमें देश-सेवाका बोल बाला है। सब देशोंमें देश सेवा की भावनाओं का प्रबल जोर बढ़ रहा है। लोग देश के भले के लिये कठोर यातनायें सह रहे हैं। अपने देश की उन्नति के हेतु अपना तन, मन, धन सब कुछ निछावर कर रहे हैं। लोग देश-प्रेम में दीवाने हो रहे हैं और अपने देश के लिये प्राणों का बलिदान करना अपना धर्म समझते हैं परन्तु इसका दुरुपयोग भी अधिक किया जा रहा है। लोग देश प्रेम के मिस अथवा देश की उन्नति के बहाने दूसरे अन्य देशों को हानि पहुंचाते हैं। और अधिकतर संसार में सच्चे ईर्ष्याहीन देश प्रेम की कमी है।

धर्म की भी बहुत से लोग सेवा करते हुए अपने प्राणों का बलिदान कर गये और धर्म के हेतु उन्होंने कष्टों को भी सहन करके अपार धैर्य का परिचय दिया, धर्म सेवक वीर हकीकत राय का धैर्य और साहस क्या कहीं अन्य स्थान पर मिल सकता है? गुरु गोविन्द सिंह जी के बच्चों का भयानक यातना सहकर धर्म पर प्राण देना क्या दुनियां के इतिहास में अन्य कहीं है? इसी प्रकार स्वामी दयानन्द जी का बलिदान धर्म को पुनर्जीवित करने वाला और कहां होगा? हमारे कितने ही अनगिन धर्म सेवक अपने धर्म की सेवा में बलिदान हो चुके हैं।

साहित्य की सेवा करने वाला तो एक महान तपस्वी होता है, जो कि अपने जीवन को निःस्वार्थ भाव से जलाकर लोगों के लिये अपनी अमूल्य कृति छोड़ जाता है। जैसे शरीर के कष्टों को डाक्टर का मरहम शीतलता प्रदान करता है, वैसे ही मन के घावों पर कवि या लेखक अपनी रचनाओं का मरहम लगाता है।

सेवा-धर्म से मनुष्य के विचार पवित्र, मन दयालु तथा शान्त हो जाता है। वह शोक-खुशी सबको एक समान समझने लगता है।

०

बेसिक शिक्षा

कुछ समय पहिले युक्त प्रान्त की सरकार ने अपने प्रान्त में एक नई शिक्षा प्रणाली ग्रहण की थी। और अभी तक उसका प्रयोग निम्न कक्षाओं में ही किया जा रहा है। इसको पहिले भी मध्य प्रांत के कई स्थानों में कार्यान्वित किया गया था। आशा की जाती है, कि यह प्रणाली भविष्य की परिस्थितियों के अनुकूल प्रमाणित होगी क्योंकि अभी तक इसके जितने प्रयोग हुये हैं, उनका फल आशाजनक है। इसके लिये लोक प्रियता भी दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। इस प्रणाली का नाम बेसिक शिक्षा प्रणाली रखा गया है। इसको उर्दू में बुनियादी तालीम तथा हिन्दी में 'प्रारंभिक शिक्षा पद्धति' भी कहते हैं।

इसकी उत्पत्ति का मुख्य कारण आधुनिक शिक्षा की त्रुटियाँ हैं। जिनका हमारे देश की समस्त जनता पर कुप्रभाव पड़ा है। आज हमारे देश के बच्चों को बहुत सी अनावश्यक बातों के लिये अपने जीवन के असूल्य समय का अधिकतर भाग नष्ट करना पड़ता है और जब किसी प्रकार उन क्लिष्ट विषयों पर माथा पच्ची करके सफलता भी प्राप्त कर लेते हैं तो उनको सांसारिक व्यवहार का ज्ञान नहीं के बराबर ही रहता है क्योंकि स्कूलों में गणित के बड़े लम्बे-चौड़े प्रश्न तो अवश्य हल कराये जाते है परन्तु व्यवहार के लिये उपयोगी प्रश्नों का अभाव ही रहता है। जीविका-उपार्जन के हेतु वहां कुछ भी नहीं पढ़ाया जाता।

द्वितीय बात जो अधिक खटकने वाली वर्त्तमान शिक्षा का त्रुटि है और बेसिक शिक्षा की उत्पति का प्रबलतम कारण कहा जा सकता है, वह जीवन शिक्षा का अभाव है। जीवन उपयोगी सच्ची शिक्षा से ही मनुष्य को वास्तविक ज्ञान होता है। उनको बहुत से अनावश्यक और कठिन विषयों का पढ़ना नहीं पड़ता। जो विषय बेसिक शिक्षा मे रखे गये हैं वह मनोरंजक और साधारण हैं। जिनको पढ़ने

के लिये विद्यार्थियों को स्वयं ही शौक होता है। और इन्हीं विशेषताओं के कारण बेसिक शिक्षा लोकप्रिय होती जा रही है।

बेसिक शिक्षा के द्वारा राष्ट्र को भी अनेक लाभ होंगे। विद्यार्थीगण बेसिक शिक्षा प्राप्त करके उत्तम शिल्पी होंगे। और अपनी बुद्धि और शिक्षा के द्वारा शिल्प कला को उन्नति देंगे और जिन छोटी २ वस्तुओं को आज हम दूसरे देशों से मंगाते हैं, वह चीजें हमारे ही देश में बनने लगेंगी। विद्यार्थी बेसिक शिक्षा को प्राप्त करके अच्छे किसान बन सकेंगे। जिससे देशकी कृषिकी उन्नति होगी उपज बढ़ेगी और सब से मुख्य प्रभाव जो भारत के राष्ट्र और समाज पर पड़ेगा वह यह होगा कि बेकारी का देश से नाश हो जायेगा।

प्रत्येक देश की प्रतिष्ठा उस देश की शिक्षित समुदाय पर निर्भर है और शिक्षित समुदाय की विचार-धारा उस देश की शिक्षा के अनुरूप होगी। इस कारण शिक्षा प्रत्येक देश की परिस्थितियों के अनुकूल होनी चाहिये। इन बातों का ध्यान रखते हुये बेसिक प्रणाली हमारे देश की परिस्थितियों के अनुकूल और उत्तम है। जिसकी स्कूलों में ही नहीं वरन् देश की उच्चतम शिक्षालयों तथा कालेजों मे अत्यधिक कमी है। और जो हमारे आत्माभिमान का नाश कर रही है। इसी के परिणाम स्वरूप हमारी शिक्षा हमारे लिये शिल्पी, कृषक, और अन्य कलाकार उत्पन्न करने के बदले दूसरों का मुंह ताकने वाले तथा परतंत्रता का जीवन व्यतीत करने वाले क्लर्क उत्पन्न कर रही है।

परन्तु बेसिक शिक्षा के अन्दर इन त्रुटियों का पूर्ण रूप से प्रतिकार कर दिया गया है। बेसिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य जनता के अन्दर स्वाभिमान की भावना को प्रज्वलित करके जनता को स्वाभिमानी बनाना, संसारिक समस्याओं को ध्यान मे रखकर उनके अनुरूप ही शिक्षा देना है। प्रत्येक बालक को जहां तक सम्भव हो जीवन के प्रत्येक दृष्टिकोण से शिक्षा देना और कठिन गणित के

लम्बे चौड़े निरर्थक प्रश्न तथा दूसरे अन्य अनावश्यक विषयों को कम या बिलकुल अलग करना। लुहार, बढ़ई, कुम्हार तथा अन्य शिल्प-कलाओं की शिक्षा देना, खेती और बागबानी के कार्यों का वैज्ञानिक ढंग से सिखाना आदि बेसिक शिक्षा के उद्देश्य हैं।

बेसिक शिक्षा के द्वारा देश की शिल्प कला उन्नत होगी, मनुष्य स्वतन्त्र रूप से अपनी जीविका उत्पन्न कर सकेंगे। देश के घरेलू उद्योग धन्धों में वृद्धि होगी, कृषि की उन्नति होगी और अन्न की पैदावार बढ़ जायेगी, जिस से अन्न के लिये दूसरे देशों से अन्न मंगाने का कष्ट दूर हो जायेगा। विद्यार्थी अल्प समय में ही जीवन के लिये उचित शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे।

बेसिक शिक्षा का उद्देश्य भारत की भावी सन्तान को स्वाभिमानी तथा आत्म निर्भर बनाना है। और उसको पढ़कर विद्यार्थियों को शिल्पकारी तथा खेती में प्रवीण करना है।

नारी के कर्त्तव्य

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आञ्चल में है दूध और आंखों में पानी।"

नारी का जीवन इसी प्रकार की विषमताओं से भरा हुआ है फिर भी अक्सर देखा गया है कि अबला नारी सबला होकर अपने कर्त्तव्य को पहिचान कर संसार के अपनी स्मृति अमर बना गई हैं, यह भी ठीक है कि नारी के कर्त्तव्य कठोर हैं परन्तु जिस देश की नारी अपने कर्त्तव्यों का शुद्ध ज्ञान रख सकेंगी और उनका पालन कर सकेंगी उस देश का पतन असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जायेगा। वह देश उन्नति के शिखर पर पहुंच जायेगा। किसी भी राष्ट्र का अच्छा या बुरा, शक्तिशाली अथवा बलहीन होना, उस देश की नारी जाति पर ही निर्भर करता है। क्योंकि मां ही सन्तान को संसार में उन्नतिशील बनाती है।

नारी जब किशोर अवस्था में बालिका के रूप में होती है तो उसका कर्त्तव्य होता है कि वह अपने भाई बहनों से प्रेम करे उनकी भोजन वस्त्र आदि की उचित देख भाल करे। उनको बुराइयों से बचाए और उनके सफाई और स्वास्थ्य का भी ध्यान रखे। अपनी माता के गृह कार्यों में योग देना, भोजन बनाने की कला सीखना, चौका लगाना, पढ़ना और अपने भाई बहनों को पढ़ाना भी उस के कर्त्तव्य हैं।

नारी जब युवा अवस्था को पहुँचती है तो मां बापों को उसके विवाह की आवश्यकता होती है और वे उसकी शादी भी किसी कुलीन घराने मे सुयोग्य वर के साथ कर देते हैं, तब नारी पत्नि रूप में होकर एक अपरिचित कुटुम्ब मे अपने लिए स्थान बनाती है और उसका कर्त्तव्य होता है कि वह अपने कार्यों के द्वारा सबको प्रसन्न रखे। अपनी सास और ससुर की जी जान से सेवा करे और अपनी जेठानियों और देवरानियोंके साथ प्रेम पूर्ण सम्बन्ध रखे। ससुराल में नारी के अनेक कर्त्तव्य हैं, जैसा कि महात्मन् कण्व जी ने शकुन्तला को विदा करते समय बतलाया है, जिस का सार संक्षिप्त में इस प्रकार है: बेटी तू सुसराल में जाकर पति की सेवा कीजियो। जो पति आज्ञा दे उस पर ध्यान दीजियो। पति को परमात्मा का दूसरा स्वरूप मानियो। उसके सोने के बाद सोइयो। उसको खिला कर खाइयो। पति यदि अनादर करे या क्रोध करे तो भी तुम उसका मान ही कीजियो। पति से कभी भी मान न कीजियो और अपनी दूसरी सौतों का बहन की भांति आदर कीजियो किसी से ईर्ष्या न करियो। नौकरों और अन्य सेवकों के साथ सदा दया का बर्ताव कीजियो।"

केवल ऐसा ही नहीं हमारी पूर्वज माताओं ने अपने कर्त्तव्यों का आदर्श भी हमारे लिये छोड़ दिया है, जैसे शैव्या ने अनेक कष्ट सहकर भी अपने पति के प्रण और उनकी आज्ञा का सफलता पूर्वक

निर्वाह किया। सीता माता ने अपने लिये अनेक कष्ट सहकर भी श्रीराम का साथ नहीं छोड़ा। सती सावित्री ने तो अपने पति के जीवन के रक्षार्थ यमराज को भी पराजित किया था। महाकवि तुलसीदास जी ने भी पति के लिये नारी के कर्त्तव्य का सुन्दर चित्रण किया है। उन्होंने लिखा है—

वृद्ध रोग वस जड़ धन हीना। अन्ध बधिर क्रोधी अति दीना ॥
ऐसेहु पतिकर किय अपमाना। नारी पाव यमपुर दुःखनाना ॥

इसका तात्पर्य है कि पति रोगी, बहरा, अन्धा, निर्धन और क्रोधी कैसा ही, क्यों न हो नारी का कर्त्तव्य है कि वह उसकी सेवा करके अपने जन्म को सफल बनावे। यदि नारी ऐसे पति का भी अपमान करेगी तो उसे नरक की भयानक यातनाएं सहन करनी पड़ेंगी।

नारी जब माता हो जाती है तो उसका कर्त्तव्य का क्षेत्र भी बढ़ जाता है। मां का कर्त्तव्य है कि अपनी सन्तानका उत्तम रीतिसे पालन पोषण करे। उन्हें सदा सत्य की ओर अग्रसर करे। उनकी शारीरिक उन्नति का भी ध्यान रखे। उनको वीर और सदाचारियों के जीवन चरित्र सुनाकर वैसी ही भावनाएं उन में भी उत्पन्न करे। सन्तान का अच्छा या बुरा होना, पूर्ण रूप से माता के ऊपर निर्भर रहता है। इतिहास प्रसिद्ध महाराज छत्रपति शिवाजी के लालन पालन का भार उनकी मां पर ही था। और माता की ही प्रेरणा ने उन्हें हिन्दू धर्म का रक्षक बनाया और वह वीर शिरोमणि अपने काल का हिन्दू नेता बन गया। पूज्य माता जीजा बाई के कर्त्तव्य परायणता ने डूबती हुई आर्य सन्तान को बचा लिया। किसी ने कहा भी है कि 'मात का पूत पिता का घोड़ा' क्योंकि सन्तान की उन्नति का मां की कर्त्तव्य परायणता से घनिष्ठ सम्बंध है।

यह तो रही नारी के घरेलू कर्त्तव्यों की बात, इनके अतिरिक्त नारी के अपने पड़ोसियों के प्रति भी कुछ कर्त्तव्य हैं। उसको

पड़ोस के बच्चों से प्रेम करना चाहिए। उनको उत्तम उपदेश देने चाहिये। पड़ोसियों के साथ मेलजोल से रहना चाहिये। निर्धन पड़ोसियों की प्रत्येक सम्भव सहायता करनी चाहिये। किसी की निन्दा न करनी चाहिये इत्यादि कर्त्तव्य एक आदर्श नारी के होते हैं।

अपने समाज की उन्नति के लिये नारी का कर्तव्य है कि घरेलू उद्योग-धन्धों का प्रचार करे और स्वयं भी छोटे-छोटे घरेलू कार्य करके अपने समाज और राष्ट्र की उन्नति में भाग ले। राष्ट्र के संकट में अपने प्राणों का मोह छोड़कर उस संकट को दूर करने के लिए किए गये कार्यों में उसे पूर्ण योग देना चाहिये।

भारतवर्ष की नारी जाति वर्त्तमान काल के अतिरिक्त सदैव ही कर्त्तव्य परायण रही है। उसने अपने कर्त्तव्य को ही सर्वश्रेष्ठ माना है। कर्त्तव्य की ही पुकार पर हमारे देश की नारियों ने प्रसन्नता से अपने आपको अग्नि-देव की भेंट कर दिया है। उन प्रातः स्मरणीय वीर बालाओं को जब तक सृष्टि का क्रम है, हमारा मस्तक श्रद्धा पूर्वक झुकता रहेगा।

आधुनिक शिक्षा-प्रणाली के गुण व दोष

यदि कोई सज्जन आधुनिक शिक्षा प्रणाली के प्रभाव का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो वह प्रातः या सायं को किसी विद्यालय में जाकर हमारे कालेज के विद्यार्थियों से सम्पर्क स्थापित करे और वहां उनके विचारों का तथा कार्यों को ध्यान से अध्ययन करे तो उसको यह जान कर परम दुःख होगा कि जिन नवयुवकों पर हमारे देश के भविष्य की आशायें हैं उनका चरित्र कितना पतित और विचार धारा कितनी अधिक दूषित है। उन्हें जिस विनम्रता तथा गुण शीलता के उद्देश्य को ध्यान में रखकर उनके स्वजनों ने धन खर्च करके

विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में प्रविष्ट किये हैं उनसे वे लोग विपरीत दशा में अग्रसर हो रहे हैं।

यदि कोई वृद्ध मनुष्य हमारे कालेज के विद्यार्थियों के पास जहां वे दो चार इकट्ठे खडे हों किसी कार्य वश अथवा यों ही घूमता फिरता पहुँच जाये तो वे उस बेचारे की हंसी किये बगैर न रहेंगे। बूढ़े और वृद्धों की ही नहीं ये लोग अपने गुरुजनों तक की दिल्लगी उड़ाया करते हैं। आजकल जो विद्यार्थी अधिक बोलने वाला और निर्लज्जता धारण करने वाला होगा। उसी का हमारे विद्यार्थियों की परिषद में अधिक मान होगा, इस कारण अधिकतर हमारे विद्यार्थी गण शिक्षा के उद्देश्यों की अपेक्षा करके अपना, अपने स्वजनों का देश तथा समाज का भी अनिष्ट करते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ ही क्यों अधिकतर विद्यार्थी गण पढ़ाई से अधिक अपने बनाव सिंगार को महत्ता अधिक समझते हैं, उनका ख्याल है कि गुण से नहीं मनुष्य का प्रथम आकर्ष उसकी वेष भूषा है। यदि कोई सब विषयों में पंडित विद्यार्थी वेष भूषा में कम समय तथा ध्यान देता है तो हमारे कालेजों मे उसे गधा या अन्य इसी प्रकार की उपाधि दी जायेगी। विद्यार्थी एक दूसरे से उत्तम वेष भूषा की धुन में अपने मां-बाप का कष्टों से कमाया धन व्यर्थ ही खर्च कर डालते हैं। उनका जीवन भी सीमा से अधिक विलास प्रिय हो जाता है। वह अपनी वास्तविक दशा को भूल कर बनाव सिंगार के झूठे माया जाल में फंस जाते हैं।

सब से विशेष दुःखने वाली बात जो कि आज हमारे विद्यार्थी गणों में तथा देश के अधिकतर शिक्षित नवयुवकों में दृष्टि गोचर होती है, वह है उनका स्वास्थ्य तथा स्वाभिमान से रहित होना। दोनों गुणों का आज हमारे देश में स्पष्टतया लोप हो गया है आज हमारे अधिकतर विद्यार्थियों की दशा बरसात के मेंढक की भांति हो गई है जिसका कि रंग पीला तथा हाथ पैर पतले और शक्तिहीन होते हैं न तो उनके

शरीर में पहले प्राचीनकाल के विद्यार्थियों की भांति न शक्ति है, न वह कांति ही है और न वह शुद्ध विचार धारा ही है। आज हमारे देश के विद्यार्थी पूर्वी तथा पश्चिमी सभ्यता के बीच मे बुरी तरह उलझे हुए हैं न तो वह पूर्ण रूप से पाश्चात्य सभ्यता का ही अनुकरण कर सकते हैं और न पूर्व के प्राचीन आदर्शों को ही अपना सकते हैं। उनकी दशा ठीक-धोबी का कुत्ता घर न घाट का-जैसी हो रही है। इसी कारण हमारे नवयुवक अपने स्वास्थ्य की भेंट दे कर डिग्री प्राप्त करने वाले भर रह गए हैं।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य मनुष्य का सर्व प्रकार से विकास प्राप्त करना है। प्राचीन समय में शिक्षाकी प्रणाली ही ऐसी थी जो कि साधारण होते हुए भी सर्वाङ्गीण थी यद्यपि उस समय मनुष्य के ज्ञान का बढ़ाने वाले आज-कल जैसे सुगम साधन विद्यमान न थे तथापि उस समय की शिक्षा आज से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ी हुई थी। आज के युग में सिद्धांत ही शिक्षा में प्रधान है परन्तु उन दिनों वास्तविकता को ही प्रधानता दी जाती थी। उन दिनों शिक्षा के मूल उद्देश्य पर, जिस से कि कोई शिक्षित मानव शिक्षित कहलाने का अधिकारी है, पूर्ण ध्यान दिया जाता था। इसी कारण उन दिनों का शिक्षित समाज आदर-योग्य था और सुखी। था उन दिनों विद्वानों का बहुत ही ऊंचा पद था। उनका सर्वत्र आदर होता था। परन्तु आज तो बात ही विपरीत है इसके भी कई सिद्धांतिक अथवा राजनैतिक नियमों का ढीलापन ही कारण है। आज की तथा प्राचीन काल की शिक्षा का मूल सिद्धांत ही विकृत है। आज हमें ऐसे वातावरण में शिक्षा लेनी पड़ती है जहां पर स्वार्थ, अहंकार, कुटिलता, छल, कपट, ईर्ष्या तथा अन्य दुर्गुण अपना डेरा जमाये रहते है। वहां का वातावरण शांत तथा गम्भीरता के स्थान पर अशान्त तथा कोलाहल पूर्ण होता है।

आज के युग में शिक्षा में दोष होने के कारण युवकों की प्रतिभा जो कि मानव जीवन का अमूल्य हीरा है मूर्खतावश खो दिया जाता है। यहां तक अधिकतर शिक्षित युवकों को तो अपने आत्माभिमानका भी गला स्वयं ही घोटना पड़ता है क्योंकि आजकल प्रथम तो विद्यार्थी भी शिक्षा लेने का ध्येय ही नौकरी करना या कोई बड़ी डिग्री प्राप्त करना समझते हैं। दूसरे आज की हमारी शिक्षा प्रारम्भ से ही ऐसे संसारिक कार्यमें फंसी हुई होती है कि हमारे बहुतसे भाई परिस्थितियों के वश हो कर उससे वंचित हो जाते हैं और या हमें किसी उपरोक्त दोष की शरण लेने के लिये बाध्य होना पड़ता है। हमारे स्वाभिमान का उदंडता तथा विनयशीलता का मुर्खता अर्थ लिया जाता है। शिक्षक तथा शिक्षार्थी में मित्र जैसे सम्बन्ध रहते हैं और धन को विद्या की अपेक्षा महत्ता दी जाती है। विद्यार्थियों में बहुधा कुत्सित भावनायें प्रविष्ट होती रहती हैं। चूंकि विद्यार्थी शिक्षा गुरू जी से धन के बदले प्राप्त करता है, इसकारण भी उसके मन में विद्या तथा गुरू के प्रति सच्ची निष्ठा नहीं पैदा होती और दूसरे आजकल की शिक्षा प्रणाली में चटक मटक की मात्रा अधिक है इस कारण धीरे धीरे प्रतिभा का ह्रास हो कर चटक मटक अहङ्कार और चाटुकारिता में वृद्धि हुई है।

यद्यपि हमारे देश मे अंग्रेजी काल से पहिले भी शिक्षा की दशा कुछ अच्छी नहीं थी तो भी उसका एकाङ्गी अथवा एक रूप होने से विद्यार्थियों को असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता था परन्तु हमारी शिक्षा इस प्रकार है, जैसे कोई पुरुष जूतों और धोती के ऊपर टोप और कोट पहन ले। आज न तो हम पूर्ण रूप से एकाग्र हो कर अपनी ही शिक्षा का पूर्ण अध्ययन कर सकते हैं और न ही विदेशी भाषा में पाण्डित्य प्राप्त कर सकते हैं। आज हम पूर्वी और पश्चिमी शिक्षा प्रणाली के बीच में लटके हुए हैं।

प्राचीन समय में शिक्षा प्राप्ति का मुख्य ध्येय ज्ञान की वृद्धि

करना था। परन्तु आज हमारा प्राचीन ध्येय बदल कर जीवन का उपार्जन करना बन गया है। आज हमारे शिक्षित समाज की विचारधारा ही इस प्रकार की बनी हुई है कि जिस नौकरी वृत्ति को हमारे प्राचीन ऋषियों ने अधम कहा था, आज वह सबसे उत्तम समझा जा रहा है आधुनिक शिक्षित युवक साठ रुपये माहवार का बाबू बनना अधिक पसन्द करेगा और सौ रुपये की ड्राइवरी या कोई और व्यापार करना हेय समझेगा। बाबू पने की होड़ के आज भारत के अधिकतर शिक्षित व्यक्ति शिकार हो चुके हैं। आज का पढ़ालिखा युवक जीवका के स्टैंडर्ड को ऊंचा करना ही सभ्यता का प्रबल गुण समझता है और इसी विलास तथा ईर्ष्या ने हमारे समाज को दीन बना दिया है। आज मुद्रा-स्फीति के युग में तो हमारे बाबू वर्ग का बुरा हाल है।

यद्यपि हमारे देश की जन संख्या के अनुपात से हमारे शिक्षित वर्ग की संख्या पांच फी सदी ही है तथापि यदि कहीं पर एक स्थान रिक्त हो तो एक सौ प्रार्थी उपस्थित हो जाते हैं, इतनी अधिक बेकारी हमारे शिक्षित वर्ग में फैली हुई हैं जबकि उनकी अनुपातिक संख्या पांच प्रतिशत है यदि यह कुछ और बढ़ गई तो हमारे शिक्षित समाज से क्रान्ति ही हो जायेगी। इसके लिये हमें अमरीका वालों की नकल करनी चाहिये जो कि धनी तथा शिक्षित होते हुए अपने खेत में स्वयं कार्य करना अधिक पसन्द करते हैं और हर कार्य को करने में दिल लगाते हैं परन्तु हमारे देश में एक अपढ़ और मूर्ख नौकर से कम वेतन मे अध्यापक और पटवारी मिल जाते है। इस बाबूपन की होड़ से देश तथा समाज दोनों को हानि होती है।

इन सब बातों के लिये हमारी शिक्षा का एकाङ्गी होना ही उत्तरदायी है। आज हमारी शिक्षा का रूप इतना गर्हित बना दिया है। क्या कहना प्रथम तो हमें जीवन के सर्व अंगों की शिक्षा ही नही दी जाती। दूसरे बहुत से क्लिष्ट अथवा निरर्थक विषय सम्मिलित कर लिये जाते हैं। इस कारण आज यदि किसी को शहर में शिक्षा दी जाती हैं

तो उसे देहात का ज्ञान नाम मात्र भी नहीं होता बहुधा शहरों के रहने वाले बच्चों को इस बात का भी ज्ञान नहीं होता कि जिस गेहूं की रोटियों को खाते हैं, उस की उत्पत्ति किस प्रकार होती है। इसी प्रकार यदि कोई देहात का शिक्षित पुरुष शहर में आजाये तोवह भी वहांकी परिस्थितियों से इतना अज्ञानी होता है कि वहां के रहन सहन आने जाने तथा भेष-भूषा को देखकर असमंजस मे पड़ जाता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिये उपयोगी शिक्षा की आज हमारे देश में उपेक्षा है और इसी कारण हमारे देश के अनेक युवक आज दुःखों से भरा जीवन व्यतीत कर रहे है।

प्राचीन समय में हमारे देश में शिक्षा के अन्दर नम्रता, श्रद्धा वी भक्ति का महत्वपूर्ण स्थान था। उन दिनों की शिक्षा की प्राप्ति का किसी कवि ने वर्णन किया है कि—प्रथम तो पठिनम कठिनम पुनर परदेश निवेशनम, वदति दीनमथा वचनम अहो विधना पठिनम कठिनम। इस पद्य से हमें प्राचीन काल में शिक्षा प्राप्ति का अच्छा ज्ञान हो जाता है। उन दिनों विद्यार्थियों को अपने कुटुम्बियों से दूर जाकर शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती थी। उन दिनों शिक्षा के योग्य पात्र ही उसके अधिकारी थे उन दिनों की शिक्षा के मुख्य विषय संसार के उपयोगी तथा व्यवहारिक विषय परन्तु आधुनिक शिक्षा संसार के व्यवहारिक विषय की अपेक्षा सिद्धान्तिक है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में यद्यपि बहुत अधिक दोषों का समिश्रण है तथापि इसका यह अर्थ भी नहीं है कि उससे हमको कोई लाभ ही नहीं हुआ हो अपितु आधुनिक शिक्षा ही के कारण आज हमने अपने विज्ञान में प्रगति की है हमने अपने ज्ञान के क्षेत्र को विश्वस्त बनाया है, आज मोटर, रेल, समुद्री पोत तथा वायुयान जैसे प्रगतिशील और मानव उपयोगी वस्तुओं को बनाने वाली तथा उनका वास्तविक ज्ञान प्रदान करने वाली हमारी आधुनिक शिक्षा ही है।

विज्ञान तो आधुनिक शिक्षा का अग्रगामी भाग है, जिससे आज हमने अपने संसारिक जीवन में कठिन कार्यों को सरल बना लिया है। इसके द्वारा आज हमने स्वास्थ्य सम्बन्धी तथा विलास और मानव जीवन की अन्य उपयोगी वस्तुओं का आविष्कार किया है।

इसके अतिरिक्त आधुनिक शिक्षा के प्रभाव ने हमारे समाज से रूढिवादिता का परित्याग करके नवीनता को ग्रहण किया है हमारे समाज के बहुत से कलुषित तथा दोषमय नियमों का नाश किया है तथा समाज में सामयिक सुधारों को प्रोत्साहन दिया है यही नहीं आधुनिक शिक्षा ने हमारी राजनैतिक विचार धारा को भी दिया है और जातीय तथा पृथक करण की भावनाओं को दूर करके एक राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन दिया है। आधुनिक शिक्षा से समाज तथा राजनीति में परिवर्तन के साथ ही धार्मिक मनोवृत्ति में परिवर्तन होना आवश्यक था। इस कारण हमारे धर्म में परम्परागत दोषों को दूर करने में तथा नवीन आदर्श स्थापित करने में हमारी आधुनिक शिक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण भाग है।

परन्तु यदि हम आधुनिक शिक्षा प्रणाली की प्राचीन शिक्षा प्रणाली से तुलना करें तो दोनों में आकाश पाताल का अन्तर है। उस समय जहां हमारी शिक्षा स्वच्छ-वायु मंडल में और शांत वातावरण में दी जाति थी वहां आज हमारी शिक्षा के स्थान अधिकतर कोहलाहल पूर्ण शहरों तथा कसबों के घने बसे तथा गन्दे बसे हुए क्षेत्र हैं। प्राचीन शिक्षा में त्याग व गुणों की अधिक आवश्यकता थी परन्तु आज पैसे की अधिक जरूरत है। उन दिनों गुरु की आज्ञा ही ब्रह्म वाक्य थी तथा योग्यता कितने ही वर्षों के कठिन व त्यागमय जीवन का फल था और योग्यता का अनुमान एक दिन में नहीं अपितु वर्षों की परीक्षाओं द्वारा किया जाता था। इस कारण उन दिनों में समाज को उपयोगी पुरुष ही प्राप्त होते थे परन्तु आज की अवस्था ही भिन्न है न वह गुरुजनों की श्रद्धा है, न वह शिष्यों की परीक्षा है, यहां तक कि आज का शिक्षा क्षेत्र ही दोषों से परिपूर्ण हैं।

हिन्दू कोड बिल

हिन्दू कोड बिल, हिन्दू जाति के सामाजिक जीवन में सुधार की भावना से, भारतीय धारा सभा मे लाया गया बिल है। भारतीय धारा सभा में इस बिल पर जितनी खींचातानी हुई है, उतनी खींचातानी किसी अन्य बिल को लेकर अबतक नहीं हुई। हिन्दू कोड बिल विरोध और समर्थन दोनों के भार से दबा हुआ बिल है। प्रगति शील हृदय रखने वाले पुरुष समुदाय और शिक्षित नारी वर्ग का समर्थन इसे प्राप्त है, शेष साधारण जनता इसे हिन्दू धर्म और संस्कृति के लिए घातक बताती हैं।

यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो बिल की कुछ धारायें ऐसी हैं, जो हमारे समाज के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होंगी। नारी जाति को पुरुष के मुकाबले में समानाधिकार दिलाने वाला यह प्रथम बिल है। निश्चय ही अबतक नारी जाति के प्रति पुरुष वर्ग का जो व्यवहार रहा है, वह सर्वथा अमानवीय व्यवहार कहा जायगा—समाज चक्र को चलाने के लिए नारी-पुरुष दोनों का सम्मान बराबरी का होना आवश्यक हैं। आर्थिक क्षेत्र में नारी की अब तक कोई पर्वाह नहीं की गई है, यह कम परिताप की बात नहीं है। हिन्दू कोड बिल इन त्रुटियों को दूर करने वाला बिल है।

किन्तु प्रगति शीलता के आवेश मे बिल निर्माण कर्त्ताओं ने कुछ ऐसी धारायें जो इसमें जोड़ दी हैं, जो और देशों के लिए भले ही उपयुक्त हों, भारत के लिए उसकी संस्कृति और प्राचीन गौरव को नाश करने वाली कही जायगी। भारतीय नारी का सतीत्व और पातिव्रत धर्म, जिन पर संपूर्ण संसार को शिर झुकाना पड़ता है, इस बिल की चपेट में आ जाते हैं। तलाक की प्रथा को कानून का बल देना क्या है भारतीय नारी-गौरव को नीचा दिखाना है। जिस दिन सीता, सावित्री, शैव्या आदि जगन्माता कहलाने वाली नारी

रत्नों का मान घट जायगा, भारतीय इतिहास में कुछ रह नहीं जायगा। चित्तौड़ के राजमहलों की जौहर-ज्वाला की गरिमा घटाकर पद्मिनी जैसी वंद्या नारी को भुलाकर हमारा उत्थान किसी अवस्था में उत्थान नहीं रह सकता। ऐसी ही एक धारा सगोत्रीय विवाह को प्रोत्साहन देने वाली है। इसे यदि कार्य रूप में लाया गया तो भारतीय इतिहास से जहां भाई-वहिन के पवित्र सम्वन्ध का अन्त हो जायगा, वहां भावी संतान में विकृति आने की भी संभावना रहेगी। शरीर विज्ञान के आचार्यों का कहना है कि विवाह कार्य की सफलता यदि संतानों की उन्नति पर निर्भर है तो रक्तों में विभिन्नता लाकर ही योग्य संतान की आशा की जा सकती है। समन्रपत्, एक वंश में विवाह से उत्पन्न संतान रोग ग्रसित होगी।

बिल में आप अन्तर्जातीय विवाह सम्वन्ध को विशेषता देकर लोग चाहते हैं पारस्परिक प्रेम उत्पन्न करना किन्तु इसकी पूर्ति भी असम्भव रहेगी। हिन्दू जाति में यह धारणा नहीं ज्ञात कब से चली आ रही है कि लड़की के पिता से लड़के के पिता का आसन उच्च होता है, उसकी जाति भी ऊंची मानी जाती है, फिर भला अन्तर्जातीय विवाह से समानता कैसे आ जायगी। हिन्दू जाति के विभिन्न श्रेणियों को परस्पर समान करने में विवाह सम्वन्ध से उतनी सफलता नहीं मिलेगी, जितनी सफलता ऊंच-नीच के विचार हटाने के प्रचारों से सम्भव है।

पिता की अचल सम्पत्ति में पुत्री का हिस्सा निश्चित कर, लाभ के वदले हानि ही उठानी पड़ेगी। सम्मिलित परिवार छिन्न-भिन्न होकर कहीं का नहीं रह जायगा। देश की आर्थिक अवस्था और भी निम्न कोटि में जा पहुँचेगी। भाई-भाई की बांट से ही जब देश तवाह है तब वहिन का हिस्सा अलग कर और भी तवाही उठानी पड़ेगी। यह किसी भी जानकार से अप्रकट नहीं है कि विवाह के अवसर पर पुत्री को जो धन दिया जाता है, वह भाई के हिस्से भी अधिक

ही होता है कम नहीं। अचल सम्पत्ति में हिस्सा दिलाकर केवल कलह का बीज भर बोना होगा। फिर तो लोग पुत्रियों को भार स्वरूप समझने लगेंगे। सारा प्रेम स्नेह जो अंतिम समय तक पितृकुल में पुत्रियों के लिए संचित रहता है, सर्वथा नष्ट हो जायगा।

निश्चय ही इन्हीं कारणों से देश रत्न राजेन्द्रप्रसाद जैसे महान हृदयों ने भी हिन्दू कोड बिल को लाभदायक बताने के बदले उसका विरोध किया है। देशरत्न ने तो यह भी कहा कि वर्तमान धारा सभा को इस बिल को कानून का रूप देने का कोई अधिकार नहीं है। कारण वर्तमान धारा सभा के सदस्य सर्व साधारण जनता के चुने प्रतिनिधि नहीं हैं।

जो भी हो, यदि हिन्दू कोड बिल में से कुछ ऐसी धाराओं को जो हिन्दू संस्कृति और भारतीय गौरव को नष्ट करने वाली हैं, निकाल दी जाय तो यह बिल वास्तव में देश के लिए महान उपकारी सिद्ध हो। भले बिल के निर्माता अपनी प्रगति शीलता के प्रवाह में यह भूल गए कि बिल भारतीय जनता के लिए है। इङ्गलैंड या अमेरिका की जनता के लिए नहीं किन्तु लाख-लाख जन हृदय तो बिल को अपनी दृष्टि से ही देखेगा। सुधार आवश्यक है किन्तु जिस सुधार से सुधारपात्र का अस्तित्व मिट जाय, उस सुधार को कौन चाहेगा।

❀

कांग्रेस

भारतीय स्वतंत्रता के साथ कांग्रेस का नाम सदा के लिए अमर हो चुका है। दो हजार वर्षों की पुरानी गुलामी को दूर करने का श्रेय आज कांग्रेस को ही प्राप्त है। सर्व प्रथम १८५७ में सिपाही विद्रोह के रूप में भारत ने गुलामी के विरुद्ध अपना शिर उभारा, किन्तु उस स्वातंत्र्य संग्राम में, नाना साहब, बिहार केशरी ठाकुर

कुंवर सिंह तथा वीरांगना लक्ष्मी बाई का अभूत पूर्व बलिदान चढ़ाकर भी देश स्वतंत्र नहीं हो सका। शस्त्रों के उस संग्राम में विजय अंग्रेजों की ही रही। कुछ दिनों के लिए भारत के सारे हौसले परास्त होगए किन्तु स्वतंत्रता की जो प्यास हृदय मे एक बार जग पड़ती है वह मिटती नहीं है।

कांग्रेस की ओर से लड़ा जाने वाला स्वातंत्र्य संग्राम आदि से अंत तक अहिंसक रूप से लड़ा जाने वाला संग्राम रहा। यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो कांग्रेस की स्थापना लड़ाकू संस्था के रूप में नहीं हुई थी, इसकी स्थापना मि० ह्यूम के हाथों सरकार से दुःख दर्द के लिए निवेदन करने वाली संस्था के रूप में हुई थी। १८८५ ई० में इसकी स्थापना करते हुए इसके संस्थापकों ने यह नहीं सोचा था कि यही संस्था ब्रिटिश सरकार की जड़ खोदने वाली सिद्ध होगी। इसका प्रथम अधिवेशन बम्बई में हुआ था। सर फिरोज शाह मेहता, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी तथा दादा भाई नौरोजी आदि उस समय के कांग्रेसी नेता कहे जायंगे।

१९०५ इ० तक कांगरेस एक तरह से निर्जीव संस्था रही। १९०६ में कांगरेस के मंच से प्रथम बार स्वराज शब्द को लोगों ने आगे रखा। बंग विच्छेद से जो आग जनता के हृदयों में सुलगी थी, उसकी गर्मी कलकत्ता अधिवेशन में महसूस हुई। १९०७ के सूरत अधिवेशन में तो-कांगरेस नेताओं के दो दल हो गए। गरम और नरम दल की नींव पड़ गई। लोक मान्य तिलक अपनी उग्रनीति को लेकर गरम दल वालों का नेतृत्व करने आगे आए। कहना नहीं होगा, उस समय लोक मान्य की नीति क्रांति कारिणी नीति मानी जाती थी।

जिस समय कांगरेस में धीरे-धीरे दृढ़ता और लड़ाकू प्रवृत्ति आ रही थी। उस समय देश के कितने ही मस्त जवान् अपनी जवानी की भेंट चढ़ाकर—सशस्त्र षड्यंत्र के सहारे ब्रिटिश शासन को समाप्त कर देना चाहते थे। बंगाल और महाराष्ट्र में कितने ही षड्यंत्र कारी

फांसी के तख्ते पर चढ़े, कितने ही काला पानी जाने को बाध्य हुए। विदेशी सरकार कठोर नीति अपना कर न तो देश मे शांति स्थापित कर सकती थी और न शांति स्थापित कर सकी।

१६१४ में प्रथम युरोपीय महायुद्ध छिड़ा, कांग्रेस ने बिना किसी शर्त के उस महायुद्ध में ब्रिटेन को सहायता देने का प्रचार किया। कांग्रेस को विश्वास था कि इस के प्रत्युपकार में ब्रिटेन भारत को स्वतंत्र कर देगा किन्तु फल उल्टा निकला। उस सहायता के बदले 'रौलट एक्ट' नाम का काला कानून देश पर लाद दिया गया। जनता की बची-खुची स्वतंत्रता का भी दिवाला निकाल दिया गया। जगह-जगह जनता विक्षुब्ध हो उठी। तरह-तरह के प्रदर्शन प्रारंभ हो गये युद्ध में सबसे अधिक सहायता पहुँचाने वाले पंजाबी भी व्याकुल चित्त हो उठे। जलियां वाला बाग में ऐसी एक विरोधी जन सभा पर ओडा-यर ने गोलियों की वरसा करवाई। शांत और निःशस्त्र ग्रामीण हजारों की संख्या में भून डाले गए। बात यहीं तक नहीं रही क्रूर ओडायर के हाथों वहां छोटे छोटे नन्हें बच्चे संगीनों की नोक पर उछाले गए कुल ललनाओं की इज्जत से खेलवाड़ किया गया। गोरे सार्जेंट और पुलिस वाले माता और बहिनों की अस्मत से ही नहीं, उनके स्नेह और सुहाग से खेल खेलने लगे। जलियां वाला बाग का हत्या कांड ब्रिटेन के शिर पर पशुत्व वृत्ति का कलुष कलंक है।

इन्हीं दिनों में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रिका से लौटे थे—जहाँ उन्होंने सत्याग्रह और अहिंसा की शक्ति का भली भांति परीक्षण कर लिया था। उन्होंने यहां आकर उसकी परीक्षा फिर से प्रारंभ की संपूर्ण देश मे विदेशी माल का बहिष्कार, अदालत का बहिष्कार मादक वस्तुओं, गांजा शराब आदि का बहिष्कार, आगे बढ़ कर स्कूल और कालिजों का बहिष्कार, अपनाया गया। १६२० में असहयोग की ध्वनि देश के कौने कौने में गूंज उठी। मुसलमानों ने भी खिलाफत आन्दोलन के रूप मे कांगरेस का साथ दिया। यह बात दूसरी है कि

खिलाफत आन्दोलन टर्की के खलीफा की सहानुभूति में चलाया गया था। जो हो, हिन्दू और मुसलमानों के उस वर्ग आन्दोलन की चलती हुई गाड़ी को चौरी चौरा के हत्याकाण्ड से दुःखी होकर महात्मा गांधी ने बीच मे ही रोक दिया।

भारत वासियों की असन्तुष्टि और मांगों की जांच के लिए आये हुये साइमन कमीशन को भी जनता ने संदेह की दृष्टि से देखा, उस का सभी जगह वायकाट हुआ। पंजाब में ऐसे ही वायकाट के जुलूस में लाला लाजपत राय घायल हुए। प्रथम गोलमेज परिषद के आमंत्रण को देशने ठुकरा दिया।

१६३१ ई० में फिर से सत्याग्रह का बिगुल बजा। नमक कानून तोडने के लिये महात्मा गांधी ने 'दांडी यात्रा' की। सारे देशमे जागृति की लहर उमड़ पड़ी। जेल में इतनी संख्या मे लोग पहुँच गये कि नौकर शाही सरकार वेचैन हो उठी। गांधी इर्विन सममौता के सहारे सभी नेता और जेल यात्री छोड़ दिये गये। फिर दूसरी और तीसरी गोल मेज परिषद की आयोजना हुई, कांगरेस ने उसमे भाग भी लिया किन्तु कोई सफलता नहीं मिली।

१६३४ इ० मे नया वैधानिक सुधार सामने आया। प्रांतीय चुनाव में कांगरेस ने भाग लिया और अधिकांश प्रांतों में कांगरेस शासन हो गया। १६३६ मे द्वितीय महासमर का सूत्रपात हुआ। ब्रिटेन ने विना इच्छा के ही उसमें भारत को भी घसीटा। कांग्रेस मंत्रियों को को प्रांतों के शासन से अपना त्याग पत्र देदेना पड़ा। व्यक्तिगत सत्याग्रह के रूप में, देश को लड़ाई मे किसी प्रकार की सहायता न देने का प्रचार किया जाने लगा। भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी ने जो अब तक क्रांति कारी पार्टी थी, ब्रिटेन की सहायता के लिये अपनी नीति स्थिर की। देश पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ा, उल्टे उसकी ओर से जनता घृणा अपनाने को वाध्य हुई।

१६४२ इ० में सर स्टेफर्ड क्रिप्स भारत पधारे। उन्होंने नये सिरे से समझौते का प्रयत्न किया किन्तु समझौता नहीं हो सका। समझौता असफल होने के वाद वम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। उस अधिवेशन में महात्मा गांधी का भारत छोड़ो प्रस्ताव स्वीकार किया गया। नौकरी शाही भला इसे कव सहन करती, सभी नेता जेलों में वन्द कर दिए गए। शायद ही कोई वम्बई से लौटकर अपने प्रांत और अपने घर पहुंचने में समर्थ हुये।

१६४२ की क्रांति भारतीय स्वातंत्रय संग्राम में अपना सब से आकर्षक रूप रखता है। उस विद्रोह का रूप वड़ा ही भयानक और वलिदानी रहा। विहार और आधे से अधिक यू० पी० के हिस्से में तो कुछ दिनों के लिये विदेशी शासन का अन्त ही हो गया। याता-यात तथा समाचार प्राप्ति के सभी साधन संपूर्णतया नष्ट कर दिया गया। वम्बई और मद्रास की ओर भी विद्रोह भयंकर रहा। कितनी ही जगहों में समानांतर सरकारें तक कायम करली गई थी। इस विद्रोह का नायकत्व करने वाले, अधिकांश में समाज वादी नेता ही रहे।। देश गौरव जयप्रकाश का हजारी बाग के जेल से पलायन अपना ऐतिहासिक महत्व रखता है।

जिस समय भारत मे विद्रोह फैल रहा था, उस समय भारतीय स्वातन्त्र्य गगन के सूर्य, नेता जी सुभाष वर्मा में अंगरेजों से सशस्त्र लड़ाई लड़ रहे थे उन्होंने वहां जो कुछ भी किया, वह उनके ही योग्य था। किसी अन्य से उनका मुकावला नहीं किया जा सकता। नेताजी के द्वारा स्थापित वहां के स्वतन्त्र भारत की राष्ट्रीय सरकार को कितने ही देशों ने मान्यता दी थी। उनका 'दिल्ली चलो' का नारा काश, समय पर और उस विद्रोह काल में भारत सुन पाता।

इसके वाद का विवरण, ब्रिटेन की विवशता के अनुभव और भारतीय स्वतन्त्रता का विवरण है। १६४७ में भारत स्वतन्त्र हो

गया किन्तु ब्रिटेन की कूटनीति से उसके दो खंड हो गए। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का बटवारा क्या हुआ, देश का सौभाग्य खंडित हो गया। बगाल और पंजाब का निर्मम हत्याकांड, उसी का परिणाम बनकर सामने आया। हिन्दुस्तान का शासन कांग्रेस के हाथों में सौंप दिया गया और पाकिस्तान का हिस्सा मुसलिम लीग को मिला।

आज कांग्रेस संस्था के रूप से कुछ ऊपर उठकर शासक सत्ता के रूप में है। दो रूपों में इसका कौन रूप अधिक मोहक कहा जा सकता है, कह कहना कुछ कठिन है। यदि कांग्रेस अपनी पूर्व नीति पर चलती हुई जन-रुचि को अपने साथ साथ लेकर बढ़ती गई तो शासक के रूप में भी वह अपना आसन सर्वोपरि रखेगी किन्तु दुःख की बात है कि वह कुछ तो सामायिक-उलझनों में उलझकर और कुछ पूंजी और सत्ता के प्रभाव से निष्प्रभ सी होती जा रही है। पं० नेहरू और पटेल जैसे महापुरुष यदि नेता के रूप में ही कुछ दिनों तक भारत को सुलभ रहते तो देश का और भी कल्याण होता। शासन-सत्ता के कलुषित पंक से दूर रहने वाले महात्मा गांधी का असमय तिरोधान और भी स्थिति बिगाड़ने वाला रहा है आज देश में कोई ऐसा नेतृ नहीं रह गया जो शासन सत्ता को मार्ग-प्रदर्शन दे सके। सम्पूर्ण नेतृ का वर्ग का शासन सत्ता अपना लेना और सार्वजनिक क्षेत्र से दूर हट जाना कांग्रेस की शक्ति को क्षीण करने वाला कार्य कहा जायगा, कारण शासन किसी भी शक्ति का शासन हो, जनता का श्रद्धा भाजन बनना, उसके लिए कठिन रहता है।

भविष्य की बात अभी से कौन कह सकता है कि भारतीय राजनीति गगन पर किस संस्था का रंग बिखरेगा, कांग्रेस, समाजवादी दल तथा और भी दूसरी पार्टियां आगे बढ़ने के प्रयत्न में हैं समय ही सफलता का निर्णय करेगा।

×

आवश्यकता आविष्कार की जननी है

मानव-सभ्यता सदा ही विकास शील रही है। मानव अपने में अपूर्ण है, वह सदा ही पूर्ण बनने की चेष्टा किया करता है और वह कभी भी पूर्ण नहीं बन पाया। ज्यों-ज्यों मानव सभ्यता का विकाश होता जाता है, त्यों-त्यों जीवन अधिक संघर्षमय होता जाता है और मानव की आवश्यकता बढ़ती जाती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए मनुष्य सर्वदा ही प्रयत्नशील रहता है तथा इन्हीं प्रयत्नों के कारण अनेक प्रकार के आविष्कार होते जाते हैं।

इस विज्ञान के युग में हम देखते हैं कि मानव सभ्यता को विकास की चोटी पर पहुँचाने में प्रयत्न शील है। उसकी आवश्य-कतायें अत्याधिक बढ़ गई है। इन्ही आवश्यकताओं की पूर्ति में आज का वैज्ञानिक मानव, भिन्न-भिन्न तरह के आविष्कार कर रहा है। गाड़ी, वायुयान, टेलीफोन टेली-विजन आदि इसी वैज्ञानिक मानव की देन है।

किसी समय मनुष्य यात्रायें पैदल या घोड़ा-गाड़ी (बैलगाड़ी) आदि में किया करता था। परन्तु मनुष्य को आवश्यकता थी एक ऐसे शीघ्र गामी गाड़ी को, जिसके द्वारा कि अपने प्रतिद्वन्दियों से होड़ लगा सके व सभ्यता के विकास को कुछ अधिक विकसित कर सके। इसी से मोटर का आविष्कार हुआ, फिर रेल का हुआ, तद-पुरान्त वायुयान का हुआ। इस संघर्षमय जीवन में इस प्रकार समय बचाकर वह दूसरे कार्य में लग गया।

इन आविष्कारों में सब से प्रमुख कारण समय की बचत व आनन्द की प्राप्ति है, टेलीफोन का यदि आविष्कार न होता तो राज्य को अथवा काम करने अफसरों को, डाक्टरों व्यापारियों को कितना समय नष्ट करना पड़ता। इसलिये आवश्यकता थी कि समय की बचत के लिए कोई ऐसा अविष्कार हो जिससे समय की बचत हो

सके और इस प्रकार टेलीफोन का आविष्कार हुआ। इसी तरह से रेडियो के आविष्कार का कारण था कि मनुष्य को जीविका के लिये अधिक संघर्ष के बाद में उसे आनन्द भी दिया जाय। उसे संसार की समस्याओं से भी ज्ञात कराया जाय। हम हम देखते हैं कि आज रेडियो इन सभी बातों को पूर्ण कर रहा है। मनुष्य की आवश्यकता है कि जो मनुष्य रेडियो द्वारा बोल रहा है उसका रूप भी सामने हो ताकि उसके व्यक्तित्व को पहचाने। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये टेलीविजन आया। इस तरह से यह स्पष्ट है कि आवश्यता के कारण ही आविष्कार हुआ करता है।

इतना ही नहीं यदि हम इतिहास के ऊपर दृष्टि डालें तो हमे यह और भी स्पष्ट हो जायगा कि मानव सभ्य कैसे हुआ ? पहले एक ही व्यक्ति एक जानवर को मारता तथा खा जाता था। परन्तु धीरे २ यह सभी कुछ बदल गया। पत्थर के हथियारों के स्थानों पर धातु के हथियार प्रयोग में आने लगे। अग्नि का आविष्कार हुआ तथा इतिहास बतलाता है इन आवश्यकताओं की पूर्ति करता हुआ ही आज मानव इस दशा को पहुँचा है। जहां-जहां आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रश्न उठा है, वहीं-वहीं आविष्कार है हुआ।

मनुष्य जीवन को अधिक सुखमय बना देना चाहता है। ज्यों-ज्यों वह सुख सामग्री एकत्रित करता जाता है, त्यों-त्यों उसका जीवन अधिक संघर्षमय होता जाता है। इसी प्रकार मनुष्य सुख प्राप्ति की चेष्टा करता आया है, करता रहेगा, उसकी आवश्यकतायें बढ़ती रहेंगी व इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये वह सदा ही आविष्कार करता रहेगा। इसी प्रकार मानव सभ्यता का विकास होता रहेगा।

भाग्य या पुरुषार्थ

संसार में दो प्रकार के मानव सदा ही रहे हैं। एक प्रकार के तो वे व्यक्ति हैं जो कि भाग्य के भरोसे रहा करते हैं, वह प्रत्येक कार्य में भाग्य बल लगाकर आलसी बने रहते हैं। दूसरे वे हैं जोकि भाग्य को कुछ समझते ही नहीं अपितु उनके लिए संसार में असम्भव व नवीन कार्य कुछ होता ही नही है। ऐसे ही आदमियों को देख कर किसी ने कहा है कि

"मर्द वो हैं जो जमाने को बदल देते हैं।"

भाग्य बल पर विश्वास करने वाले व्यक्ति यह भूल जाते हैं कि जब तक पुरुषार्थ द्वारा कार्य न किया जायगा तब तक भाग्य के भरोसे बैठे रहने से सफलता न मिल सकेगी। यद्यपि ऐसे बहुत से उदाहरण भाग्यवादी दिया करते हैं, जहां पर बिना पुरुषार्थ के ही कठिन से कठिन कार्य हो गये और इसे ही वह भाग्यबल कहा करते हैं। यह सम्भव है कि संसार में बहुत सी बातें बिना पुरुषार्थ किये हुए ही हो जाय परन्तु केवल भाग्य के बल बैठ कर अपने काय न करना कहां की बुद्धिमानी है? कवितुलसी दास ने कहा है कि:—

सकल पदारथ है जग मांही।
कर्म हीन नर पावत नाहीं॥

यहां पर कवि का कर्म से प्रयोजन कर्तव्य से है, पुरुषार्थ से है भाग्य से नहीं। उनका तो सीधा अर्थ है कि संसार मे प्रत्येक पदार्थ हैं परन्तु जो व्यक्ति कार्य नहीं करते उन्हें वे नहीं मिल पाते हैं, जो उन्हें प्राप्त करने के लिए कार्यरत होते उन्हे मिल जाते हैं। जो व्यक्ति केवल यह यह कर कि "होहि हैं वही जो राम रचि राखा" अपने आलस्य में बैठे रहते है, वह अपना तथा राष्ट्र का कभी भला नही कर सकते।

दूसरी ओर ऐसे व्यक्ति जो कि घोर पुरुषार्थी हैं व भाग्य या परमात्मा पर विश्वास ही नहीं करते, ऐसे मनुष्य भी भूल करते हैं।

प्रत्येक कार्य को सफल करने के लिये कर्म करना चाहिये, कर्तव्य करना चाहिये परन्तु परमात्मा पर विश्वास करके। क्योंकि कभी-कभी देखने में आता है कि मनुष्य पुरुषार्थ से अपने कार्य में रत हो जाता है परन्तु उसे सफलता नहीं मिलती। इससे सिद्ध यही होता है कि अवश्य ही कोई शक्ति चाहे वह परमात्मा है चाहे भाग्य कुछ न कुछ अदृष्ट शक्ति रखती है।

गीता में भगवान श्री कृष्ण ने भी यही उपदेश दिया है कि अपने कर्तव्य करते रहो। फल का ध्यान न दो। तात्पर्य इस उपदेश का यही है कि पुरुषार्थ करो, कार्य में लीन रहो व फल को मेरे भरोसे छोड़ दो।

संसार में ऐसे व्यक्तियों का नाम, जो कि पुरुषार्थी हुआ करते हैं, अमर हो जाता है। संसार के इतिहास में ऐसा उदाहरण ढूंढने से भी न मिलेगा, जहां हम यह कह सकें कि मनुष्य ने भाग्य बल द्वारा यश प्राप्त किया हो अथवा बड़ा आदमी बना हो। परन्तु इतिहास पुरुषार्थियों के नामों से भरा पड़ा है। लीलाधर श्री कृष्ण यद्यपि ग्वाले के घर पर पले थे परन्तु पुरुषार्थ के कारण भगवान के पद पर-आसीन हैं।

महात्मा गांधी जो कि इसी युग की विभूति थे, पुरुषार्थ-बल पर ही संसार के सबसे बड़े मनुष्य कहलाये। उन्होंने पुरुषार्थ-बल पर ही अहिंसा जैसे अस्त्र को धारण करके भारत के पैरों में १००० वर्ष से पड़ी गुलामी की जंजीर तोड़ फेंका। अगर भाग्य बल पर बैठकर यह कहते कि भाग्य में होगा तो भारत स्वतंत्र हो जायगा तो भारत-भाग्य अभी उदय न होता। ऐसे अनेकों उदाहरण इतिहास में मिलेंगे जहां पुरुषार्थ करके मनुष्य ने असम्भव कार्य को भी सम्भव कर दिया है।

सारांश यह है कि मनुष्य को यदि कुछ कर दिखाना है या दूसरे शब्दों में उसे कुत्ते की मौत नहीं मरना है, तो पुरुषार्थ करना चाहिए

पुरुषार्थ बल पर ही वह अपना, अपने समाज व अपने राष्ट्र का भला कर सकता है। परन्तु उसे बिलकुल परमात्मा पर अविश्वास करने वाला अभिमानी न होना चाहिए।

साहित्य व समाज

साहित्य, समाज का दर्पण है। साहित्य सदा ही समाज के द्वारा प्रभावित हुआ है। जैसा भी जिस समय का समाज रहा है, वैसा ही उस समय के साहित्य का सृजन हुआ है। विश्व भर के साहित्य पर यदि हम दृष्टि डालें तो हमें यही मिलेगा कि किसी राष्ट्र का समाज जैसा भी किसी समय रहा है, उस समय का साहित्य भी उसी के अनुरूप बना है।

यदि हम हिन्दी साहित्य के इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि डालें तो यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि साहित्य, समाज के द्वारा प्रभावित हुआ है। हिन्दी साहित्य का प्रथम काल वीर गाथा काल कहा जाता है। इस काल के समाज का अध्ययन करें तो स्पष्ट है कि भारत पर बाह्य आक्रमण हो रहे थे। भारतीय राजपूत राजागण अपने देश के मान के लिए इन बाह्य आक्रमणों को विफल बनाने की चेष्टा कर रहे थे। भारत के राजागणों में भी फूट थी, इस कारण भी युद्ध लगातार आपस में होते थे। इसलिए यह एक ऐसा समय था जिसे हम युद्ध का समय कह सकते हैं। समस्त समाज युद्ध प्रिय बना हुआ था। ऐसे समय जिस साहित्य का सृजन हुआ वह भी वीर रस से परिपूर्ण हुआ। साहित्य में युद्धों का वर्णन, वीरता का वर्णन आदि ही मिलते हैं। इसीलिए इस काल को वीर गाथा काल कहते हैं।

धीरे-धीरे समाज ने पलटा खाया। मुसलमान यहां पर जम गए परन्तु हिन्दू धर्म अनुयाइयों पर अत्याचार करने लगे। ऐसे कठोर समय में समाज को परमात्मा की याद आई और साहित्य में भक्ति

काल का प्रादुर्भाव हुआ। द्वितीय कवियों ने राम व रहीम में एकता बताकर अत्याचार दूर करने की चेष्टा की। तात्पर्य यह है कि इस काल में भी समाज के अनुरूप ही साहित्य बना।

यदि हम आधुनिक युग को लें तो हम देखते हैं यह युग हमारा स्वतन्त्रता संग्राम का युग है। राष्ट्रवाद को लहर समस्त भारतीय समाज में दौड़ रही है। इस युग का साहित्य भी समाज के अनुरूप ही राष्ट्रवादी साहित्य बन रहा है। इस युग में एक विशेषता भी है कि हमारा भारतीय समाज अंगरेजी समाज के व्यक्तियों से बहुत कुछ प्रभावित रहा है। इसीलिए इस समय साहित्य में भी अनेक वाद आ उपस्थित हुए हैं।

यदि भारतीय साहित्य व अंगरेजी साहित्य की तुलना की जाय तो हम देखते हैं कि अंगरेजी समाज सदा ही भौतिकवाद का पुजारी रहा है, जब कि भारतीय समाज सदा ही अध्यात्मवाद का उपासक रहा है। इसी कारण हिन्दी साहित्य धर्म प्रधान साहित्य है जबकि अंगरेजी साहित्य भौतिकवाद प्रधान साहित्य है। इन उपर्युक्त प्रमाणों से यह सिद्ध हुआ कि साहित्य सदा ही समाज के अनुरूप बनता है।

यदि हम दूसरे पक्ष की ओर दृष्टि डालें तो हम यह भी निःसंकोच कह सकते हैं कि जहां समाज के अनुरूप साहित्य का सृजन होता है वहां साहित्य समाज को भी अपने अनुरूप बना लेने की चेष्टा करता है। यदि उदाहरण स्वरूप हिन्दी साहित्य के इतिहास की ओर दृष्टि डालें तो जहां समाज ने साहित्य में वीर रस का प्रादुर्भाव वीरगाथा काल में किया, वहां साहित्य ने समाज में वीर रस के भाव भरे। इसी प्रकार भक्तिकाल का साहित्य, समाज के कारण आया परन्तु साहित्य ने हिन्दू-मुस्लिम एकता अथवा राम जैसे आदर्श के गुण लाकर समाज में परिवर्तन उपस्थित कर दिया। जहां आधुनिक युग में समाज ने साहित्य में राष्ट्रवाद दिया वहां

साहित्य ने भी समाज में राष्ट्रवाद का प्रचार किया व जनता में स्वतन्त्रता के लिए प्रेम पैदा किया।

विदेशी साहित्य का भी समाज पर प्रभाव पड़ता है व विदेशी समाज का भी साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। भारतवर्ष में उर्दू साहित्य व अंगरेजी साहित्य विदेशियों की देन है, जिसे पढ़-पढ़कर हमारे समाज ने अनेक अच्छी व बुरी वस्तुयें ग्रहण की हैं। इसी प्रकार अंगरेजी व मुस्लिम समाज का प्रभाव भी हमारे साहित्य पर पड़ा है। हालावाद, प्रगतिवाद आदि सभी विदेशी प्रभाव की ही छाया है।

साहित्य व समाज परस्पर अवलम्बित रहा करते हैं। जहां समाज से साहित्य का सृजन होता है वहां समाज भी साहित्य द्वारा प्रभावित होता है। हम किसी भी देश के साहित्य के द्वारा वहां के समाज के विषय मे जान सकते हैं व किसी भी देश के समाज के द्वारा वहां के साहित्य को समझ सकते हैं। उन्नत राष्ट्रों का साहित्य सदा ही उन्नत होता है व गिरे हुए राष्ट्रों का साहित्य सदा ही अवनति अवस्था मे होता है।

०

राष्ट्र के प्रति विद्यर्थी के कर्तव्य

आज हम अपने राष्ट्र में देखते हैं कि भारत के नेतागण समय २ पर विद्यार्थियों को उपदेश दिया करते हैं व उन्हें उनके कार्यों से सचेत किया किया करते हैं। उसका कारण है विद्यार्थी अपने कर्त्तव्यों में भूल कर बैठे है। विद्यार्थी उन कार्यो को करना अपना कर्त्तव्य समझ बैठे हैं, जिन कार्यो से उन्हे बचते रहना चाहिये। विशेषकर राजनीति में पदार्पण करके विद्यार्थियों ने अपने प्रमुख कर्तव्यों से विद्रोह सा कर दिया है। वे राजनीतिक दलबन्दियों के चक्कर में फंस के राष्ट्र के प्रति वास्तविक कर्तव्यों को भूल बैठे हैं। राष्ट्र के प्रति कर्त-

का पालन करने के लिये उन्हें स्वतंत्र तथा उन्नति शील राष्ट्रों के विद्यार्थियों का अनुकरण करना चाहिये।

विद्यार्थी का प्रमुख कर्तव्य है, विद्या का अध्ययन करना। इसी कर्तव्य में रत होने के कारण हम उसे विद्यार्थी कहते है। यदि विद्यार्थी कोई ऐसा कार्य करता है, जिससे उसके विद्या-अध्ययन में रुकावट होती है तो वह अपने कर्तव्य से विमुख हो जाता है। विद्या-अध्ययन करकें तो राष्ट्र के प्रति वह अपने प्रमुख कर्तव्य को पूर्ण कर रहा है क्योंकि विद्या ग्रहण करके ही वह राष्ट्र को अधिक समृद्धि शाली व उन्नति शील वना सकेगा। राजनीतिक दल वन्दी में पड़ने के कारण बहुत से विद्यार्थी अपनी शिक्षा को छोड़ वैठते है और इस प्रकार वे समझते हैं कि राष्ट्र के प्रति कर्तव्य कर रहे हैं परन्तु वास्तव में वे अपने कर्तव्य से विमुख हो रहे हैं।

उनका दूसरा कर्तव्य है कि वे अपने अवकाश के समय अनपढ़ों को शिक्षा दें। इस तरह उन्हें अपनी शिक्षा का ज्ञान भी बढ़ेगा तथा राष्ट्र की अशिक्षा भी दूर होगी। उन व्यक्तियों को जो कि पढ़ने की अवस्था को पार कर चुके है, विद्यार्थियों द्वारा शिक्षित किया जा सकता है। इस कर्तव्य की पूर्ति करने में राष्ट्र को तो वे उन्नति शील बनायेंगे ही साथ ही उनकी स्वयं की भी कोई हानि नहीं होगी।

विद्यार्थी अवकाश के समय समाज सुधार भी कर सकते है। वे स्थान-स्थान पर जाकर समाज की बुराइयों का दिग्दर्शन समाज के व्यक्तियों को करायें। उन्हें उनकी हानियां वतावे तथा उन बुराईयों को हटाने से लाभ भी वतावें। इस प्रकार वे समाज का कल्याण कर सकते है तथा राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य भी पूरा कर सकते हैं। समाज सुधार राष्ट्र सुधार ही है तथा विद्यार्थी को स्वयं की भी कोई हानि नहीं होगी।

यदि विद्यार्थी गण अपने अवकाश के समय रोगियों की सेवा के लिये निकल पड़ते है व उन व्यक्तियों की जिनकी देखभाल करने

करने वाला कोई भी नहीं है स्वयं जाकर प्रबन्ध करते हैं तो यह उनका राष्ट्र के प्रति कर्तव्य है। ऐसा करने से वे राष्ट्र के नागरिक का भला भी करेंगे स्वयं भी संतोष प्राप्त करेंगे तथा उनके विद्याध्ययन में भी हानि नहीं होगी। जनता की सेवा करना जनार्दन की सेवा करना है परन्तु अपने अधिकार से अधिक न बढ़ना चाहिये। यदि जनता की सेवा में विद्यार्थी अपनी विद्या को भी भूल गया तो इस प्रकार जैसा कि ऊपर बताया गया है वह राष्ट्र के प्रति कर्तव्य ना अकर्तव्य करेगा।

उन्नतिशील व स्वतंत्र राष्ट्रों के विद्यार्थी अपना अवकाश का समय व्यर्थ ही नहीं खोते अपितु राष्ट्र के प्रति कर्तव्य शील रहते हैं। वे अवकाश के समय ग्रामों में चले जाते है और ग्राम निवासियों को उनके उत्तरदायित्व का स्मरण कराते हैं। उनमें स्वच्छता आदि के भाव भरते है। उनमें फैली कुरीतियों को दूर करते है। शिक्षा के अभाव का स्मरण कराते है तथा उसकी पूर्ति के साधन बताते हैं। इस प्रकार वे राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं।

विद्यार्थियों को चाहिये कि ऐसे क्रियात्मक कार्य करें जिससे उनके विद्याध्ययन में कमी न हो और राष्ट्र का भी भला होता रहे। जो विद्यार्थी राजनैतिक दल बन्दियों में पड़कर सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार हो जाते है वे वास्तव में अकर्तव्यों को कर्तव्य समझ कर भूल कर बैठते है, क्योंकि उनका प्रमुख कर्तव्य तो विद्याध्ययन है। स्वयं शिक्षा प्राप्त करते समय वे राष्ट्र के प्रति कर्तव्य ही करते हैं, इसलिये शिक्षा मे हानि न करनी चाहिये अपितु समाज सुधार, शिक्षा प्रसार, ग्राम सुधार आदि ऐसे क्रियात्मक कार्य अवकाश के समय करते रहना चाहिये। विद्यार्थी के यही कर्तव्य राष्ट्र के प्रति हैं। ऐसे विद्यार्थी ही राष्ट्र को उन्नति शील बनाते हैं।

वर्णनात्मक लेख

रूपरेखायें

रेल

अब तक जितने भी आविष्कार हुए, उनमे रेल का आविष्कार बड़े महत्व का है। इसने देश विदेश का अन्तर दूर कर, प्रान्तीय सीमाओं को मिटा, मनुष्य को अधिक सामाजिक कार्य कुशल और व्यापार निपुण बना दिया है। इसका आविष्कार जेम्स वाट ने एक केटली में गरम होते हुये पानी को देख कर किया था। १८३० में स्टीफेनसन ने 'राकेट' नामक एन्जिन बनाया और मैनचैस्टर-लिवरपूल नामक रेल चलाई जो कि १५ मील प्रति घंटा चलती थी। धीरे २ उन्नति हुई और अब रेलगाड़ी ६० मील प्रति घंटे से भी अधिक तेज चलती है। लार्ड डलहौजी के समय में भारतवर्ष में पहले २ रेल बनी। गाड़ियां दो प्रकार की होतीं हैं एक माल गाड़ी दूसरी सवारी गाड़ी। सवारी गाड़ी की गति के अनुसार भेद होते हैं डाक गाड़ी, एक्सप्रेस व सवारी गाड़ी। सवारी गाड़ी में किराया व आराम के अनुसार दर्जे होते हैं। प्रथम, द्वितीय, ड्योढ़ा व तृतीय। दुर्भिक्ष के दिनों में रेल से उपकार होता है। यही युद्ध के दिनों में सेना के आवागमन का साधन है। यह प्रान्तीय व छूआछूत के भावों का अन्त करने वाली है, इसके अनेक लाभ हैं। हाँ गिर जाने पर भीषण जन संहार, हृदय विदारक दृश्य है। भारतवर्ष में बी० बी० एण्ड सी० आई, आर० जी० आई० पी, ई० आई० आर व ई० पी० आर० आदि अनेक रेलवे लाईनें हैं।

हाथी

जानवरोंमें हाथी सबसे अधिक डील डौल वाला जानवर है। प्रायः जंगलों में जंगली अवस्था में मिलता है। यह मध्य अफ्रीका, बर्मा लङ्का, दक्षिण भारत में पाया जाता हैं। बर्मा में भूरे रंग का हाथी भी होता है।

शरीर वर्णन प्रायः तेरह फुट ऊंचा। लम्बी सूंड हाथी के लिए महान् उपयोगी है। आंखें बहुत छोटी होती हैं। बहुत बड़े कान होते हैं। असली दांत के अतिरिक्त दो दांत और होते हैं।

स्वभाव वर्णन टोलियों में जंगल में फिरते हैं। बलवान हाथी सरदार होता है। हाथी का भोजन पेड़ों के पत्ते, घास, चारा व फल होता है। हाथी को पानी मे अधिक आनन्द मिलता है। जंगली अवस्था में अत्यत भयानक होता है। पालतू हाथी सीधा व आज्ञाकारी होता है। अपने उपकारी के सदा कृतज्ञ होता है। यह बहुत बुद्धिमान होता है। बदला लेने में भी चतुर होता है।

उपयोगिता हाथी पहले युद्ध का मुख्य अंग था। आजकल रईसों के यहां धन के दिग्दर्शन व विवाह उत्सवों में सजकर निकलने वाला जानवर है। बर्मा में लकड़ी ढोने का काम हाथियों द्वारा होता है। शिकार के समय उपयोगी है। मरने पर भी मूल्य में वृद्धि हो जाती है। हाथी बिगड़ जाने पर बहुत हानिकर होता है। मकान गिरा देता है। मनुष्यों को मार देता है। अधिक खाने वाला होने के कारण केवल धनवान ही इसे रख सकते हैं।

सिंह

सब जानवरों में सब से अधिक बलवान व हिंसक होता है। इसे जङ्गल का राजा या स्वामी भी कहते हैं। हिमालय के जङ्गल, विंध्याचल, सतपुड़ा तथा दक्षिणी भारत के पर्वतों और जङ्गलों में सिंह मिलता है। अफ्रीका के जङ्गल में भी मिलता है।

स्वभाव—शेर अति क्रोधी, वीर तथा क्रूर स्वभाव का होता है। मांस ही इसका भोजन है। जङ्गल के जानवर इससे अधिक डरते हैं व गन्ध मात्र से भाग जाते हैं। अति बलवान होने के कारण हाथी को भी गिरा देता है।

शेर दो तरह का होता है। बब्बर शेर व बाघ। बब्बर शेर अत्यंत बलवान व भयानक होता है। इसके समस्त शरीर पर भूरे बाल होते हैं। मोटी गर्दन, गर्दन पर लम्बे २ बाल, मजबूत उठे हुए पुट्ठे व बड़ी भयानक शक्ल होती है। बाघ का पीला भूरा रङ्ग, काली-कालीसी धारियां, मोटी गर्दन, पतली कमर, गठा हुआ शरीर होता है। चमकीली आंखें होती हैं।

इसका शिकार करना बहुत कठिन होता है। इसको पकड़ने वाले एक लोहे का कटघरा ले जाते हैं। उसमें बकरा बांध देते हैं। जब शेर खाने आता है तो आसपास छिपा हुआ व्यक्ति पिंजर बन्द कर देता है। इस तरह से यह कैद हो जाता है।

सरकस में सिखा कर काम में लाया जाता है। पुराने समय में क्षत्रिय शेर का शिकार खुले मैदान में करते थे। अब लोग ऊंचे मचानों पर बैठ कर शिकार करते है।

शेर अग्नि से डरता है। इससे बचने के लिये अग्नि जला लेनी चाहिए। शेर सदा ही सीधा व तेज भागता है। इससे बचने के लिये टेढ़ा सांप की तरह भागना चाहिए। इससे बचने के लिये पेड़ पर भी चढ़ जाना चाहिए।

बम्बई

बम्बई भारतवर्ष में पश्चिमी किनारे पर बसा हुआ है। यह भारतवर्ष का सबसे प्रसिद्ध बन्दरगाह है। भारतवर्ष में द्वितीय नम्बर का नगर है। यह एक द्वीप पर स्थित है। इसकी जनसंख्या लगभग पन्द्रह लाख है।

यह बम्बई प्रान्त की राजधानी है। इसे भारतवर्ष का द्वार भी

कहते हैं। यहां से संसार के सभी हिस्सों में व्यापार होता है। रुई को बाहर भेजने व उसके कारखाने के लिये तो बहुत प्रसिद्ध है। यहां बाहर से कपड़े मशीन इत्यादि आती है।

यह विद्या का केन्द्र भी है। यहां पर विश्वविद्यालय है। यहां पर बहुत से स्टेशन हैं। सिनेमा बनाने के लिए तो यह बहुत ही प्रसिद्ध है। नगर में हर तरह के आवागमन के साधन हैं।

भारतवर्ष इङ्गलिस्तान व अन्य भागों से आने वाले प्रथम बम्बई में उतरते हैं। यहां पर मराठी, गुजराती आदि बोली जाती है। यहां पर सरकारी भवन, विश्वविद्यालय, हाइकोर्ट, महारानी विक्टोरिया की प्रतिमा, टाउनहाल आदि देखने योग्य हैं।

इसे १५३२ मे पुर्तगालियों ने बसाया था। सन १६६१ में यह शहर चार्ल्स को दहेज मे मिला था। चार साल उपरान्त यह ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिया गया। तब से यह भारतवर्ष का प्रसिद्ध व व्यापारिक नगर है।

ग्रीष्म ऋतु

मुख्य मौसमों में से एक—ज्येष्ठ व आषाढ़ के दो महीने—भयंकर गर्मी—पसीने व पानी से सभी व्याकुल—धनवान मनुष्यों द्वारा खस की टट्टियां, बिजली का पंखा बर्फ आदि का प्रयोग निर्धनों द्वारा हाथ का पङ्खा, स्नान आदि से गर्मी कम करने की चेष्टा रात छोटी होती है-गर्मी की रात की अधिकता—खुले मैदान में सोना।

धूप में घूमना हानिकर—लू चलती हैं लू लगने से मृत्यु तक की सम्भावना-गर्मी मे चलते चलते पसीने में पानी पीने से हानि—गर्मी से हैजे की भी अधिक सम्भावना मनुष्यों में गर्मी के कारण आलस्य में वृद्धि—बच्चों मे ज्वर चेचक सन्निपात का भय।

भारतवर्ष भूमध्य रेखा के निकट होने के कारण अधिक गर्म

संसार का सबसे अधिक गर्म स्थान जैकोबाबाद यहीं है दिल्ली में अधिक गर्मी।

पहाड़ों पर शीतलता—राज्य कर्मचारी व धनवान पहाड़ों पर चले जाते हैं—इन दिनों लू से बचना धूप से बचना व शीतल तथा रुचिकर पदार्थों का सेवन करना चाहिये।

यमुना

भारतवर्ष की पवित्रतम नदी—हिमालय पर्वत के यमुनोत्तरी नामक स्थान से निकलती है—इसके किनारे पर हिन्दुओं के तीर्थ स्थान-मथुरा, वृन्दावन आदि इसी के किनारे पर भारत की पुरानी राजधानी दिल्ली, आगरा, आदि स्थित इलाहाबाद में जाकर गङ्गा में मिल जाती है।

इसका पानी श्याम होता है किन्तु गङ्गा की तरह शीतल नहीं गहरी नदी धीरे धीरे बहती है इससे बहुत सी नहरें निकाली गई हैं, जिनसे सिंचाई होती है।

इसमें चम्बल, केन, बेतवा नदियां आकर मिलती हैं। तीर्थ-स्थानों पर कछुओं की अधिकता मछली आदि भी मिलती हैं।

प्रातःकाल

सूर्योदय का समय—रात्रि के अन्धकार का सूर्योदय द्वारा विनाश-२४ घन्टे के समय में सबसे अधिक शीतल व सुखकर समय प्रकृति का सब से मनोहर दृश्य सूर्य की अरुण किरणों का ओस की छोटी बूंदों पर पड़ना कलियों का खिलना- पक्षियों का कलरव मन्द सुगन्ध समीर का चलना चारों ओर आनन्द ही आनन्द मनुष्यों का नींद छोड़कर उठना विद्यार्थियों का यही सबसे उत्तम अध्ययन का समय पूजा व इबादत का भी यही समय—सैर करने का उत्तम समय बागों में सैर करने वालों तथा नदी में स्नान करने वालों की भीड़ प्रातःकालीन क्रियाओं की समाप्ति के उपरान्त दैनिक कार्य-क्रम में

संलग्नता-बाजारों का खुलना किसानों का खेत में काम करने जाना-मजदूरों का मजदूरी में लगना-सूर्य के चढ़ते-चढ़ते प्रातःकाल का अन्त।

आम

भारतवर्ष का सबसे अधिक स्वादिष्ट फल- गर्मियों में पका आम आ जाता है--बौर वसन्त में लगता है इसके कई प्रकार के भेद लंगड़ा, बनारसी, मालदा, सफेदा देशी आदि- सरौली आदि कई स्थानों का आम प्रसिद्ध-प्रायः हर स्थान पर उपलब्ध--विदेशों में भी इसकी अच्छी खपत कच्चा आम भी उपयोगी कच्चे आम से आचार, मुरब्बा, खटाई, अमरस आदि बनते है आम के अन्दर गुठली होती है इसी को बोया जाता है। पत्ते लम्बे व कुछ कम चौड़े होते घना वृक्ष होता है।

उत्सवों के अवसर पर पत्तों द्वारा सजावट- लकड़ी भी अति उपयोगी पलंग, कुर्सी, मेज आदि इस की लकड़ी से बनती हैं।

पका आम स्वास्थ्य वर्द्धक होता है--आम खाकर दूध का सेवन करना चाहिये--बसन्त ऋतु में कोयल का प्रिय वृक्ष--कवियों के हृदय में भाव उत्पन्न करने वाला वृक्ष आम की मंजरियों से भीनी-भीनी सुगन्ध अन्य फलों से इसकी तुलना।

क्रिकेट

यह विदेशी खेल है। भारत में इसका प्रचार लार्ड हैरिस ने किया। आजकल बड़े-बड़े शहरों में प्रतिवर्ष क्रिकेट के मैच होते हैं।

यह खेल एक मैदान में खेला जाता है। बीच में बाईस गज के अन्तर पर तीन-तीन डन्डे गड़े रहते हैं इन्हे 'विकेट' कहते हैं। विकेटों के समानन्तर चार फीट की दूरी पर दो रेखायें खींची जाती हैं। यहीं पर खेल खेला जाता है। दो खिलाड़ी साथ-साथ खेलते हैं। एक दूसरे की ओर दौड़ कर जाने को रन कहते हैं। खिलाड़ी गेंद से रक्षा के लिये दस्ताने पहन कर खेलते हैं।

भारत में अमरनाथ, सर्वते, अमरसिंह, नवाब पटौदी, मर्चेन्ट

आदि प्रसिद्ध खिलाड़ी हैं। ब्रैडमैन, हाब्स, कोम्पटन आदि जगत्-प्रसिद्ध खिलाड़ी हैं।

बाढ़

जब नदी अपनी सीमाओं से बाहर निकल कर बहने लगती है तो उसे बाढ़ कहते हैं। यह पर्वत पर वर्षा अधिक होने से या नदी के मार्ग में वर्षा अधिक होने से आती है। चारों ओर पानी ही पानी दिखाई पड़ता है। खेती नष्ट हो जाती है। जानवर बह जाते हैं। मनुष्य बेघरबार हो जाते है। बहुत बड़ी संख्या में मृत्यु हो जाती है।

बाढ़ के समय सहायता का काम किया जाता है, अनेक सेवा-समितियां बन जाती हैं। धनी बाढ़ से पीड़ित मनुष्यों के लिए भोजन वस्त्र आदि का मुफ्त प्रबन्ध करते हैं, सरकार द्वारा भी सहायता दी जाती है।

बाढ़ से बचने का एक ही उपाय है कि नदी पर सुदृढ़ बांध बनाये जांय। बाढ़ से पहले यदि सूचना प्राप्त हो जाय तो कहीं सुरक्षित स्थान पर भाग जाना चाहिए। यदि बाढ़ आ ही जाय तो टीला, पेड़, ऊंचे मकान की छत जहां पर भी आश्रय मिले, पहुँच जाना चाहिये।

विवरणात्मक लेख

रूप रेखायें

लोकमान्य तिलक

जन्म २३ जुलाई सन् १८५६, रत्नगिरि में एक निर्धन परिवार में हुआ। पिता का नाम गंगाधर राव तथा माता का पार्वतीबाई था।

स्कूल में प्रतिभा सम्पन्न विद्यार्थी थे। बी० ए० एल० एल० बी० तक शिक्षा पाई। संस्कृत तथा गणित के महान् विद्वान् थे।

इनका विवाह सत्यभामाबाई से १५ वर्ष की आयु में हो गया था। विद्या तथा शिक्षा के प्रचारक रहे। पूना में स्कूल खोला बाद में वह कालिज के रूप में परिणित हो गया। इसे फर्ग्यूसन कालिज कहते हैं। 'केसरी' तथा 'मराठा' दो समाचार पत्र निकाले।

तीन बार जेल गये। जेल में सुन्दर पुस्तकें लिखीं। इंगलैंड भी गये, वहां भारतीय दशा का ज्ञान कराया। राष्ट्रीय कांग्रेस की, महात्मा गांधी के पहले, उन्हीं के हाथ में बागडोर थी। प्रायः विद्याप्रेमी, देशभक्त, आर्य सभ्यता के प्रेमी विद्वान थे। आपकी मृत्यु ३१ जुलाई १९२० में हुई।

कबीर

कबीर एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से पैदा हुए थे। आपका लालन पालन नीरू तथा नीमा नामक जुलाहे दम्पति ने किया था। इन्होंने स्वामी रामानन्दजी से गुरु दीक्षा ली थी। इनकी पत्नी का नाम लोई तथा पुत्र-पुत्री का नाम कमाल व कमाली था। ये रहस्यवादी कवि थे और ईश्वर के सच्चे भक्त थे। ये सभी सम्प्रदायों

को मानते थे और निर्गुण ईश्वर के उपासक थे। ईश्वर को पति तथा अपने को पत्नी के रूप में समझते थे। हिन्दू तथा मुसलमानों के ढकोसलों को बुरा समझते थे। इस कारण उन्होंने इन दोनों के धर्म का बुरी तरह खण्डन किया है।

कबीर की साखी तथा उलट सूक्तियां अधिक प्रसिद्ध हैं। भाषा गंवारू परन्तु भाव स्पष्ट हैं।

ये पढ़े लिखे नहीं थे।

श्री सुभाषचन्द्र बोस (नेताजी)

आपका जन्म, २३ जनवरी सन १८९७ को कटक में हुआ। पिता का नाम जानकीनाथ जी था।

१९१३ में मैट्रिक की परीक्षा पास की। फर्स्ट डिवीजन में बी० ए० पास किया तथा आई० सी० एस० की परीक्षा में सफलता प्राप्त की। आपने सरकारी नौकरी भी की।

महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन में आप महात्मा गांधी के पास आ गये। आपने बंगाल में बाबू चितरंजनदास के साथ देश-हित कार्य किया।

आपने कई बार जेल यात्रा की। आपका अहिंसा सिद्धांत के कारण महात्मा गांधी से मतभेद था। आप राष्ट्रीय कांग्रेस के सभापति पद पर महात्मा गांधी की इच्छा के विरुद्ध भी रह चुके थे। आप अविवाहित थे। आप ब्रिटिश साम्राज्य की आंखों में धूल डाल कर अपने घर से गायब हो गए थे और विदेश में आपने 'इण्डियन नेशनल आर्मी' की नींव डाली। अन्त में आप देशहित के कार्यों में रत हवाई दुर्घटना से चल बसे।

अशोक महान्

सम्राट अशोक बिन्दुसार का पुत्र था। वह अत्यन्त ही तेजस्वी योद्धा था। अपने जीवनकाल में अनेक युद्ध जीते। जीवन में सबसे

भयङ्कर युद्ध कलिंग देश से हुआ। कलिंग पर विजय मिली परन्तु भीषण हत्याकाण्ड को देखकर अशोक के हृदय में परिवर्तन हो गया। उसने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। सम्राट् अशोक की राजधानी पाटली पुत्र थी, जिसे अब पटना कहते हैं।

अशोक ने बौद्ध धर्म का प्रचार देश-विदेश दोनों में किया। बिहार बनवाये। शिला लेख खुदवाये। बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का प्रचार किया। अनेक बौद्ध भिक्षुओं को विदेशों में प्रचारार्थ भेजा। यहां तक कि अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्रा को भी लंका भेजा। कुंए खुदवाये। धर्मशालायें बनवाईं, सड़के बनवाईं। इसके काल में प्रजा हर तरह सुखी तथा सम्पन्न थी।

डा० राजेन्द्रप्रसाद देशरत्न

भारत देश की स्वतन्त्रता के युद्ध में प्रधान सेनापतियों में से एक हैं। आप महात्मा गांधी के मुख्य तथा विश्वास पात्र साथियों में से रहे हैं। आप बिहार के रहने वाले हैं तथा बिहार प्रान्त के निःशस्त्र तथा अहिंसात्मक सत्याग्रहियों के साथ आपने कई बार जेल यात्रा की है। आप कई बार अखिल भारतीय राष्ट्रीय महा सभा के सभापति रह चुके हैं आप विधान निर्मात्री सभा के भी सभापति हैं। आपने भारत की स्वतन्त्र सरकार में खाद्य मन्त्री के स्थान पर भी कार्य किया है।

आपने महात्मा गांधी के आदेश पर वकालात छोड़ दी थी। आप अत्यन्त सरल, शांत स्वभाव, विद्या के समुद्र, तेजस्वी, विद्वान, निर्भय तथा दृढ़ व्यक्ति है। आपकी भारत के प्रति सेवायें अपार हैं तथा निष्काम भाव की सेवाएं हैं। भारत आपका सदा ऋणी रहेगा।

दानवीर सर गंगाराम

सर गंगाराम का जन्म सन् १८५१ में जिला शेखुपुरा के आफ मंगतावाला के एक गुरुद्वारे में हुआ था। आप एक कुशल इंजीनीयर थे। सुप्रसिद्ध कृषि-विशेषज्ञ थे। दिल्ली के तीन प्रसिद्ध दरबारों के

(सन् १८७७, १८८३ तथा १९११) के इन्जिनीयर के पद पर रहे। पटियाला रियासत के भी आप प्रमुख इन्जिनीयर रह चुके थे। आपने बड़े २ ज़मीन के टुकड़े लेकर वैज्ञानिक ढंग से खेती करवाई और उससे खूब लाभ उठाया।

सर गंगाराम दानवीर के नाम से प्रसिद्ध हैं। आप दयालु थे। आप विधवा विवाह के प्रबल समर्थक थे। उद्योग, व्यापार-व्यवसाय के आप प्रेमी थे। आपने अपने धन का सदुपयोग किया और एक ट्रस्ट की स्थापना की। इस ट्रस्ट द्वारा विधवा विवाह, शिक्षा प्रचार, चिकित्सा तथा अपाहिजों का पालन होता है। आपकी मृत्यु ७० वर्ष की आयु में हुई थी।

मोटर दुर्घटना

देहली से मथुरा के लिए मोटर से रवाना हुआ। गर्मी के दिन थे। मोटर खिचाखिच भरी थी। मोटर लगभग दिन के एक बजे होडल पहुँची। होडल से निकल कर हम लगभग एक या दो मील ही गये होंगे कि सामने से फौज की लारी आती दिखाई दी। हमारे ड्राइवर ने मोटर को बायें करके बचाना चाहा। परन्तु फौज की लारी भी बायें बची और दोनों में भीषण टक्कर हो गई। हमारी मोटर उलट गई। तीन व्यक्ति उसी समय मर गये। शेष सभी सवारियों को चोटें आईं। किसी का हाथ टूटा, किसी का सिर फूटा। किसी का पैर टूटा। ड्राइवर के दोनों पैर टूट गये। मेरे हाथ में चोट आई। कुछ देर में तीन या चार फौज की लारियां वहां से निकलीं। उन्होंने सभी घायलों को अस्पताल दिल्ली पहुँचाया। पुलिस दुर्घटना-स्थान पर पहुंची और कारण की खोज की। मृत व्यक्तियों के घर पर सूचना भेज दी। मैं भी दिल्ली वापस अस्पताल में आ गया।

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर

आपका जन्म सन् १८६१ में कलकत्ते में हुआ। आपके पिता का नाम महर्षि देवेन्द्रनाथ था। बचपन में ही माता से विछोह हो गया। नौकरों द्वारा लालन-पालन हुआ।

पाठशाला में नहीं पढ़े। घर पर शिक्षा पाई। बचपन में ही कविता तथा संगीत से प्रेम था। पिता द्वारा "बंगाल की बुलबुल" की उपाधि मिली।

सत्रह वर्ष की अवस्था में विलायत गये। तेईस वर्ष की अवस्था में विवाह हुआ।

१८ वर्ष की अवस्था में कविता लिखना आरम्भ किया। आपकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक गीताञ्जलि है। इस पर सन् १९१३ में नौबिल पुरस्कार प्राप्त हुआ। विश्व भर में ख्याति फैल गई। संसार को कविता के बल पर भारत का संदेश सुनाया तथा भारत का मुख उज्ज्वल किया।

बोलपुर में शान्ति निकेतन की स्थापना की। यहां पर दूर-दूर से विदेशी भी शिक्षा ग्रहण करने आते हैं।

आप दया, क्षमा, परोपकार व सदाचार आदि गुणों की मूर्ति थे। विदेशों में आपने भारत के गौरव को बढाया तथा भारत का नाम उज्ज्वल किया। आप पूर्ण कवि थे। आपने संवत् १९९८ में इहलीला समाप्त की।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

आपका जन्म सम्वत् १९०७ में काशी में हुआ। आपके पिता का नाम श्री गोपालचन्द्र था। बचपन में ही माता की मृत्यु हो गई।

आप लाखों की सम्पत्ति के अधिकारी थे। आपको हिन्दी गद्य का जन्मदाता कहा जाता है। आपने अपनी सब सम्पत्ति साहित्य-सेवा हिन्दी-प्रचार, तथा परोपकार में व्यय कर दी।

वर्तमान हिन्दी के पिता होने के नाते आधुनिक समय में गद्य, पद्य, नाटक उपन्यास, कहानी समाचार पत्र आदि का जैसा भी रूप है आपका दिया हुआ है। आपने स्वयं भी भारत दुर्दशा, अन्धेर नगरी, मुद्राराक्षस आदि किताबों की रचना की।

आपकी मृत्यु सम्वत् १९४२ में ३५ वर्ष की अवस्था में हो गई।

विवेचनात्मक लेख

रूप रेखायें

वीरता

संसार के इतिहास के निर्माता वीर हैं। यह आवश्यक नहीं कि सबल पुरुष ही वीर हो सकता है। निर्बल भी वीर हो सकता है और सबल भी कायर हो सकता है।

वीर का कर्तव्य निर्बल की रक्षा करना, दुःखियों का दुःख दूर करना तथा अन्याय को मिटाना है। वीरता का दुरुपयोग निर्बलों को सताना, अन्याय करना है।

वीर वास्तव में साहसी, उत्साह युक्त, आलस्यहीन धैर्यवान तथा शारीरिक बल से ओतप्रोत होता है।

भारत का इतिहास वीर-गाथाओं से भरा पड़ा है। साहित्य में अलग ही एक 'वीर गाथा' युग है। राम, कृष्ण, अर्जुन, भीम, भीष्म, परशुराम आदि सभी तो वीर थे। देश पर मिटने वाले सुभाष बोस, भगतसिंह, महात्मा गांधी आदि सभी वीर हैं।

विद्यार्थी-जीवन

जिस जीवन में विद्या संग्रह की जाती है, उस जीवन को विद्यार्थी जीवन कहते हैं। इसी जीवन पर मनुष्य के समस्त जीवन की भित्ति टिकी रहती है। यह अवस्था जीवन की प्रारम्भिक अवस्था होती है। हम इसको ५ साल से लेकर २५ साल या इससे कुछ अधिक आयु तक कह सकते हैं।

इस जीवन के लिये विद्या अध्ययन करना, कर्तव्य पालन करना, सद्गुणों को ग्रहण करना, सदाचार से रहना तथा ब्रह्मचारी जीवन व्यतीत करना, अत्तन्त आवश्यक है। विद्यार्थी जीवन का क्षण-क्षण मूल्यवान होता है। व्यायाम इस जीवन में अत्यावश्यक है।

माँस, शराव तथा स्त्री आदि से दूर रहना चाहिये। मस्तिष्क तथा शरीर के विकास के लिये यही समय जीवन में उपयुक्त है। आदर्श विद्यार्थी बनना चाहिये।

संध्या काल की सैर

मनुष्य दिन भर आजोविका उपार्जन मे व्यस्त रहता है। स्त्रियाँ भी दिन भर गृहस्थी के झंझटों में फंसी रहती हैं, विद्यार्थी भी दिन के समय पढ़ाई-लिखाई व विद्यालयों में व्यस्त रहते हैं। प्रत्येक प्राणी को आवश्यक है कि वह दिन के समय में व्यय की हुई शारीरिक, तथ । बुद्धि की ताकत को फिर संग्रह करले और उसके लिये संध्या समय उपयुक्त है।

संध्या समय भोजन के उपराँत कहीं रमणीय स्थान पर अवश्य सैर को जाय। इससे शारीरिक संगठन होता है। बुद्धि को आराम मिलता है तथा मनोरंजन होता है।

संध्या समय सैर के उपयुक्त स्थान वाग, पार्क, पहाड़ी स्थान तथा हरे भरे स्थान हैं। इन स्थानों के भ्रमण करने से दिन भर की थकावट दूर होती है। भोजन पच जाता है तथा नवीन वात भी सीखने को मिलती है। इन स्थानों की सैर पैदल घूम २ कर करनी चाहिये। इस समय कुछ देर के लिये समस्त चिंताओं को भूल जाना चाहिये।

वाल-विवाह की कुरीतियां

छोटी अवस्था में लड़के लड़की का विवाह कर देने को वाल-विवाह कहते हैं। कुछ विवाह तो पेट मे स्थित गर्भ काल में ही वाणी द्वारा तय हो जाते हैं।

यह प्रथा मुसलमानों के आगमन से भारत में आई। इस प्रथा से हानियाँ ही हानियाँ हैं। आयुर्वेद की दृष्टि से भी विवाह कन्या का १६ वर्ष तथा वर का २५ की अवस्था तक न करना चाहिये। बाल-विवाह से लड़की तथा लड़के का जीवन बर्बाद होता है। सन्तान भी निर्बल तथा कायर होती है। लड़के तथा लड़की की मृत्यु शीघ्र हो जाती है। सन्तान की भी शीघ्र हो जाती है। कुछ लोग बाल-विवाह से अथ व्यभिचार को रोकना बतलाते हैं परन्तु गलत है। ब्रह्मचर्य ही जीवन का सुख है। विवाह के बाद विद्या संग्रह की समाप्ति हो जाती है। गृहस्थी का भार कोमल कन्धों पर पड़ जाता है। बालविवाह में सहायता देने वाला हत्यारा तथा लड़के लड़कियों की मृत्यु का कारण होता है।

सत्सङ्ग

जिन व्यक्तियों के साथ रहने से सदाचार व अच्छे गुण सीखे जायें, उसे सत्संग कहते हैं।

सत्सङ्ग से हम में सुख, शान्ति, आत्म-सुधार, ज्ञान वृद्धि तथा सात्विक भावनायें जागृत होती हैं। सत्संग से ही मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है। कुसंगति में पड़कर मनुष्य पतन की ओर आकृष्ट होता है और सत्सङ्ग में पड़कर मनुष्य उन्नति की ओर आकृष्ट होता है। पुस्तकों द्वारा भी सत्सङ्ग का सुख मिलता है। पुस्तकों के सत्सङ्ग में समय तथा स्थान की बाधा नहीं होती।

तुलसीदासजी ने कहा है कि:

तुलसी संगति साधु की हरे और की व्याधि।
ओछी संगति क्रूर की, आठों पहर उपाधि॥

विदेश-यात्रा से लाभ

जो स्थान अपनी जन्मभूमि नहीं है और जिस भूमि से अपना भौतिक अथवा आत्मिक सम्बन्ध नहीं है, उसे विदेश कहते हैं। विदेश भ्रमण करने में अनेक लाभ हैं।

विदेश यात्रा में ज्ञान का उपार्जन होता है। उस देश के विषय में प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होता है। तरह-तरह की प्रकृति की मनोहर छटा देखने को मिलती है। भिन्न प्रकार की जल वायु होने के कारण स्वास्थ्य लाभ होता है। सहन शक्ति बढ़ती है, नये-नये अनुभव प्राप्त होते है। चिन्तायें कुछ समय के लिये दूर हो जाती हैं। नई प्रकार की संस्कृति का अनुभव होता है, इससे स्वदेश का भण्डार भर जाता है। विदेश भ्रमण से उल्लास, उत्साह, कर्मण्यता, स्फूर्ति, कर्तव्य, शक्ति तथा शारीरिक बल की वृद्धि होती है।

युद्ध से लाभ और हानि

युद्ध स्वार्थ की भावना से प्रेरित होकर लड़े जाते हैं। पहले धर्म-विस्तार के लिये युद्ध होते थे। परन्तु अब तो केवल राज्य-विस्तार की भावना ही होती है।

युद्ध से अनेक हानियां हैं। अगणित प्राणियों का संहार होता है। आजकल के युद्ध मे तो बिचारे उन प्राणियों का संहार भी होता है जो कि युद्ध मे सम्मिलित नहीं होते। विजित राष्ट्र की भाव, भाषा संस्कृति नष्ट कर दी जाती है। उसके सुख-समृद्धि का द्वार बन्द कर दिया जाता है। सर्वत्र अशान्ति छा जाती है। युद्ध में हारने वाला राष्ट्र तो हार ही जाता है परन्तु विजयी राष्ट्र भी आर्थिक कठिनाई में पड़ जाता है।

युद्ध से लाभ भी हैं विजयी राष्ट्र का उत्साह बढ़ता है। विजेता अपनी सभ्यता, अपनी संस्कृति, अपना धर्म, अपने व्यापार आदि के विस्तारके लिये अपना नया स्थान प्राप्त करता है। मारे जानेके कारण जनसंख्या कम होने से आर्थिक कठिनाईयां हल हो जाती हैं।

युद्ध से मानवता का ह्रास होता है तथा भीषण रक्तपात होता है। इसलिए लाभ से हानियां अधिक हैं। युद्ध इस युग का अभिशाप है। इससे बचना श्रेयस्कर है।

पत्र लेखन परिचय

पत्र प्रायः सभी पढ़े-लिखे व्यक्ति अपने सम्बन्धी, मित्र, आदि को नित्य ही लिखते हैं। परन्तु देखने में यह आता है कि सभी के पत्र एक से प्रभावोत्पादक नही होते। कुछ पत्र तो बड़े अस्पष्ट होते हैं, जिस बात या भाव को वे स्पष्ट करना चाहते हैं उसे स्पष्ट ही नहीं कर सकते। कुछ के पत्र इतने प्रभावशाली होते हैं कि ऐसा प्रतीत होता हैं मानो वे सम्मुख खड़े हुए बातचीत कर रहे हों। आखिर ऐसा क्यों होता है। इसका प्रमुख कारण है कि बहुत व्यक्ति पत्र को निबन्ध समझकर लिखते हैं।

पत्र लेखन भी एक कला है और कला मर्मज्ञ ही पत्र को सुन्दरता से लिख सकते हैं। साधारणतः हमें पत्र को सुन्दर व प्रभावोत्पादक बनाने के लिये इन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

(१) पत्र हम इस प्रकार लिखें, जिससे ऐसा प्रतीत हो कि हम जिसको पत्र लिख रहे हैं, वह हमारे सम्मुख खड़ा बातचीत कर रहा है।

(२) पत्र अधिक बड़ा न होना चाहिये अन्यथा वह पत्र न होकर निबन्ध हो जायगा। इसका तात्पय यह भी नहीं कि इतना संक्षिप्त हो जाय जिससे लिखने वाले का आशय ही सम्पूर्ण रूप से प्रकट न हो। कहने का तात्पर्य यह कि पत्र को जितना हो सके संक्षिप्त रखना चाहिये और अपने आशय को पूर्ण रूप से प्रकट कर देना चाहिये।

(३) जैसा कि निबन्ध परिचय में बतलाया गया है, पत्र भी अनुच्छेदों में बंटा होना चाहिये और प्रत्येक अनुच्छेद मे एक ही बात हो परन्तु एक दूसरा अनुच्छेद परस्पर सम्बन्धित भी हो।

(४) पत्र के आरम्भ में दाये कोने मे अपना पता तथा तारीख होनी चाहिये, जिससे पत्र पढ़ने वाला पत्र देखते ही समझ जाय

कि पत्र अमुक स्थान से व अमुक के पास से अमुक दिन चला है।

(५) पत्र भजन को उचित शब्दों द्वारा आदर एवं प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हुए सम्बोधन करना चाहिये। सम्बोधन पत्र के बांयी ओर कोने से प्रारम्भ होता है और केवल दो शब्दों का होता है। फिर नवीन पंक्ति से विषय आरम्भ कर देना चाहिये।

(६) पत्र के अन्त में अपना सम्बन्ध पत्र पढ़ने वाले से जताकर अपना नाम लिखना चाहिये। यह पत्र के दाहिने कोने में पत्र के अन्त में लिखा जाता है।

(७) पत्र की भाषा साधारण बोल चाल की भाषा होनी चाहिये। क्लिष्ट शब्द तथा दुरूहभावों से सर्वथा बचना चाहिये। शब्दाडम्बर तथा वाक्याडम्बर से पत्र की यथार्थता नहीं रहती।

(८) अलंकार आदि पत्र की शोभा न बढ़ाकर कम कर देते हैं इसलिये इनका प्रयोग न करना चाहिये।

यह सभी संकेत आवश्यक हैं। इनको देखते हुए हम पत्र को तीन मुख्य भागों में बांट सकते हैं (१) आरम्भ (२) विषय (३) अन्त।

आरम्भ :—दायें कोने में अपना पता तथा तारीख। बायें कोने में सम्बोधन और वह भी केवल दो शब्दों में तथा नवीन पंक्ति से विषय का आरम्भ।

विषय : भावों तथा वस्तु के आधार पर अनुच्छेदों में विभाग तथा दुरूहभावों और क्लिष्ट शब्दों का परित्याग, संक्षिप्त जितना हो सके उतना। ऐसा प्रतीत हो मानो सम्मुख खड़े बातचीत कर रहे हैं। साधारण बोलचाल की भाषा।

अन्त: पत्र के समाप्त होने पर नवीन पंक्ति से दायें कोने में पत्र भेजने वाले से अपना सम्बन्ध तथा अपना नाम।

आरम्भ और अन्त की तालिका नीचे दी जाती है:

सम्बन्ध	आरम्भ	अन्त
बड़े सम्बन्धियों को (जैसे माता, पिता, गुरु आदि)	मान्यवर, पूज्यवर पूज्य श्रेष्ठ आदि	स्नेह-भाजन आज्ञाकारी कृपा कांक्षी आदि
छोटे सम्बन्धियों को (जैसे छोटे भाई, छोटी बहन, पुत्र, पुत्री आदि)	चिरंजीव, प्रिय आदि	शुभचिन्तक, हितैषी तुम्हारा
बराबर वालों को (जैसे मित्र आदि को)	प्रियवर, प्रिय	सुहृद, तुम्हारा मित्र आदि
स्त्री को,	प्राण प्रिये, हृदयेश्वरी आदि	तुम्हारा, भवदीय
पति को,	प्रिय प्राणेश्वर, हृदयेश्वर आदि	आपकी दासी आदि
अपरिचितों को,	महाशय, महोदया	आपका
अपरिचित स्त्रियों को	महोदया	आपका
अधिकारी को	मान्यवर	प्रार्थी, सेवक

पत्र के अन्त में गुरुजनों को केवल अपने उस नाम को लिखना चाहिये, जिस नाम से वे पुकारते हैं। अपना पूरा नाम नहीं लिखना चाहिये। अपनेसे छोटों और अन्य सभीको पूरा नाम लिखना चाहिये।

अभी तक कुछ धार्मिक कृत्यों मे तथा व्यापारी व्यक्तियों में पत्र लिखने की पुरानी प्रथा भी प्रचलित है। ये विधि आधुनिक समय में उपयुक्त नहीं होती। इससे व्यर्थ का शब्दाडम्बर होता है। विद्यार्थियों की जानकारी के लिये हम एक पत्र नीचे दिये देते हैं।

पत्र बड़े भाई को

(प्राचीन प्रथा से)

सिद्धि श्रीसर्वोपमा योग्य सकलगुणनिधान शुभस्थान पूज्यवर भाई साहब को योग्य लिखी दिल्ली से श्रीनारायण का राम राम पहुंचे-अपरंच यहां पर सभी राजी खुशी हैं और आपकी राजी खुशी श्री गंगा जी से सदा नेक चाहते हैं। आगे आपका पत्र आया हाल जाना। एक सप्ताह हुआ, जब पिताजी मेरठ से आये थे। वहां पर भी सभी राजी खुशी हैं। पिताजी कहते थे कि आपने उनके पास बहुत दिनों से कोई पत्र नहीं डाला है। क्या कारण है। कृपया आप शीघ्रातिशीघ्र उनके पास अपनी कुशलता का पत्र दीजिये। गांव से बनवारी आ गया है और वह स्कूल में दाखिल हो गया है। उसके लिए व मेरे लिए घी की बड़ी आवश्यकता है सो किसी आने-जाने वाले के हाथ ५ सेर घी अवश्य भेज दीजिये। भाभी को प्रणाम कहिए मुरारी व श्याम बिहारी को मेरा आशीर्वाद दीजिये। विशेष बड़ों को क्या लिखूं।

मिती श्रावण सुदी २ बृहस्पतिवार संवत् २००५ विक्रमीय

इस प्रकार प्राचीन विधि का चलन सर्वथा त्याज्य है। नीचे नवीन प्रकार की विधि के अनुसार नमूने दिये जाते है। प्रायः सभी नमूने ले लिए गये हैं।

पत्र पिता को

(छात्रवास का जीवन)

किशोरी रमण कालिज-छात्रवास
मथुरा
५ जुलाई सन् १९४८

पूज्यवर पिताजी,

आपका कृपा पत्र मिला। कालिज खुलने के कारण मैं

अधिक व्यस्त रहा। इस कारण आपको उत्तर न दे सका। मुझे प्रिंसिपल साहब की कृपा से छात्रवास मे रहने को स्थान मिल गया है, पहले तो मुझे छात्रावास के ऊपरी हिस्से में कोने का कमरा मिला था। पास ही सड़क पर लुहार की दुकान होने के कारण मैं उस कमरे से असन्तुष्ट था परन्तु अब मुझे नीचे के हिस्से में बीच के कमरों मे से एक कमरा मिल गया है। इस प्रकार अब सभी वाधायें समाप्त हो चुकी है।

पिताजी, छात्रवास के जीवन में वास्तव में हम कालिज के समान बहुत कुछ सीखते हैं। मेरे निजी विचार तो यह हैं कि हम ऐसी बातें घर पर रह कर कदापि नहीं सीख सकते। यहां प्रत्येक कार्य नियम पूर्वक होता है। सुबह उठने से लेकर रात्रि शयन के समय तक हमें समय व नियम का पूर्ण ध्यान रखना पड़ता है। प्रत्येक विद्यार्थी सुबह चार बजे उठ जाता है। अपने दैनिक कार्यों से निवृत्त हो पढ़ने बैठ जाता है। फिर भोजनादि करके कालिज जाना होता है। विद्यालय से आने के उपरांत हम सभी खेलते भी हैं भोजन आदि समयानुसार करके रात्रि को १० बजे तक पढ़ते हैं और फिर सभी सो जाते है। हमें समय का मूल्य जानना चाहिए, यहां यह हम दिन रात सीखते हैं।

छात्रावास में हम स्वावलम्बन तथा आत्मशासन भी सीखते हैं। प्रत्येक कार्य अपने हाथ से ही करना पड़ता है। घर पर तो मैं किसी कार्य की चिन्ता ही न करता था परन्तु यहां तो कोई अन्य चिन्ता करने वाला है ही नहीं।

छात्रावास का वातावरण विद्योपार्जन का वातावरण है, जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी एक दूसरे को देख कर स्वयं ही पढ़ने की इच्छा करता है। ऐसे वातावरण मे रहकर ही विद्यार्थी सफल विद्यार्थी बन सकता है।

पिताजी, मेरे यहां पर आने के उपरांत दो-एक मित्र बन गये है। ये सभी व्यक्ति ग्राम के रहने वाले, सच्चरित्र हैं। बेचारे समय पर

मेरी सहायता को सदा तत्पर रहते हैं। पढ़ने लिखने में भी सहायता दे देते हैं।

छात्रावास में प्रेम व सहानुभूति का राज्य है। हम सभी मिल-जुल कर विद्योपार्जन में लगे हुए हैं।

पुस्तकें खरीदने में मेरी कुछ पुस्तकों की कमी रह गयी। अब के महीने पर जब और रुपया भेजे तो कृपया २६) पुस्तकों के लिए और भी भेज दीजिए। माता जी को चरण छूना तथा रमेश भैया को प्रणाम।

आपका आज्ञाकारी पुत्र
कृष्ण विहारी

पत्र माता को

(मथुरा के विषय में)

सरस्वती महाविद्यालय,
लखनऊ
१०-१२-४७

पूज्यनीय माताजी,

मैं दशहरा की छुट्टियों में आपके दर्शन न कर सका। इसका मुझे वास्तव में दुःख है और आप भी दुःखी रही होंगी। मैंने एक पत्र आगरे डाल कर पिताजी से इन छुट्टियों में मथुरा भ्रमण की आज्ञा ले ली थी और साथ ही उन्होंने व्यय करने के लिये रुपये भी भेज दिये थे। उनका पत्र अति देर में मिलने के कारण मैं आपको सूचित न कर सका। आशा है, आप स्नेहवश क्षमा करेंगी।

माताजी, मथुरा हिन्दुओं का प्रमुख तीर्थ है। यहीं पर जेल में पड़ी देवकी के गर्भ से भगवान श्रीकृष्ण ने जन्म लिया था। इसी नगर में पापात्मा कंस राज्य करता था जिसे मार कर लीलाधर कृष्ण ने अधर्म राज्य के स्थान पर धर्म राज्य की स्थापना की थी परन्तु माताजी इस नगर के कलुषित वातावरण को देख कर हृदय क्षोभ

से भर गया। मैंने देखा कि इस लीलाधर श्रीकृष्ण की लीला भूमि पर बड़ा अन्धेर मचा हुआ है। पण्डे अलग तंग करते हैं, भिखमंगे अलग सर्व कुछ छीन लेना चाहते हैं। पुजारी जी दर्शनों को बेचना चाहते हैं। मंदिरों में अलग कुभावनाये हैं। कुछ भी हो। इन सभी बातों से आपके भक्तिपूर्ण हृदय में ठेस पहुँचेगी। मैंने जो कुछ देखा, उसका आपको वर्णन सुना देता हूँ।

मथुरा मे केवल एक ही मन्दिर अधिक प्रसिद्ध है, इस मन्दिर को द्वारकाधीश का मन्दिर कहते हैं। इस मंदिर में सुना जाता है कि सवामन का भोग लगता है। इसके सिवाय भी कई मन्दिर और हैं, जैसे दाऊजी का मन्दिर, मदनमोहन का मन्दिर। इन सभी मन्दिरों में विशाल मूर्तियां हैं। इन मन्दिरों में प्रवेश मात्र से ही आनन्द की प्राप्ति होती है और एक भक्ति-भावना हृदय में भर जाती है।

मथुरा से लगी हुई जमुना जी बहती हैं। जमुना किनारे पर घाट बने हुए हैं। इन घाटों में विश्रांतघाट प्रसिद्ध है। यहां पर कंस को मार कर श्रीकृष्ण ने विश्राम किया था। यहां पर संध्या समय यमुनाजी की आरती देखने योग्य वस्तु होती है। इन मन्दिरों के सिवाय सतीबुर्ज, कंसकिला, अजायबघर आदि देखने योग्य वस्तुये हैं। अजायब घर में पुरानी शिल्प कला का दिग्दर्शन कराया गया है। मेरा समय अति उत्तमता से बीता। मे अगली छुट्टियों में आपके दर्शन करने अवश्य आऊंगा। पूज्यवर भैया राजनारायण को मेरा प्रणाम।

आपका प्यारा पुत्र
श्री नारायण

पत्र मित्र को

दिल्ली
११ जुलाई ४८

प्रियवर सूरजभान,

कल सकुशल मैं यहां आ पहुँचा। तुमने मुझसे प्रतिज्ञा करा ली

थी कि मैं तुम्हें पहुँचते ही पत्र लिखूं। मैं उसी प्रतिज्ञा के पालन स्वरूप यह पत्र लिख रहा हूँ।

मैंने कल से दफ्तर जाना आरम्भ कर दिया है। मुझे दफ्तर का वातावरण कुछ अधिक व्यस्त प्रतीत हुआ। ऐसा भान होता है कि तुम्हारे साथ छुट्टियों में आनन्द मनाने के कारण अब यह व्यस्तता रुचिकर प्रतीत नहीं होती, फिर भी प्राण का देह से सम्बन्ध रखने के लिए सब कुछ करना ही पड़ेगा।

माताजी व पिता जी को प्रणाम। माताजी को मेरी ओर से कहना कि मेरे दिन उनके स्नेह के कारण बहुत उत्तमता से कटे। उनके बनाये हुये मूंग के लड्डूओं की अब भी याद आती है, सुमालिनी को मेरा आशीर्वाद कहना।

पत्र प्रसन्नता का अवश्य डालना और पिताजी को पूछ कर लिखना कि वे देहली कब आ रहे हैं।

तुम्हारा अभिन्न
राजेश

पत्र बड़े भ्राता को

सुखनगढ़
६-७-४८

पूज्य भाई साहब
सादर प्रणाम

लगभग एक महीना व्यतीत हो चुका, आपका कोई पत्र नहीं मिला। माताजी विशेष रूपसे आपकी चिन्ता करती हैं। मैं समझता हूं कि आप बी० ए० की परीक्षा की तैयारी में व्यस्त होंगे। समय भी अब कम ही रह गया है। परन्तु हम सभी की चिन्ताओं को दूर करने के लिये कृपया एक पत्र अवश्य डाल दीजिये।

पिताजी को यद्यपि यह विश्वास है कि आप प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होंगे फिर भी उनका आदेश है कि आप इस समय का सदु-

-पयोग करें। परन्तु सदुपयोग इतना भी नहीं कि आप स्वास्थ्य को ही खो बैठें।

प्रिय बनवारी स्कूल में दाखिल हो गया है। प्रेमलता प्रसन्नता पूर्वक अपने घरेलू कार्यों में व्यस्त है। माताजी आपको आशीर्वाद के साथ-साथ यह आज्ञा भेज रही हैं कि आप परीक्षाओं के उपरांत सीधे घर आवें।

मेरी परीक्षाये भी समीप हैं। परन्तु बीमारी के कारण अधिक पढ़लिख नहीं सका। फिर भी प्रयत्न शील हूँ।

आपका छोटा भाई
मुरारीलाल

पत्र छोटे भाई को

राजा मण्डी
आगरा।

प्रिय जगदीश, ता० ८-७-४८

तुम्हारा २ जुलाई ४८ का पत्र मिला। पढ़कर प्रसन्नता हुई कि तुम मैट्रिक की परीक्षा में सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए हो। मुझे तथा पिताजी को तुमसे ऐसी ही आशा थी। पिताजी ने तुम्हें इस सफलता के उपलक्ष में मोटर साइकिल खरीद कर देने का विचार किया है। जब तुम आगरे आओगे तब यहीं से अपनी रुचि के अनुसार खरीद लेना। मुझे तो तुम जानते ही हो कि कैसी वस्तु पुरुष्कार स्वरूप दिया करता हूँ। मैंने महात्मा गांधी द्वारा लिखित "ब्रह्मचर्य जीवन" तुम्हे देना निश्चित किया है। यह पुस्तक तुम्हारे विचारानुकूल होगी।

ब्रह्मचर्य के विषय में मैंने तुम्हें पहले भी खूब बताया है, इसलिये मैं तुम्हें यहां पर केवल एक ही वाक्य द्वारा समझाना चाहता हूं कि ब्रह्मचर्य ही जीवन है। और इसी उद्देश्य से पूज्य बापू ने यह पुस्तक लिखी है। यदि तुम इस पुस्तक को पढ़कर जीवन में महानता प्राप्त कर सको तो मेरा पुरुष्कार देना सफल हो जाय।

हां एक अंतिम बात और सुनो। तुम्हारा भविष्य में पढ़ने का विचार तो अवश्य होगा ही लेकिन यह निश्चय करना आवश्यक है कि तुम कहां पढ़ोगे? पिताजी तुम्हें यहां कालिज खुलने से यहां बुलाना चाहते हैं ताकि तुम कालिज आदि का निर्णय कर सको और उसी तरह प्रबन्ध हो सके।

माताजी आशीर्वाद कहती हैं और वास्तव में वे हृदय से प्रसन्न हैं। तुम्हारी सफलता पर उन्हें गर्व है। अपने पुरुष्कार को उन्होंने गुप्त ही रक्खा है। मुन्ना तथा शीला तुम्हें प्रणाम भेज रही हैं। शेष कुशल है।

तुम्हारा भाई

रामचरन सारस्वत

पत्र छोटी बहिन को

करोल बाग

देहली।

प्रिय किरण,

ता० ५-८-४७

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो मुझे रक्षाबन्धन के दिन घर पर आने को लिखा है, उसमें तुम्हारा भैया के प्रति स्नेह झलकता है किन्तु स्नेहवश यह भूल ही गई कि मेरी त्रैमासिक परीक्षायें सन्निकट हैं। वास्तव में मैं जब घर पर था तो यह दिन मुझे हर साल नवीन प्रेरणा दिया करता था। अब भी मुझे आशा है कि मेरी छोटी बहन की राखी मुझे रक्षाबन्धन के दिन अवश्य प्राप्त हो जायगी। यद्यपि मुझे तुम्हारा सामीप्य प्राप्त न होना अवश्य खटकेगा परंतु लाचारी है इस कारण रक्षा बंधन पर ही संतोष प्राप्त कर लूंगा।

मुन्ना व बनवारी की परीक्षायें भी समीप होंगी, इस कारण उनको

मेरा आदेश दे देना कि वे अभी से प्रयत्नशील रहें। माता जी को चरण छूना कहना तथा भैया को प्रणाम कहना।

तुम्हारा भाई
श्रीनारायण सारस्वत

पत्र बड़ी बहन को

गोलपाड़ा, मथुरा।
८-६-४७

पूज्य दीदी जी,

आपका कृपा-पत्र मिला। मुझे यह पढ़ कर प्रसन्नता हुई कि तुम निकट भविष्य में कुछ समय के लिये मेरे पास फिर आ रही हो वास्तव में वे दिन मेरे लिये अति सुखद होंगे। अब फिर वे सुन्दर शिक्षाप्रद कहानियां सुनने को मिलेंगी। दादी का दुलार मिलेगा। इन सब सुखों की अभिलाषा में एक एक दिन वर्ष समान व्यतीत हो रहा है परन्तु सन्तोष केवल यही है कि आप आ रही हो।

पूज्य जीजाजी को मेरा प्रणाम कहिये और वे जो वायदा कर गये थे सो पं० श्रीनारायण सारस्वत द्वारा लिखित निबन्धों की पुस्तक अभी तक नहीं भेज सके। कृपया वे शीघ्र भेजें।

भैया तुम्हें लेने आ रहे हैं। सम्भवतः ता० १० को तुम्हारे पास पहुंच जावेंगे। देखिये रमा को साथ लाना न भूलिये।

आपका छोटा भाई
कृष्ण।

पत्र पुत्र को

करौलबाग, देहली।
ता० ३-५-६७

प्रिय मुरारी,

तुम्हारा पत्र मिला। यह पढ़ कर कि तुम हिन्दीरत्न की परीक्षा में पास हो गये हो, बहुत प्रसन्नता हुई। सबसे अधिक प्रसन्नता इस

बात को पढ़ कर हुई कि तुम मथुरा छात्रसंघ फुटबोल टीम के कैप्टिन निर्वाचित हुए हो। स्वास्थ्य और विद्या यदि साथ-साथ रहें तो मनुष्य के लिये सबसे उत्तम है। भविष्य में मुझे आशा है कि तुम अवश्य ही इन दोनों का ध्यान रक्खोगे।

तुमने भूषण की पुस्तकें खरीदने के लिये जो ५०) रु० के लिये लिखा था, सो तुम्हें भेजता हूँ।

तुम्हारी माताजी तुम्हें देखने को बहुत उत्सुक हैं तुम शीघ्रातिशीघ्र समय लेकर कुछ दिनों के लिये यहां चले आओ।

रमेश पास हो गया है। वह तुमसे पुस्तकों की सूची के विषय में पूछ रहा है जब तुम आओ लेते आना। शेष यहां सब कुशल है।

तुम्हारा
राजनारायण।

पत्र पुत्री को

सरकारी भवन नं० १०३
११-५-४८।

चिरंजीविनी किरन,

तुम्हारा ता० २ का पत्र हस्तगत हुआ। यह पढ़ कर प्रसन्नता हुई कि तुम्हें होस्टल में स्थान मिल गया है।

तुमने पुस्तकें तो सभी खरीद ली होंगी। होस्टल के खर्च के लिये ५०) रु० भेज रहा हूँ।

होस्टल का जीवन सुखद भी होता है, दुःखद भी। इसलिये तुम्हें यदि अपना जीवन सफल बनाना है तो अपना ध्यान केवल विद्योपार्जन में ही रखना। यही समय है जब कि तुम अपने भविष्य के जीवन का निर्माण कर सकती हो। होस्टल का जीवन ही तुम्हें आत्मशासन व स्वावलम्बन सिखायेगा। यहीं से तुम्हें अपनी सहेलियों के प्रति मित्रता का भाव सीखने को मिलेगा। ये सभी तुम्हें सीखना है, मेरा प्रयोजन है कि तुम्हें केवल पढ़ना ही नहीं है जानना भी है।

एक बात और। तुम्हारी माताजी तथा मेरा एक आदेश और है, इस अवस्था में कोई भी व्यक्ति भविष्य के विषय नहीं सोचता है और जीवन बरबाद कर बैठता है। देखना ऐसा न हो कि किसी प्रकार से जीवन पर कोई धब्बा लगे। यद्यपि मुझे विश्वास है कि तुम प्राण रहते अपने कर्तव्य का ध्यान रखोगी। तुम वहाँ स्वतन्त्र हो और मैंने तुम्हारी स्वतन्त्रता में कभी दखल नहीं दिया है। मुझे आशा है कि तुम जैसी सुपुत्री इन सभी बातों का ध्यान रखती है। शेष सभी कुशल हैं।

तुम्हारा—
लीलाधर शर्मा

पत्र पति को

मथुरा।
ता० ६—६—४७

मेरे हृदयेश्वर,

आपका कृपा पत्र मिला। वास्तव में आपने जैसा लिखा कि "जीवन के इन सुनहरे दिनों में केवल रंगरेलियां ही नहीं हैं जो कि अपना ध्यान आकर्षित करे परन्तु और भी कर्तव्य हैं।" आपके कर्तव्यों की ओर जब ध्यान मेरा जाता है तो वास्तव में अपनी भूल पर लज्जित हो जाती हूँ कि क्यों मैं अपने प्रेम के द्वारा आपका ध्यान आकर्षित कर लेती हूँ। परन्तु न जाने क्यों हृदय आपको अपने पास रखने को मचलता है। भविष्य मे इस हृदय की कमजोरी को, आपके कर्तव्य का ध्यान रखते हुए हटाने का प्रयत्न करूंगी।

आपने जो वस्त्र तथा फल भेजे वे बहुत ही उत्तम थे। उनमें आपका प्रेम छलका पड़ता था। परन्तु प्रियतम यह न भूलें अपनत्व में भी प्रेम की भावना निहित है। अपने से भी प्रेम करना सीखें और स्वयं भी अपने लिये वस्त्र आदि बनवा लिया करें। निकट

भविष्य में मुझे कपड़ों की आवश्यकता नहीं है। जब आवश्यकता होगी, अवश्य लिखूंगी। शेष सभी कुशल है।

आपकी दासी
रानी

पत्र पत्नी को

देहली।
११-६-४७

मेरी प्राणेश्वरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम स्वस्थ हो यह जानकर प्रसन्नता हुई इधर मैं कई कार्यों में व्यस्त हूं, इसलिये शीघ्र तुम्हारे पास न आ सकूंगा। परन्तु लगभग इस मास के अन्त में तुम्हारे पास अवश्य आजाऊंगा।

तुम अभी बीमारी से उठी हो, इस कारण स्वास्थ्य का ध्यान रखना तथा परहेज से रहना। मैं तुम्हारे पास रमेश के व तुम्हारे वस्त्र तथा फल आदि भेज रहा हूं।

माताजी को प्रणाम तथा रमेश को आशीर्वाद।

तुम्हारा
राजेश

(पत्र सहेली का सहेली को)
(स्वतन्त्रता समारोह के विषय में)

करौल बाग, दिल्ली।
ता० २०-८-४८

प्रिय रानी,

कल मध्यान्ह के समय तुम्हारा पत्र मिला। वास्तव में तुम स्वतंत्रता-दिवस के अभिनन्दनीय दृश्य को देखने न आ सकीं, इसका मुझे अतिशय दुःख हुआ। तुमने जो स्वतन्त्रता दिवस के विषय में मुझसे लिखने को कहा है वह उचित है परन्तु तुम्हें मेरे शब्दों द्वारा इतना आनन्द न आ सकेगा जितना कि तुम स्वयं देखकर अनुभव

करती। फिर भी मैं तुम्हारे सम्मुख दृश्य चित्र खींचने की चेष्टा करती हूं।

१४ अगस्त सन् ४७ की मध्य रात्रि के बारह बजे इङ्गलिस्तान के अंतिम प्रतिनिधि लार्ड माउन्टबेटन ने भारत-युवक हृदय सम्राट, उस समय के राष्ट्रपति, राजनीति निपुण पं० जवाहरलाल नेहरू के सुदृढ़ हाथों में भारत का भाग्य सौंप दिया। यद्यपि रेडियो द्वारा पूर्ण भारतवर्ष में उस दृश्य को बता या जा रहा था, फिर भी कौंसिल चेम्बर के सामने दिल्ली में अपार भीड़ थी। इतनी अपार भीड़ थी कि नेतागणों को भी निकलने में कठिनाई हो रही थी। अपनी १००० वर्ष की बिछुड़ी स्वतन्त्रता का स्वागत करने के लिये जनता पूर्ण रूप से तैयार थी फिर क्यों भीड़ न हो। स्वतन्त्रता का परवाना मिल जाने के पश्चात् पंडित जी को चारों ओर से बधाई एवम् धन्यवाद मिलने लगे। तत्पश्चात् श्रीमती सुचिता कृपलानी के कोकिल कण्ठ से 'जन-मन, गण अधिनायक' जैसा राष्ट्रीय संगीत सुनाई दिया। लोक सभा विसर्जित हुई। यहीं पं० नेहरू, मौलाना आजाद एवम् डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद इस ध्येय से लार्ड माउन्टबेटन के पास गये कि वे भारत के पहले गवर्नर जनरल बनें और उन्होंने स्वीकार कर लिया।

१५ अगस्त सन् ४७ के प्रातः काल १० बजे लार्ड माउन्टबेटन ने भारत के गवर्नर जनरल के अधिकार से मंत्रिमंडल को शपथ ग्रहण कराई तथा स्वयं ग्रहण की। आप पहले भारत के गवर्नर जनरल थे जो कि अपने निवास स्थान से निकल कर जनता की अपार भीड़ में आये। आपका स्वागत जनता ने खुले हृदय से किया। आपकी जय-जय कार से आकाश मंडल भी गूंजने लगा। कारण था कि अब आप रक्त चूसने वाली विदेशी सरकार के प्रतिनिधि न थे एवम् अपने ही थे।

संध्या को ४ बजे झण्डा समारोह मनाया गया। इण्डिया गेट

नई दिल्ली के आसपास लगभग ७ लाख जनता थी। ऐसा विशाल जन समूह सम्भवतः भारत के इतिहास में पहले कभी भी दृष्टिगोचर नहीं हुआ। प्रकृति भी स्वयं इस दृश्य को देखने के लिये अपनी सात रंग की साड़ी पहन कर उपस्थित थी। उसी समय सेना की परेड हुई तथा भारतीय सेना ने प्रथम बार अपने राष्ट्र के झण्डे को सलामी दी तथा वायुयानों ने झण्डे के ऊपर आकाश से पुष्प वर्षा की। लगभग सभी नेतागण वहां उपस्थित थे।

१६ अगस्त सन् ४७ को प्रातःकाल आठ बजे माननीय पं० जवाहरलाल नेहरू ने भारत प्रसिद्ध लाल किले के ऊपर तिरंगा फहराया। यह वही स्थान है जहां के लिये भारत के लाड़ले लाल नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। लगभग १० लाख जनता का विशाल समुद्र चारों ओर लहराता दृष्टिगोचर होता था। विश्व के इतिहास में यह पहला विशाल जन समूह था। ऐसा प्रतीत होता था, मानो सोये भारतमें जागरण की लहर दौड़ रही हो।

इस तरह दिल्ली में स्वतन्त्रता दिवस मनाया गया। निःसन्देह तुम इससे अनुमान कर सकती हो कि जनता का हृदय किस प्रकार अपनी स्वतन्त्रता के लिए लालायित था। और भी बहुत सी बातें हुईं। जैसे तमाम देहली का रात्रि को दीपकों से जगमगाना तथा दुकानों व मकानों में झण्डे लगाना आदि। परन्तु स्थानाभाव से नहीं लिखा।

शेष यहां सभी कुशल हैं। मुन्ना मैट्रिक में पास हो गया है तथा उसे उच्च कक्षा में दाखिल करा दिया है। तुम अपनी प्रसन्नता का पत्र शीघ्र डालना।

तुम्हारी ही
प्रेमलता

दुकानदार को

सरस्वती विद्यालय, मथुरा।
ता० २०-५-४८

श्रीमान् अध्यक्ष जी,

रीगल बुक डिपो, नई सड़क देहली।

महोदय !

मुझे निम्नलिखित पुस्तकों की अत्यंत आवश्यकता है। कृपया आप शीघ्र वी० पी० द्वारा ऊपर लिखे पते पर भेज दीजिये। सभी पुस्तकें नई हों तथा अच्छी दशा में हों।

क्योंकि हम कई विद्यार्थी इकट्ठे होकर ये पुस्तकें मंगा रहे हैं। इसी कारण इतनी प्रतियों की आवश्यकता है। हमें आशा है कि इतनी प्रतियां भेजते समय आप मूल्य में अवश्य रियायत करेंगे।

१. सरल निबन्धमाला	१० प्रति
२. गद्य चन्द्रिका की कुंजी	१० प्रति
३. पद्य पुष्पाञ्जलि की कुंजी	१० प्रति
४. प्रभाकर संजीवनी	१० प्रति

भवदीय

बनवारी लाल शर्मा

हैडमास्टर को छुट्टी के लिये पत्र

(इसमें पता और तिथि नीचे बाईं ओर लिखनी चाहिये)

श्रीमान् मुख्याध्यापक जी,

चम्पा अग्रवाल हाई स्कूल,

मथुरा।

सेवा में सविनय निवेदन है कि कल मेरा जन्मोत्सव है। घर पर बाहर से बहुत से अतिथि भी एकत्रित होंगे। इस कारण मेरा घर पर रहना अत्यधिक आवश्यक है। अतः मुझे कल ता० २५-८-४८ को अवकाश प्रदान कर अनुगृहीत करें।

आपका आज्ञापालक शिष्य

यदुनाथ

६ वीं श्रेणी

मथुरा

ता० २४-८-४८

नौकरी के लिए प्रार्थनापत्र

देहली
४-८-४८

सेवा में

मुख्याध्यापक महोदय,
सरस्वती महाविद्यालय
३८, हनुमान रोड, नई दिल्ली।

माननीय महोदय,

कल समाचार-पत्र में आपका विज्ञापन देख कर कि आपको एक अध्यापक की, जो कि हिंदी रत्न तथा भूषण को पढ़ा सके, आवश्यकता है। मैं उक्त पद के लिये यह प्रार्थनापत्र आपकी सेवा मे भेज रही हूँ।

मैंने पंजाब यूनीवर्सिटी से सन् १६३८ में बी० ए० की परीक्षा पास की तथा १६४० में प्रभाकर की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ हूँ। बी० ए० तक भी मैंने अपना हिंदी विषय रक्खा है। फिर समाचार-पत्रों में मैंने परीक्षोपयोगी बहुत से लेख विद्यार्थियों के लिये निकाले हैं।

मैं निजी तौर से अपना स्कूल भी चला रहा हूं, जिसमें प्रभाकर की श्रेणी को भी पढ़ाता हूँ। इस प्रकार मैंने शिक्षण कार्य में पूर्ण अनुभव प्राप्त कर लिया है।

यदि आप मुझे उक्त पद दे दें तो निःसंदेह मैं अपना कार्य पूरे परिश्रम से करूंगा तथा किसी भी प्रकार आपको असंतुष्ट न होने दूंगा। इस कृपा के लिये आपका अत्यन्त आभारी हूँगा।

आपका आज्ञा पालक
विनीत च-म

